❀ श्री ज्ञानदीप पुष्पांजलि

प्रेरक

तपोनिधि, विश्ववंद्ये विभूति, दि. जैनाचार्य
श्री १०८ सुमति सागर जी के परम शिष्य
अध्यात्म योगीराज श्री १०८ श्रेयांस सागर जी महाराज
(वर्धा वाले)

संपादक
श्री केसरीमल बगडा
बिजौलिय

प्रकाशक
श्री दिगम्बर जैन समाज, बिजौलियाँ [राजस्थान]

स्व० आचार्य रत्न श्री १०८ विमल सागरजी महा॰

: परम शिष्य :

प्रातः स्मरणीय गुरुवर्य चारित्र चक्रवर्ती

श्री १०८ दि. जैनाचार्य सुमति

सागरजी महाराज

जिनके पुनित चरणों में श्री ज्ञानदीप पुष्पाञ्जली

ग्रंथ सादर समर्पण

जन्म स्थल—श्यामपुरा
जिला—मुरेजा
मुनि-दीक्षा—अगहन वदी
१२ सं० २०२५
दीक्षा स्थल—गाजियाबाद

जन्म तिथि—आसोद सुदी ९
वि० सं० १९७४ को
आचार्य पद—फागुन सुदी १४
को मधुवन

परम शिष्य

प्रस्तुत ग्रन्थ प्रकाशन का सौभाग्य

मोक्ष मार्गस्य नेतारं, भेतारं कर्मभूभृताम् ।
ज्ञातारं विश्वतत्त्वानां, वन्दे तद् गुण लब्धये ॥

मोक्ष मार्ग के नेतृत्व, कर्मरूपी पर्वतों के भेतृत्त्व तथा समस्त तत्वों के ज्ञातृत्व सदृश अनुपम गुणों की प्राप्ति के लिए सामान्य रुप से मैं उन गुणों के धारक सभी तीर्थङ्करों को तथा विशेष रुप से अन्तिम तीर्थङ्कर श्री १००८ श्री महावीर भगवान को नमस्कार करता हूँ, जिनका २५ सौं वा निर्वाणोत्सव, भारतवर्ष की सभ्य समाज या सरकार ही नहीं बल्कि अन्य विदेशी सज्जन भी इस अनुपम देन से लाभ उठाने का प्रयत्न कर रहे हैं । यह शुभावसर न मालूम किस सातिशय पुण्य के प्रभाव से हमें मिला है। इस महान पर्व को हम केवल महावीर स्वामी के जय जय कार के नारे लगाकर ही समाप्त नहीं करदें, बल्कि इन ढ़ाई हजार दो वर्ष में जो हमने व्यवहार सम्यक्त्व के मूल आधार देव, शास्त्र और गुरु के प्रति बहुमान प्रकट करने में प्रमाद किया या जानते बुझते हुए भी इस ओर उपेक्षा का भाव प्रकट किया है उस गन्दगी को इस पुण्य बेला रूपी नदी के प्रवाह में बहा देवें और अपने व्यक्तिगत जीवन में भी कुछ क्रांति लाकर महावीर नहीं तो लघुवीर ही बनने का प्रयत्न करें। भावी सन्तानें देवादिदेव अर्हन्त देव बनने का प्रयत्न तो क्या करेंगी ? जबकि वे जिन दर्शन तक करने में उत्साह प्रकट नहीं कर रही हैं। अट्ठाईस मूल गुणों को धारण कर सिंह-वृत्ति का परिचय देने वाले गुरु का बाना धारण करना तो दूर रहा, श्रावक के मूलगुण स्वरूप रात्रि के अन्न के भोजन का भी त्याग करना, बर्दास्त नहीं कर सकती। अनेकांत का महत्त्व प्रकट करके अन्य लोगों की भी जैन धर्म की ओर रुची जागृत करना तो स्वप्न की बात हो गई। जिनवाणी का गम्भीर अध्ययन करके जैन संस्कृति का स्याद्वाद का, अनेकांत का महत्व प्रकट करना है। स्वयं रात्रि विद्यालयों के खोले जाने पर तथा हर तरह की सुविधायें दिये जाने पर भी, पांच दश मिनट के लिए अवकाश निकालकर उधर की ओर झांकते ही नहीं, बल्कि जो भोले बच्चे कुछ पढ़ते भी हैं तो उनकी खिल्ली उड़ाकर धृष्टता का भी कार्य करते हैं ऐसी परिस्थिति तो हटाई ही जा सकती है, चाहिये तो यह बुद्धि के

अधिक तीव्रता के फल स्वरूप तथा विशेष अध्ययन की सामग्री के प्राप्त हो जाने के कारण जैन खगोल एवं विज्ञान के उपेक्षित अंगों की पूर्ति करके जैन धर्म को विश्वधर्म बनाने का प्रयत्न करें, अधिक कहाँ तक लिखा जाय ? भौतिक संस्कृति के दूषित परिणामों से घृणाकर आध्यात्मिक संस्कृति की ओर रुची भी यदि हम करने लग जायँ तो हमारे इस पर्व में करोड़ों रुपये खर्च करने का आनन्द आ जावे और गई सो गई अब राख रही को, आदर्श से अपनी भावी संतति की भी रक्षा कर लेवें।

देवाधि देव श्री जिनेन्द्र देव की कृपा से मेरी दीक्षा देई (राजस्थान) में हुई और प्रथम चातुर्मास अजमेर (राजस्थान में) सम्वत् २०३१ में हुआ, द्वितीय चातुर्मास इडर (गुजरात) सम्वत् २०३२ में आचार्य १०८ गुरु सुमतिसागरजी के साथ में हुआ एवं तृतीय चातुर्मास स्वतन्त्रता से बिजौलिया (राजस्थान) नगर में सम्वत् २०३३ में हुआ। वहां पर बहुत प्रसन्नता रही कारण कि यहां पर पार्श्वनाथ भगवान पर कमठने उपसर्ग किया था जिसके कारण वह अतिशय क्षेत्र तीर्थ है, जिसकी धार्मिक समाज के द्वारा अनुपम व्यवस्था की जाती है।

पहले की अपेक्षा वर्तमान युग में जैन धर्म का बहुत उत्तम कार्य हो रहा है। इसे देखकर किसे प्रसन्नता नहीं होगी। आज स्थान स्थान पर मुनियों का आवागमन हो रहा है। धर्म प्रभावना अच्छी हो रही है। यदि सभी त्यागी वर्ग, पाठशालादि खुलवाकर भगवान की पूजा दी करने वालों की ओर अधिक ध्यान देंगे तो गृहस्थ जीवन सब का सुखमय बन जायगा, क्योंकि संतति के धार्मिक विचारों के कारण गृहस्थ का जीवन अधिक निर्भर होगा। क्या ऐलक रेल, मोटर-यात्रा करते है ? उसको रोकना होगा और हम चौबीसों तीर्थङ्करों के जन्म कल्याणक की तिथियों के उत्सव मनाने पर ध्यान देंगे तो अधिक पुण्य लाभ होगा। इस ओर लक्ष देना उचित है की, ऐलक, क्षुल्लकादि के रेल मोटर यात्रा को रोककर, पैदल विचरण पर विशेषकर ध्यान देकर आगम के विरोध सम्बन्धी दोष का रक्षण करने का भी उच्च त्यागी वर्ग कष्ट करेगा ऐसी मुझे आशा है।

मेरे जीवन का यह सबसे बड़ा अनुभव है कि जैन समाज के ही नहीं बल्कि समस्त भारत के जीवन नष्ट कर देने वाला तथा पशुओं की हिंसा और चमड़े की वस्तुओं का प्रचार खूब हो रहा है, हम अहिंसा वादी हैं हमें इसको रोकना है, और जितना हो सके चमड़े की वस्तुओं का इस्तेमाल नहीं करना

हैं इससे लोगों के आचार, विचार, धर्म-कर्म प्रायः नष्ट हो गये हैं, इसलिए त्यागी गण से मेरा नम्र अनुरोध है कि वे भी चमड़े का त्याग कराकर लोगों को धर्म की रक्षा करने के लिए प्रोत्साहित करें। इससे गृहस्थों का साहस व्रत उपवासादि को धारण करने का अधिक ही होगा।

प्रस्तुत पुस्तक 'ज्ञान दीप पुष्पाञ्जली' के छपाने की आवश्यकता तथा विशेषता के विषय में पूर्व लिखा ही जा चुका है। अतः इसका पिष्ट-पेषण नहीं करके इतना ही लिखना आवश्यक समझता हूं कि इसे श्रावक और साधुओं के उपयोग के लिये प्रस्तुत किया है। इसका श्रवण और अध्ययन के लिए वह किताब बहुत उपयुक्त है।

जिन बन्धुओं ने तथा बिजौलिया दि० जैन समाज के धर्म बन्धुओं ने आर्थिक सहायता दी है तथा बहिनों ने भी सहायता दी है उन सबको मेरे आशीर्वाद हैं जिन्होंने तन, मन, धन लगाकर पूर्ण परिश्रम से इस कार्य में सहयोग दिया है उनको भी मेरे आशीर्वाद हैं। इसी प्रकार अन्य बन्धुगण भी उत्साह पूर्वक धर्म कार्य में सहयोग देते रहें, ताकि धर्म प्रभावना बढ़ती रहे।

कार्तिक सुदी १४ ता० ५-११-७६
वि० सं० २०३३
बिजौलिया (राजस्थान)

श्री १०८ मुनि श्रेयांस
सागरजी महाराज
वीर निर्वाण सं० २५०२

दो शब्द—
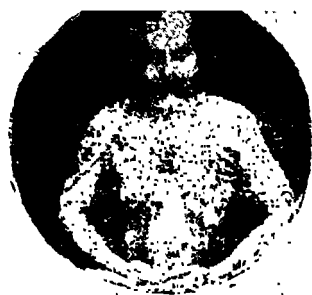
प्रिय बन्धुवर, यह प्रथम पुष्प श्री ज्ञान दीप पुष्पाञ्जली को आपके हाथों में सप्रेम समर्पित करते हुए मुझे अपार प्रसन्नता की अनुभूति हो रही है।

आज विजौलियां के दिगम्बर जैन समाज को ज्ञान दीप पुष्पाञ्जली पर अत्यन्त गर्व है।

इसमें श्री १०८ मुनी श्री श्रेयांससागर जी महाराज जी की पूजा, आरती, स्तुति, भक्तामर पाठ, तत्त्वार्थ सूत्र, देव शास्त्र गुरु की पूजा, सरस्वती पूजा आदि श्रावकोपयोगी सामग्री है। आप इसका जितना उपयोग कर सकें इतना थोड़ा है।

श्रावक धर्म का पालन करने वालों को यह नहीं भूलना चाहिए कि श्रावक धर्म अपवाद मार्ग है, उत्सर्ग मार्ग तो दिगम्बर मुनि मार्ग है। उसमें जो श्रद्धा रखता है। और एक दिन मैं मुनिधर्म स्वीकार करूंगा—ऐसी भावना रखता है, वही श्रावक श्रावक कहा जाता है—ऐसा श्रावक मोक्षमार्गी होता है।

हम आशा करते हैं कि इस ग्रन्थ की त्रुटियों पर ध्यान न देते हुए इसके द्वारा धर्म प्रभावना के लिए जहाँ जहाँ भी अवसर मिले इसका सदुपयोग करें। त्रुटियाँ होना स्वाभाविक है। हम उन त्रुटियों के लिये आपसे क्षमा प्रार्थी हैं, क्योंकि यह हमारा प्रथम प्रयास है। भविष्य में आपके सुझाव एवं सहयोग अपेक्षित है।

केशरीमल बगड़ा
विजौलियां

सादर-समर्पण

पूज्य श्री १०८ श्री श्रेयांस सागरजी मुनिराज भद्रपरिणामी, आत्महित-रत, तपस्वी तथा धर्म और समाजोद्धारक हैं आपकी जन्म भूमि वर्धा (महाराष्ट्र) रही है। आप सैतवाल जैन है। पिता हिरासावजी तथा मातेश्वरी पार्वतीबाई की कोख से जन्म हुआ सन् १६२० में। आपकी प्रारम्भिक शिक्षा ब्रह्मचर्य कारंजा आश्रम में हुई। इसके बाद आप नागपुर में जयहिन्द मुद्रणालय के नाम से प्रेस चलाते थे। कुछ समय बाद आपने आचार्य श्री १०८ सुमतिसागर जी से आरामें दसवीं प्रतिमा ता० १४-१२-७२ के रोज धारण की और मिति वैशाख कृष्णा २ सोमवार दि० ८-४-७४ को स्थान देई राजस्थान में पंचकल्याणिक समारोह में श्री १०८ आचार्य सुमतिसागरजी महाराज का शिष्यत्व ग्रहण कर उनसे मुनि दिक्षा ग्रहण की आपका परिवर्तिक नाम श्री १०८ मुनि श्रेयांससागर जी महाराज रखा। आपका पहिला चातुर्मास १०८ गुरु आचार्य सुमतिसागर जी महाराजजी के साथ अजमेर (राजस्थानमें) संवत् २०३१ में हुआ। दूसरा चातुर्मास गुरु के साथ इडर (गुजरात) में संवत् २०३२ में हुआ। और तीसरा चातुर्मास स्वतन्त्रता से संवत् २०३३ में बिजोलियां में (राजस्थान में) हुआ।

आप तरण तारण, निजपरहित तत्पर, मंगल भावना के स्रोत अनेक गुणों से मंडित होने के कारण तथा भविष्य वक्ता तपस्वी होने से असंख्य जनों का कल्याण हो रहा है।

आपके अनेक गुणों पर तथा असीम त्याग, तपस्या पर मुग्ध होकर भक्ति भाव से प्रेरित होकर आपके कर कमलों में नमोस्तु कर के इस श्री ज्ञानदीप पुष्पाञ्जली ग्रंथ को समर्पित करता हूँ।

आपका चरण सेवक
भंवरलाल पटवारी
बिजौलियां (राजस्थान)

हार्दिक शुभकामनायें–

श्री १०८ मुनि श्रेयांससागर जी महाराज के चरणों में मैं अपनी हार्दिक शुभ कामनायें समर्पित करता हूँ। दो शब्द—

❀ समाज में व्याप्त दहेज प्रथा, मृत्युभोज, बाल विवाह जैसे कुप्रथाओं को जड़ से मिटाने के लिए,

❀ समाज में व्याप्त फूट व द्वेष को दूर कर स्नेह एवं एकता पैदा करने के लिए,

❀ समाज के गरीब वर्ग की हर तरह से सहायता के लिए,

❀ समाज में नन्हें-नन्हें बालकों में धार्मिक भावना को जाग्रत करने हेतु तथा उनमें पूजा व भक्ति के प्रति रुचि पैदा करने के लिए,

❀ धार्मिक एवं सामाजिक कार्यक्रम में धर्म प्रचार हेतु कार्यक्रम प्रस्तुत करने के लिए कृत संकल्प हैं।

चांदमल बज
बिजोलियां (राजस्थान)

शुभ सम्मति

यह ज्ञानदीप पुष्पांजलि नामक पुस्तक आपके हाथ में हैं। इसमें आवश्यक स्तोत्र पाठ पूजादि का सुन्दर संकलन किया गया है। धर्माराधना के लिये प्रतिदिन प्रत्येक नर-नारी को स्वाध्याय करने के लिये यह संस्करण अति उत्तम है। वर्तमान में स्वाध्याय ही परम तप है। श्री १०८ आचार्य सुमति सागर जी महाराज के परम शिष्य मुनि श्री १०८ श्रेयांस सागर जी महाराज ने इस वर्ष बिजौलियां (राज०) में चातुर्मास किया जिससे अपूर्व धर्म प्रभावना हुई। आपकी सतत प्रेरणा स्वरूप यह ज्ञानदीप पुष्पांजलि पुस्तक प्रकाशित की गई है। आशा है यह पाठ भव्य जीवों को ज्ञानार्जन का साधन होकर कल्याणकारी होगा। यह उपयोगी संग्रह है।

संयोजक :

हरिप्रसाद जैन शास्त्री

C/o श्री दिग० जैन पाठशाला सिंगोली (म.प्र.)

दान दाताओं की नामावली

बिजोलियाँ

१. ५०१) श्री केसरीमल बगड़ा
२. १०१) ,, राजमल रतनलाल काला
३. १०१) ,, सुन्दरलाल ठग
४. १०१) ,, रतनलाल सेठिया
५. १०१) ,, नाथूलाल भवानीलाल ठग
६. १०१) ,, महावीर कुमार सेठिया
७. ५१) ,, कन्हैयालाल सोनी
८. ५१) ,, पुष्पचन्द बगड़ा
९. ५१) ,, मोतीलाल सोनी
१०. ५१) ,, नन्दलाल ठग
११. ५१) ,, हजारीमल ठग
१२, ३१) ,, घीसीलाल सेठिया
१३. ३१) ,, शान्तिलाल जैन
१४. ३१) ,, छगनलाल जैन
१५. ३१) ,, नाथूलाल गोधा
१६. ३१) ,, छीतरमल गोधा
१७. ३१) ,, इन्द्रमल पटवारी
१८. २५) ,, छीतरमल ठोला
१९. २२) ,, नेमीचन्द ठग
२०. २२) ,, माँगीलाल ठोला
२१. २१) ,, मदनलाल गोधा
२२. ११) ,, भंवरलाल चौथमल बेद
२३. ११) ,, शोभालाल सोनी
२४. ११) ,, श्रीपाल जैन
२५. ११) ,, हीरालाल गणेशलाल चौधरी
२६. ११) ,, रतनलाल पटवारी
२७. ११) ,, फूलचन्द बगड़ा
२८. ११) ,, रमेशकुमार चौधरी
२९. ११) ,, प्रभूलाल काला (चान्दजी खेड़ो वाले)
३०. ११) ,, कन्हैयालाल लुहाड़िया
३१. ५३५) ,, दिग० जैन महिला समाज ४२५), ५१), ११), ११) ११),२१),५)बिजोलियाँ
३२. ११) ,, मांगीलाल भंवरलाल लुहाड़िया
३३. ११) ,, भंवरलाल फूलचन्द लुहाड़िया

२१९३)

छोटी बिजोल्याँ

१. १०१) श्री प्यारचंद प्रेमचंद जैन
२. ३१) ,, नाथूलाव वालचंद जैन
३. २०) ,, वर्द्धमान बगड़ा
४. ११) ,, शान्तिलाल जैन बगड़ा
५. ११) ,, धूलचंद मोतीलाल साकून्या जैना
६. ५) ,, प्रभूलाल जैन

---

१७९)

आरोली

१. २१) श्री नेमीचन्द सेठिया
२. २१) ,, सुगनचन्द सेठिया
३. २१) ,, मोतीलाल चोधरी
४. ३१) ,, धूलीलाल रतनलाल सेठिया
५. २१) ,, नाथूलाल मोहीवाल
६. २१) ,, प्रभूलाल सिलोरया
७. ११) ,, भँवरलाल सेठिया
८. ११) ,, किसनलाल सिलोरया

---

१५८)

४

सींगोली

१. ५१) श्री मोतीलाल ठोला
२. ११) ,, लक्ष्मीचन्द मोहीवाल
३. २१) ,, छगनलाल धानोतिया
४. ५१) ,, छगनलाल तेजमल हरसोरा
५. ५१) ,, नानालाल मोजीलाल ठोला
६. ११) ,, भंवरलाल छगनलाल ठोला
७. ५१) ,, अक्षयकुमार वर्द्धमान मोहीवाल
८. ५१) ,, इन्द्रमल शान्तिलाल मोहीवाल
९. ३१) ,, भंवरलाल सुन्दरलाल ठोला
१०. २५) ,, माणकचन्द नेमीचन्द खटोड़
११. ५) ,, कस्तूरचन्द धानोत्या
१२. ११) ,, नन्दलाल वगड़ा
१३. ५१) ,, छोगालाल सुन्दरलाल साकून्या
१४. ३१) ,, छगनलाल लाभचन्द जैन
१५. ५१) ,, भंवरलाल सुगनचन्द वागड़या
१६. ५१) ,, गिरधारीलाल तायेड़या
१७. ११) ,, पद्मकुमार साकून्या
१८. २०) ,, रूपचन्द स कूड़िया
१९. ११) ,, नेमीचन्द ठोला
२०. २५) ,, इन्द्रमल सूरजमल हरसोरा
२१. ११) ,, हरिप्रसाद पंडित सा०
२२. ११) ,, लालचन्द साकून्या

६४३)

विविध गाँव

१. ५१) श्री प्यारचन्द साकून्या झांतला
२. २२) ,, नेमीचन्द सेठया, थड़ोद
३. ११) ,, विमलचन्द हरसोरा, बून्दी
४. ११) ,, धूलीलाल हरसोरा, बून्दी
५. ५) श्रीमती कंचनबाई धर्मपत्नी श्री ख्यालीलाल अजमेरा महुवा
६. २१) श्रीमती सोहनबाई चेची
७. ११) श्री रतनलाल सावला धनगाँव
८. ११) श्री होकमीचन्द ठग

१४३)

हम सभी दानदाताओं के अत्यन्त आभारी हैं जिन्होंने इस पुस्तिका ज्ञानदीप पुष्पांजली के प्रकाशन करवाने में हमें तन, मन, धन से सहयोग दिया है।

—प्रकाशक

पुष्प-माला

श्री पार्श्वनाथाय नमः

श्री दि० जैन पार्श्वनाथ अतिशय क्षेत्र बिजोलियां का संक्षेप परिचय

स्वतन्त्रता संग्राम की पुण्य भूमि मेवाड़ शिर मुकुट हिन्दूवा सूर्यकुल कमल दिवाकर महा शूरवीर योद्धा महाराणा प्रताप की जन्मभूमि उदयपुर राज्य के अन्तर्गत यह ग्राम बिजोलियां (राजस्थान) के दक्षिण पूर्व में बून्दी से ३० मायल, भीलवाड़ा से ६० मायल, चित्तौड़गढ़ से ७० मायल की दूरी पर विन्ध्यवल्ली पर्वत की विशाल श्रृंखलाओं की गोद में समुद्र तल से दो हजार फीट की ऊंचाई पर एक पठार के रूप में ऐतिहासिक धर्म नगरी बिजोलियां आबाद हैं और चारों तरफ ऊंचाई होने से यह क्षेत्र ऊपर माल के नाम से विख्यात होकर बड़ा ही रमणीय स्थान है।

ग्राम से पूर्व दिशा में एक मील की दूरी पर श्री दि० जैन पार्श्वनाथ अतिशय क्षेत्र बहुत प्राचीन श्री भगवान पार्श्व प्रभू पर कमठ उपसर्ग केवल ज्ञान मुनि जो कि वि० सं० १२२६ के शिलालेख से साबित होता है यह शिलालेख एक कुदरती चट्टान पर ९२ श्लोक संस्कृत में खुदा हुआ है माथुर संघ में गुणभद्र नामक महामुनि हुये थे उन्होंने बनाया जिसकी नकल पूर्व में स्वर्गीय कामदार साहब हीरालाल जी (बघेरवाल) जो श्री दि० जैन अखिल भारतवर्षीय महासभा के पुरातत्व विभाग में मन्त्री रहे उन्होंने श्रीमान् पण्डित सा० वर्धमान जी छोटेलाल जी आदि से कराकर भेजबल के क्षेत्र के नक्शे छपवाकर वितीर्ण कराये मगर यातायात का साधन विलकुल नहीं होने से प्रकाश में नहीं आया, संस्कृत शिलालेख का हिन्दी अनुवाद श्रीमान् प्रोफेसर साहब खुशालचन्द्र जी गौरा वाला विद्यापीठ काशी ने किया जो निम्न प्रकार महानुभावों के अवलोकनार्थ प्रकाशित किया जारहा है।

चाहमान सोमेश्वर महाराजा बिजोलियां का शिलालेख

वि० सम्वत् १२२६ फाल्गुन बुद ३ गुरुवार

सम्पादक—अक्षयकीर्ति जी व्यास एम० ए०

अनुवादक—प्रोफेसर खुशालचन्द्र जी गौरा वाला एम० ए०

काशी विश्व विद्यालय

श्लोक नं० १ श्री बृषभदेव, शान्तीनाथ और नेमीनाथ को नमस्कार किया है। श्लोक नं० ५ श्री भगवान पार्श्व प्रभू के समवशरण का विवरण दिया है श्लोक नं० ६ से ९ तक श्री चौबीस तीर्थंकरों को नमस्कार किया है इत्यादि।

श्लोक नं० १० से २८ तक चाहमान राजाओं की वंशावली देते हुए श्लोक नं० २४ में अत्यन्त धर्मात्मा पृथ्वीराज ने भक्ति और मुक्ति के लिए स्वयं भूत पार्श्वनाथ जी के मन्दिर को मोराझरी नाम का गांव दान में दिया व श्लोक नं० २८ सोमेश्वर महाराज ने रेवातीर पर बसे रेवण ग्राम को स्वयं भूत पार्श्वनाथ के मन्दिर को दान में दिया है जो इस समय पूर्व दिशा में खण्डहर मौजूद है।

अथ कारावक वंशानुक्रम

श्री नेमीनाथ के तीर्थकाल तथा श्रीकृष्णजी के राज्यकाल में देवों और दैत्यों के द्वारा समुद्र मंथन किये जाने पर श्लोक नं० २९ देव समूह के लिये भी समादरणीय उत्तम वंश निकला जिसे इन्द्र ने श्रीमाल (मिनमाल) या मेनालपुर बसाया जो इस समय मेनाल के नाम से प्रसिद्ध है और इस समय ७ मन्दिर वैष्णव, खजरोह के समान बने हुये मौजूद हैं बकाया काफी खण्डहर हैं।

श्लोक नं० ३३ वाघेरा आदि स्थानों पर चन्द्रमा के समान धवल जिन मन्दिर बनवाये हैं।

श्लोक नं० ३५ नारायण क्षेत्र पर बड़ा भगवान महावीर का मन्दिर आज भी सुशोभित हो रहा है।

श्लोक नं० ४३ अजमेर का अलंकार भूत श्री वर्धमान स्वामी का मन्दिर इन्हीं भाग्यशालियों ने बनवाया है।

श्लोक नं० ४६ अष्टापद शैल के शिखर पर भगवान नेमीनाथ का विशाल जैन मन्दिर बनवाया है।

(श्लोक नं० ५१ से ९२ तक बिजोलियां का वर्णन दिया है)

एक बार सेठ लोलार्क बिजोलियां आया शय्या पर सोते हुए उन्होंने किसी श्रेष्ठ पुरुष को अपने सामने खड़ा देखा, सेठ ने पूछा आप कौन हो कहां से आये हो, उन्होंने कहा मैं फणीश्वर हूँ पाताल मूल से तुम्हें उपदेश देने आया हूँ कि श्री पार्श्वनाथ स्वयं यहां आयेंगे, सेठ ने स्वप्न पर विचार नहीं किया क्योंकि वातादि रोग से हो जाते हैं, फिर फणीश्वर लोलार्क की धर्मपत्नि ललिता से कहा भद्र सुनो मैं धरणेन्द्र हूँ यहीं पर श्री पार्श्व प्रभू के दर्शन कराता हूँ सेठ को मैंने कहा नहीं सुना।

ललिता सेठानी ने कहा—जो आपने कहा उचित नहीं है मेरे प्राणनाथ श्री पार्श्व प्रभू भगवान को निकालेंगे मन्दिर बनवायेंगे, पूजा करेंगे, पुनः धरणेन्द्र लोलार्क के पास फिर गया और कहा कि श्री भगवान पार्श्वनाथ, रेवातीर पर आगये हैं इनको तुम निकालो धर्म का अर्चन करो जिनालय बनवाओ जिससे लक्ष्मी वंश यश पुत्र पौत्र विशाल सन्तान सुख आदि की वृद्धि होगी "यही वह भीम नाम का वन है जहां जिनराज का वास है यहां वे शिलायें हैं जिन्हें कमठराठ ने श्री पार्श्व प्रभू पर आकाश मार्ग से फेंकी थी यही वह उद्यान व सरिता है तथा यहां वह स्थान है जहां परम सिद्धि को प्राप्त हुये हैं" इत्यादि (इस समय यहां भीम नाम का वन विख्यात है।)

इस प्रकार वैक्रियक शक्ति के धारक धरणेन्द्र अवतार किया करके बोला तीनों लोक के प्राणियों को ज्ञान दान देने वाले पार्श्वनाथ भगवान अब यहां वास करेंगे। धरणेन्द्र के इन वचनों को सुनकर प्रातः जगकर मन में श्री पंच परमेष्ठी का ध्यान करके ज्यों ही मिट्टी खोदता है ज्योंही कुण्ड के पास अकृतिम स्वयं भूत भामण्डल युक्त अत्यन्त शोभनीय पार्श्व प्रभू प्रदर्शन करता है।

लोलार्क का छोटा भाई श्रीयक ने कुण्ड के बीच से, पदमा, क्षेत्रपाल, अम्बिका, ज्वाला, मालिनी तथा सर्पाधिराज, निकलीसी जो इस समय मौजूद है।

लोलार्क के बड़े भाई लक्षमण (ब्रह्मचारी) को यक्ष ने स्वप्न दिया कि मैं भी वहां जाऊंगा जहां मेरे पार्श्वनाथ भगवान विराजते हैं इत्यादि इस कुण्ड व क्षेत्र का चमत्कार दिखाते हुए पुण्यात्मा श्री सेठ लोलार्क ने अपना जन्म धन्य समझ धन सफल किया सच्चे धर्म का प्रचार किया तथा अपना स्वप्न सच्चा किया इस प्रकार सेठ लोलार्क ने इस जगह सात आयतन बनवाये जो मौजूद हैं, उस समय के राजा महाराजाओं ने क्षेत्र को दान में सेवा पूजन वास्ते जागीर में ग्राम से डोहलिया दो है ग्राम मौजूद है, कामा, खड़ीपुर, वडवा, छोटी बिजोलिया रघोलपुरा, आंतरी में रायता, क्षेत्र क्षेत्र मुतालिक श्री पंडित सा० जगमोहनलालजी महामंत्री श्री मथुरा संघ चौरासी यहां आये और क्षेत्र का विवरण जैन सन्देश २ दिसम्बर १९७१ में प्रकाशित कराया गया जो निम्न प्रकार है।

शिला लेखों में विजोलियां के सम्बन्धित प्रसिद्ध ऐतिहासिक कथन अंकित हैं समय वि० १०८३ फागुन सुद ३ गुरुवार पढ़ने में आया है कि—

मूल संघ सरस्वती गच्छ नन्दि संघ श्री कुन्द कुन्दाचार्य की परम्परा में भट्टारक वसन्त कीर्ति, विशाल कीर्ति श्रुति कीर्ति, धर्मचन्द्र देवारत्न कीर्ति, प्रभाचन्द्र पद्म नन्दी शुभ चन्द्र आदि भट्टारकों के उल्लेख पूर्वक यह बताया गया है कि एक स्तम्भ शुभचन्द्र भट्टारक और द्वितीय स्तम्भ पद्म नन्दी भट्टारक की समाधि स्थान स्वरूप स्थापित है।

सम्भवतः पद्मनन्दी और शुभचन्द्र गुरु शिष्य हैं पद्मनन्दी नाम के अनेक आचार्य तथा भट्टारक हुये हैं उनमें १०८३ में कौन हुये उनका पता मुझे नहीं लग सका।

विजोलियां के इस लेख में भी परम्परा श्री वसन्त कीर्ति से प्रारम्भ हुई थी। गुरु परम्परा के अनुसार इनकी चौथी पीढ़ी से रत्न कीर्ति उनके शिष्य प्रभाचन्द्र का नामो लेख है तथा प्रभाचन्द्र का शिष्य श्री पद्म नन्दि ने अपने को वताया है और श्री शुभचन्द्र ने अपने को पद्म नन्दि का शिष्य बनाया है, इस तरह यह विजोलियां का स्थान (क्षेत्र) वसन्त कीर्ति से ७ वीं ८ वीं पीढ़ी में आता है—उक्त गुर्वावली से विजोलियां की ५, ६, ७ पीढ़ियों का मिलान होता है।

विजोलियां स्तम्भ में यह श्लोक है—

श्री मत्प्रेभेन्दु पटेस्मिन पद्म नन्दी यतिश्वरः।
तत्पद्य बुधि सेवीच्च, शुभ चन्द्रौ विराजते॥

गुरु परम्परा की एकता से ऐसा प्रतीत होता है कि ये पद्मनन्दी १३८३ में दिवंगत हुये होंगे लेख घिसने से शायद १०८३ पढ़ा जाता है यह पद मनन्दि १३६२ में पट्ट पर वैठे थे इनके द्वारा श्रावकाचार के सिवाय भावना पद्धति तथा शारदा स्तवन पार्श्वनाथ चारित्र आदि ग्रन्थ लिखे थे इस प्रकार विजोलियां क्षेत्र भगवान पार्श्वनाथ के उपसर्ग की तथा इसी जगह केवल ज्ञान का स्थान है ही साथ ही उक्त विद्वान भट्टारकों का समाधि स्थल होने से प्रामाणिक ऐतिहासिक स्थान भी है जो कि ८०० वर्ष पूर्व के शिलालेख में इस जगह भगवान पार्श्वनाथ का उपसर्ग स्थान वतलाया जाना इस वात का सूचक है कि यह प्रसिद्धि केवल काल्पनिक नहीं है किन्तु ८०० वर्ष पूर्व भी इस स्थान स्वयं भूत पार्श्वनाथ जी के मन्दिर को अत्यन्त धर्मात्मा महाराज पृथ्वीराज ने मोराझरी ग्राम व महाराज सोमेश्वर ने रेवातीर पर वसे रेवण ग्राम को दान में दिया है जो इस समय क्षेत्र से पूर्व में खण्डहर मौजूद है।

इस दो शिला लेखों के अलावा परकोटा के पास जो एक सुन्दर अत्यन्त शोभनीय कुण्ड है उसके बगल में उत्तर की तरफ एक और शिला लेख कुदरती चट्टान पर बहुत विशाल खुदा हुआ है हमारे पढ़ने में नहीं आया, क्योंकि समय का अभाव था, उसके पास वाउण्डरी के बाहिर रेखा तट पर बहुत बड़ा शिला लेख कुदरती बहोतबड़ी चट्टान पर उन्नत शिखर पुराण नाम का शास्त्र खुदा हुआ है (दोनों शिला लेख सरकार के संरक्षण में है) यदि दोनों शिला लेखों के लेख पढ़े जा सकते तो इस क्षेत्र का प्राचीनता पर काफी प्रकाश पड़ता।

मध्य मन्दिर के बीच में एक महराव सी बनी है जिसके बीच में खाली स्थान है तथा घेर कर महराव में श्री चौबीसौ प्रतिमायें छोटे आकार की बनी हैं मध्य में एक ताक है जिसमें शायद कोई बड़ी प्रतिमाजी बिराजमान रही हो जो अब नहीं है, ताक के ऊपर श्री पार्श्व प्रभु को पद्मावती देवी अपने शिर पर बिराजमान कर रखा है और दोनों आजू बाजू हाथी अपने सुण्ड से अभिषेक कर रहे हैं।

महराव के ऊपर शिखर जैसे बने हुए हैं उनसे तो ऐसा प्रतीत होता है कि यह महराव और शिखर मन्दिर के ऊपरी भाग का हिस्सा हो और श्री प्रतिमाजी इनके नीचे भूगर्भ में हो, इस संभावना की पुष्ठि मुझे तव हुई कि जब में मन्दिर के बाहिर फर्श को देख रहा था, वहां एक पत्थर पर सोपान तना पंक्ति शब्द खुदा हुवा देखा, ऐसा अनुमान है कि मुस्लमी काल में कभी भूगर्भ की प्रतिमायें मिट्टी में पूर करदी गई हो और संकेत रूप में वह सोपान तना पंक्ति शब्द खुदाया गया हो,

भूगर्भ में विशाल जिन विम्व वहां अवश्य होना चाहिये क्योंकि बाहरी दृश्य सब मिलते हैं।

आवश्यकता इस बात की है कि क्षेत्र में पूर्व यातायात के साधन नहीं होने से प्रकाश में नहीं आया है, वहां श्री विशाल पार्श्व प्रभु की प्रतिमाजी शीघ्र बिराजमान होना चाहिए, और भूगर्भ की खुदाई कराई जाकर शंका निवारण की जाय, श्री भगवान पार्श्व प्रभू का तप कल्याण चेत बुदी ४ को है और केवल ज्ञान इस ही क्षेत्र पर भीमनामा वन में उपसर्ग दूर होकर हुआ है उस दिन प्रतिवर्ष मेला कराया जावे यह कार्य श्री दि० जैन अखिल भारत-वर्ष के सहयोग से हो सकता है, शुभम्।

क्षेत्र मुतालिक पण्डित सा० वाणी भूषण श्री लाड़लीप्रसादजी
सवाई माधौपुर का उल्लेख तारीख ११-१२-७३ ई०

वास्तव में यह ऐसा चमत्कारिक स्थान है कि दर्शनार्थी का मन एकाएक ऐसा मोहित होता है कि यहां बैठकर भगवान को गुणानुवाद किया करूं। कुछ प्राकृतिक सौन्दर्य भी मन को मोहित करता है। यहां के श्रीदिगम्बर जैन समाज ने बिजोलियां काण्ड के समय जिस धीर वीरता का परिचय देकर धर्म की ध्वजा को लहराया है वह स्वर्णाक्षिरों में इतिहास लिखा जाने योग्य है, इस बिजोलियां काण्ड के केश में सफलता मिल जाने से अखिल भारतवर्ष दि० जैन समाज की महती प्रभावना हुई है, यहां से सभी बन्धुओं को धर्म पर अटूट श्रद्धा है और इस क्षेत्र की व्यवस्था और प्रभावना में भी पूरा तन मन धन का सहयोग है विशेष रूप से श्री बाबूलालजी पटवारी की इस क्षेत्र के प्रति सेवायें हैं वे बहुत ही प्रशंसनीय है क्षेत्र की पूर्ण व्यवस्था आय, व्यय का विवरण आदि सभी कार्य सुव्यवस्थित ढंग से आपने कर रक्खा है तथा अपना सारा जीवन आप इस क्षेत्र की सेवा सुश्रुषादि में ही लगा रक्खा है इस क्षेत्र पर प्राचीनतम शिला लेखादि जैन धर्म की प्राचीनता का दिगदर्शन कराते हैं। भगवान पार्श्वनाथ पर कमठ के उपसर्ग का यही स्थान शिला लेख के श्लोक नं० ५९ से साबित होता है आज आवश्यकता इस बात की है समाज के श्रीमानों और विद्वानों को इस ओर भी ध्यान देना चाहिये और यहां की प्राचीनतों को अक्षुण्य बनाए रखने में पूरा पूरा सहयोग देना चाहिए तथा भगवान महावीर का २५ सौ निर्वाणोत्सव जो मनाया जावेगा उस समय इस क्षेत्र पर भी थोड़ा सा ध्यान आकर्षित किया जाकर जैन तीर्थों का जो इतिहास लिखा जारहा है उसमें यहां के शिलालेखों का वर्णन यहां के चित्रादि अवश्य लेने चाहिए, आज श्रीमान् बापूलाल जी साहब के साथ यहां के क्षेत्र के दर्शन कर बहुत ही आनन्द आया है शुभम्।

लाडलीप्रसाद जैन पापड़ीवाल
सवाई माधोपुर ११-१२-७२

श्री पण्डित सा० लाड़लीप्रसाद जी सवाई माधोपुर वाले ग्राम जौरा (अलापुर) मोरेना गये थे वहां के श्री दिगम्बर जैन मन्दिर में दिगम्बर जैन डाइरेक्टरी जो वि० सं० १९७० में प्रकाशित हुई हैं देखने को मिली उसमें कई स्थानों के शिलालेख प्रकाशित हुआ है जिसमें बिजोलियां पार्श्वनाथ का भी पूर्ण परिचय दिया है मगर संक्षेप में लिखा रहा हूँ।

ग्राम के समीप ही आग्नेय दिशा में श्रीमत्पार्श्वनाथ स्वामी का अतिशय क्षेत्र बहुत प्राचीन और रमणीय स्थान है। सैंकड़ों स्वाभाविक चट्टाने बनी हुई है ऐसा मालूम होता है, शायद भगवान पार्श्व प्रभू का विहार होते समय सभव सरण इस स्थान पर आया होगा।

मन्दिर जी के सामने दो मानस्तम्भ है पहला दाहने हाथ का जमीन से बाहिर निकला हुआ हैं वह छः फुट ऊंचा है ऊपर के भाग में चारों तरफ चार प्रतिमायें श्री चन्द्रप्रभू, श्री नेमीनाथ, श्री वर्द्धमान, श्रीमत्स पाश्वनाथ स्वामी की प्रतिमायें खडगासन और पार्श्वनाथ स्वामी के नीचे दो मुनिश्वरों की प्रतिमायें खुदी हुई हैं जिनके बीच में शास्त्र बांचने की रिहल (चौकी) का आकार बना है पहले स्तम्भ में भट्टारक श्री शुभचन्द्र देवा ऐसा लिखा है दोनों नामों के बीच दो कमण्डल बने हुए हैं, कमण्डल के नीचे चरणपादुका वने हैं, बाकी तीन तरफ खडगासन मुनिश्वरों की ३ प्रतिमायें खुदी है इन चरणों के नीचे एक लेख संस्कृत भाषा में साफ साफ लिखा है, जिसका कुछ भाग जमीन में दबा हुआ है। शेष में श्री कुन्द कुन्दा चाय की पट्टावली में श्री धरमचन्द्र गणी का विवरण लिखा हुआ है।

दूसरा मानस्तम्भ जमीन से ५ फुट बाहिर ऊंचा है जिसमें चार प्रतिमायें श्री पार्श्वनाथ, श्री वर्धमान, श्री नेमीनाथ, श्री समभवनाथ स्वामी की हैं चिन्ह साफ साफ मालुम नहीं देते, प्रतिमाओं के नीचे चारों तरफ मुनीवरों की प्रतिमायें खुदी हुई है इनमें से दो शास्त्र स्वाध्याय करते समय की खडगासन

श्री पण्डित गौरीशंकर, हीराचन्द ओझा, श्री अक्षय कीर्ति व्यास, लेफ्टीनेन्ट कर्नल जैम्सराड, मिस्टर काई, बड़े-बड़े अन्य मतावलम्बियों ने जब जब भारतवर्ष का दौरा किया उस समय इस क्षेत्र को देखा और देखकर अपने इतिहासों में इस क्षेत्र मुतालिक पूरी पूरी प्रशंसा लिखी है।

❀ क्षैत्र पर उपसर्ग ❀

एक उपसर्ग विक्रमी सं० १९८५ में हुआ जिसमें जैन समाज बिजोलियां पर "श्री महादेवजी की मूर्ति उखाड़ने व बिना होम शान्ति पीर वगस मुसलमान से स्थापित करा वैष्णव समाज का दिल दुखाना आदि आरोप लगा फौजदारी केस चलाया जिसमें समाज के मुखिया जैसे मोतीलालजी सेठी या मोतीलालजी ठग केशरीमलजी वेद राजमलजी वज वापूलाल पटवारी देवीलालजी वज आदि को अपराधी वनाया गया, अल्पसंख्यक होने के कारण हर प्रकार से परेशान कर दबाना चाहा किन्तु उन्हें सफलता नहीं मिली इधर मुकद्दमा अदालत में चला परन्तु निराधार होने से खारिज हो गया और धीरे धीरे जाकर पूर्ववत: शान्ति स्थापित हुई।

दूसरा उपसर्ग विक्रमी सम्वत् २०११ में हुआ क्षेत्र पर स्थानीय समाज कई समय से विशाल मूर्ति विराजमान करने का विचार कर रही थी इस संदर्भ में श्री भंवरलालजी सेठिया ने समाज से निवेदन कर क्षेत्र पर मूर्ति विराजमान करने की इजाजत चाही जो मिल गई, पंच कल्याणक का कार्य मुहूर्त अनुसार यथा समय आरम्भ किया गया जिसमें स्थानीय अजैन जनता से भी सहयोग की अपील की तो उन्होंने स्वीकृति देकर फिर मुकर गये और मूर्ति विराजमान होने में वाधा खड़ी करदी विवाद वड़ा उग्र रूप धारण कर गया और न्यायालय के द्वार खटखटाए "स्टे" द्वारा मूर्ति विराजमान न करने की निषेधाज्ञा लाकर समाज को पावन्द कर दिया पावन्दी आखिर तक चलती रही—विवाद ने सभी ओर वढ़ना प्रारम्भ कर दिया एक ओर न्यायालय में मुकद्दमा चला दूसरी ओर असहयोग आन्दोलन चला—भोली जनता से धर्म नाम पर पैसा लिया और उनके विश्वास का हम अल्प-संख्यकों दवाने के विरुद्ध दुरुपयोग किया और वातावरण विषाक्त कर दिया, हर तरीके से जैसे नाई को बाल वनाने, ग्वाले को मवेशी चराने, दरजी को कपड़े सीने ग्राहकों को (जैनियों) दूकान से सामान नहीं लेने मालिनों को साग देने, चमारों से मृतक जानवर वाहिर उठवाने इत्यादि काम से रोका ही नहीं वल्कि वहुत मजबूर किया मतलव यह कि हर तरह से हमें जलील कर अपनी वात मनवाने को मजबूर किया मगर वन्दिश चल नहीं पाई फिर भी विकृत रूप में चलती रही जैन समाज इस विपत्ति की घड़ी में अभेद्य किले की तरह मजबूत रही, संगठन अच्छा रहने से हर विपत्ति चुनौती का डटकर मुकावला किया। दूसरी ओर मुकद्दमा, सिविल, सेशन व हाई कोर्ट तक चला हर

अदालत ने सत्य को परखा और न्यायोचित निर्णय दिया अखीर में हाई-कोर्ट से भी तारीख ५-५-६१ को यही फैसला निकला जिससे हर चीज स्पष्ट होकर नए सिरे से प्रमाण और प्रगाढ़ हुआ इस मुकद्दमे में शुरू से अखीर तक—

श्रीमान् छीतरमलजी साहब अजमेरा
श्रीमान् वकील साहब रामप्रसादजी साहब लड्ढा।
श्रीमान् वकील साहब चैन सुखजी साहब अजमेरा भीलवाड़ा
श्रीमान् वकील साहब हेमचन्दजी साहब सोगानी अजमेर
श्रीमान् वकील साहब नाथूलालजी साहब जैन वीर

श्रीमान् वकील साहब पूनमचन्दजी साहब एडवोकेट कोटा के पैरवी प्रयत्नों से व अन्यान्य गणमान्य सज्जनों के अथक प्रयत्नों एवं स्थानीय समाज के संगठन धैर्य एवं कर्तव्य निष्ठा के कारण यह विवाद न्यायालय से सही रूप में निर्णीत होकर फिर असलरूप में सामने आया है।

❀ क्षैत्र जीर्णोद्धार की रूप रेखा ❀

विवादग्रस्त केस १२ वर्ष तक गवर्नमेन्ट के अधीनस्थ रहा एक दि० जैन व एक व्यक्ति अजैन का पुजारी जाता था जिससे जो क्षेत्र गुल चमन था वह वर्वाद हो गया वाग वगीचा सूख गये दिवारें जगह जगह से ढह गई । जिस समय क्षेत्र सुपुर्द हुआ क्षेत्र को देखकर हृदय दुःख से उमड़ गया मगर सरकार के सामने क्या चारा था विगड़े हुए क्षेत्र को गुल चमन वनाने का ध्येय रखते हुए श्री दि० जैन समाज विजोलियां ने श्री आचार्य श्री १०८ श्री धर्मसागरजी महाराज का मुनि संघ सहित चातुर्मास विक्रमी सं० २०२५ में कराया संघ का पदार्पण आपाढ़ सुद ८ को हुआ उस समय के जुलूस का कथन अकथनीय है चातुर्मास के समय विजोलियां स्वर्गपुरी के समान शोभती थी वाजार व गलियों में गोंचरी के समय काफी भीड़ रहती थी यात्रियों का तांता वना रहता था वड़े वड़े शहरों के यात्री संघ व क्षेत्र के दर्शन कर धर्म लाभ लेते थे। केशलोच के समय का दृश्य अपार भीड़ से होता था जुलूस में जैन व अजैन जनता की काफी भीड़ रहती थी, ऐसा चातुर्मास विजोलियां में पहले कभी हुआ नहीं व आगे होने की उम्मीद भी नहीं की जा सकती है। इस चातुर्मास में अग्रण्य श्रीमान नाथूलालजी भवानीलालजी ठग विजोलियां निवासी थे।

क्षैत्र जीर्णोद्धार वास्ते महानुभावों से उस समय निवेदन करने पर सहयोग प्रदान हुआ फिर श्री आचार्य जी के पूर्ण आशीर्वाद से जीर्णोद्धार का कार्य शुरू कराया गया जो वहुत वड़ा कार्य था वह अव तक भी चल रहा हैं चो तरफ दीवार छः कमरे इत्यादि कार्य शुरू है जिसमें अव तक ४८५०६।२ का खर्चा हुआ हैं जिसका आय व्यय का गोशवारा पंचशाला संलग्न हैं।

पूर्व में यातायात का साधन विलकुल नहीं होने से यह क्षेत्र अव तक भी अन्धकार में रहा अव काफी वसें आती व जाती हैं। क्षेत्र पर मुकद्दमा चला जिसमें भी काफी पैसा खर्च हुआ व जीर्णोद्धार में भी काफी पैसा लगा हैं हर एक विगड़ी हुई चीज को सुधारने में समय और पैसा दोनों लगता है। पैसे जैसे जैसे आते हैं उस रूप में पुनः निर्माण कार्य गतिमान है आप सव ही के सहयोग से यह वापस पूर्व गौरव एवं रूप प्राप्त कर लेगा ऐसी भावना है।

जिन जिन महानुभावों पर केस चला तव व जीर्णोद्धार में तन मन धन से यथा शक्ति सहयोग प्रदान किया उन महानुभावों का श्री दि० जैन समाज विजोलियां पूर्ण से आभारी हैं और आगे भी इस क्षेत्र जीर्णोद्धार में सहयोग

प्रदान करने की आशा की जा रही हैं साथ ही नम्र निवेदन है कि अब यातायात का साधन पूर्ण रूप से हो गया हैं काफी बसें आती जाती हैं अतिशय क्षेत्र ही नहीं भगवान श्री पार्श्व प्रभू के कमठ द्वारा उपसर्ग केवल ज्ञान भूमि की वन्दना कर धर्म लाभ लीजियेगा।

वीर निर्वाण २
कार्तिक बुद ५ मंगलवार
ता० १६-१०-७३ ई०

विनीत
बापूलाल पटवारी
बिजोलियां (राज०)

प्रातः स्मरणीय श्री १०८ मुनिराज
श्रेयांस सागर जी महाराज (वर्धा वाले) का
जीवन-परिचय संक्षिप्त में

जैन इतिहास में मुनि परम्परा उच्च कोटि की मानी गई है। मुनि जीवन लोहे के चने चवाने जैसा अत्यन्त कठिन जीवन है लेकिन धन्य हैं वे लोग जो इन कठिनाईयों की परवाह न कर ऐसे त्यागी जीवन को आनन्द से स्वीकार कर जीवन के अन्तिम क्षणों तक व्रतों का पालन करते हुए उसे निभाते हैं तथा सल्लेखना द्वारा निर्वाण पद प्राप्त करते हैं। इस परम्परा को कायम रखते हुये जैन इतिहास में अनेक ऐसे मुनियों के पवित्र नाम पढ़ने को मिलते हैं, जिन्होंने इन कठिन व्रतों का पालन कर अपने दिव्य जीवन को निर्वाण पद प्राप्त कर उज्वल किया है।

यह लिखते हुए परम हर्ष और आनन्द हो रहा है कि वर्धा के धर्मानुरागी स्व० श्री जिनदास जी नारायणजी चवडे के सुसंपन्न सेवाभावी, धर्मनिष्ठ परिवार में एक नर-रत्न ने जन्म लिया। आपका गृहस्थावस्था का नाम श्री रत्नाकर जी चवडे था, पिताजी का नाम हिरासाव जी जिनदासजी चवडे है जिन्होंने देश के स्वतन्त्रता संग्राम में भाग लेकर कई वार जेल यात्रा की आप एक सच्चे देश भक्त और समाज सेवक हैं। तथा माताजी का नाम सौ० पार्वतीवाई है। आप सैतवाल जैन है। आपका जन्म रोज वुधवार तारीख ३१-१२-१९२० मार्गशीर्ष कृष्णपक्ष १४ नक्षत्र जेष्ठा गंड योग विष्ठि करण शके १८४१ संवत् १९७६ वि० नि० सं० २४४५ स्थान वर्धा है।

आपके जन्म का दिन वड़ा ही पवित्र था। आपके पितामह श्री जिन-दासजी विषम ज्वर से सख्त वीमार थे, लेकिन वड़े पुत्र श्री हिरासावजी के पुत्र रत्न प्राप्ति के सुखद समाचार से पितामह एवं सारे परिवार में हर्षोल्लास छा गया। सख्त वीमारी की दशा में भी ऐसे भव्य जीव के आगमन पर गांव में वड़े धूमधाम से प्रसाद स्वरूप शक्कर वितरण कर हर्ष प्रकट किया गया।

आपका वचपन वड़ा ही आनन्द में वीता। इसी कारण परिवार में आपको वड़े लाड प्यार से रखा था। आपका धार्मिक शिक्षण ब्रह्मचर्याश्रम कारंजा में हुआ। आपकी प्रारम्भ से ही गृह-कार्यो में कम रुचि थी। वैराग्य भावना ही जवरदस्त थी। देह भोगों की ओर से भी आप विशेष सदैव

तपोनिधि विश्ववंद्य विभूति, गुरूवर्य श्री १०८ चारित्र चक्रवर्ति,

आचार्य सुमति सागर जी महाराज जी

के

परम-शिष्य

अध्यात्म-योगीराज श्री १०८ श्रेयांस सागर जी महाराज

(वर्धा वाले)
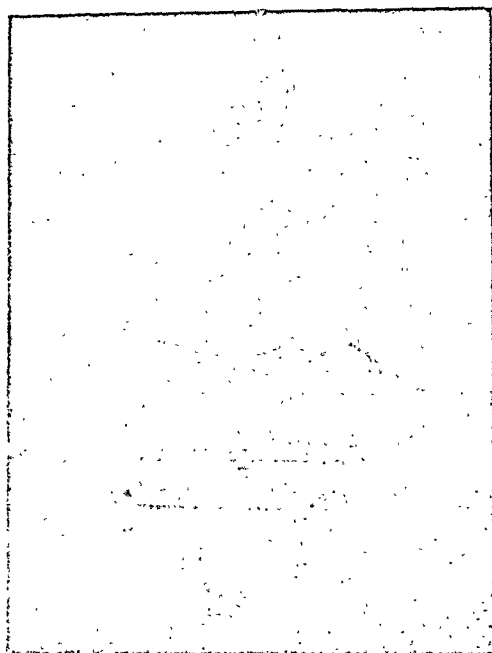
जन्म-वर्धा (महाराष्ट्र) ता० ३१-१२-१९२०

मुनि दीक्षा-देई (राजस्थान) ता० ८-४-१९७४

चातुर्मास स्थल-बिजौलिया (राजस्थान)

वीर संवत २५०२

विक्रम संवत् २०३३

केशलोच समारोह बिजौलियां (राज०)

श्री १०८ आचार्य रत्न सुमतिसागर जी महाराजजी के परम शिष्य

श्री १०८ मुनि श्रेयांससागरजी महाराज

मिती कार्तिक कृष्ण पक्ष सप्तमी रोज शुक्रवार दिनांक १५-१०-७६

मु० बिजौलियां—जि० भीलवाड़ा

श्री १०८ आचार्य रत्न सुमतिसागरजी महाराज जी के परम शिष्य

श्री १०८ मुनि श्रेयांससागरजी महाराज

गृहस्थी अवस्था के परिवार सहित

नीचे बैठे हुये—श्री ध० हिरासाव जो जिनदास जी चवडे वर्धा

श्री ध० सौ० पार्वतीबाई हि० चवडे वर्धा

पीछे खड़े हुये—श्री ध० विसंबरदयाल अजमेर, सौ० श्री रत्नमालाबाई र० चवडे वर्धा, श्री ध० कमलाकर जी जि० चवडे वर्धा, सौ० श्री० मंजुलाबाई नेमिवंत फुसुले वर्धा, श्री ध० पुरुषोत्तम जी जि०

ब्रह्मचारी दीक्षा समारोह के अवसर पर

उदासीन रहते थे। धर्म चिन्तवन में ही विशेष रस लेते थे। इसी भावना से प्रेरित होकर आपने मुनि दीक्षा ली। इसके बाद से पारिवारिक बन्धनों से आप और भी दूर-दूर रहने लगे। कुछ दिन तो प्रेस कार्यों में अकेले ही कार्य करते रहे, लेकिन बाद में पिताज़ी के साथ मिलकर उनके व्यवसाय में सहायक बने। आपके परिवार का मुख्य व्यवसाय प्रेस का ही रहा है।

आपका विवाह वरूड निवासी धर्मानुरागी स्व० बाबूरावजी तुकारामजी नखावे की सुशील कन्या चि० सौ० रत्नमाला के साथ बड़े धूमधाम के साथ सम्पन्न हुआ था। इनसे इन्हें एक कन्या रत्न हुई, जिसका नाम चि० विजया रखा गया शालेय अध्ययन में चि० सौ० विजया की विशेष रुचि होने से उसने बी० ए० बी० एड० की ऊंची पदवी प्राप्त की। आपने अपनी कन्या का विवाह नागपुर निवासी श्री रामचन्द्र राव बाबाजी धोपाडे के साथ समारोह पूर्वक सम्पन्न किया उन्हें दो पुत्र रत्न हैं।

आपकी एक जेष्ठ बहिन है, जिसका नाम सौ० मंजुलाबाई नेमिवंत फुर्सुले है, आपको एक छोटा भाई है, वे हैदराबाद में रहते हैं, सुभाषचन्द्र चवडे उनका नाम है, आपके वृद्ध माता-पिता हैदराबाद में इन्हीं के छोटे भाई के पास रहकर धर्म साधना कर कर रहे हैं।

सर्व प्रथम आपके पितामह स्व० श्री जिनदास जी नारायण जी चवडे ने सं० १९०१ में जैन सुधाकर प्रेस की वर्धा में स्थापना कर 'जैन ग्रन्थ संग्रहालय' नाम की एक संस्था प्रारम्भ की थी, जिसके तत्वावधान में जैन ग्रन्थ प्रकाशन का कार्य आरम्भ हुआ। उसी के संरक्षण में जैन साहित्य एवं धार्मिक पुस्तकें प्रकाशित कर प्रचार कार्य आरम्भ हुआ, जो आज भी विधिवत शुरू है।

आपका ही यह प्रयत्न रहा कि दिगम्बर जैन पंच कमेटी के साथ सहयोगी बनकर वर्धा के श्री सुपार्श्वनाथ दिगम्बर जैन मन्दिर, दिगम्बर जैन बोर्डिंग तथा विद्यादानोपदेश प्रकाशिनी जैन सभा स्थापित कर उसे भी आगे बढाया उसी तरह रामनगर के श्री महावीर दिगम्बर जैन मन्दिर जिसके तत्कालीन संस्थापक श्री नेमचन्द नारायणजी चवडे एवं सौ० जानकीबाई चवडे थे। इस मन्दिर को भी आपकी असीम सेवा उपलब्ध हुई थी। आज भी अन्य प्रकाशनों के साथ ही जैन ग्रन्थ छपाई का कार्य भी किया जा रहा है। इसी कार्य से आपका पूरा परिवार महाराष्ट्र और विदर्भ में 'जैन ग्रन्थ संग्राहक एवं प्रकाशक' के नाम से परिचित है।

आपका सारा परिवार 'प्रिन्टिंग प्रेस' के व्यवसाय में ही लगा हुआ है। आपके परिवार में चार प्रेस हैं 'श्री प्रेस हैदराबाद में श्री सुभाषचन्द्र चवडे आपके छोटेभाई चलाते हैं। उदय प्रेस पद्माकरजी कमलाकरजी चवडे तथा

'दीपक प्रेस' श्री पुरुषोत्तमजी चवडे आपके चाचाजी चलाते हैं । परिवार के सभी भाई लोग सुशिक्षित होकर वी.ए.एम.ए.एम. कॉम की पदवी लेकर विभूषित हुए हैं और विद्याध्ययन में लगे हुए हैं एवं इन प्रेसों का संचालन करते हैं । आपका भी एक 'जयहिन्द प्रेस' था जिसका संचालन आप खुद नागपुर में करते थे । आपने एक मकान भी नागपुर में खरीद लिया था, लेकिन धर्म-चिन्तन की तीव्र भावना आपको पारिवारिक एवं व्यावसायिक वन्धनों में न वांध सकी । परिवार की इच्छा थी कि आप एक कुशल व्यापारी वने, लेकिन ऐसा नहीं हो सका 'मन चेति कुछ होत है, प्रभु चेति तत्काल' यह कहावत सिद्ध हुई ।

आपने दूसरी प्रतिमा कारंजा पंच कल्याणक में १९६२ में ली थी, उसके वाद ६वीं प्रतिमा १९६५ में कन्नड के पास चापानेर में अंगीकार की । आपने ७वीं प्रतिमा ब्रह्मचर्य की भागलपुर में दि० २-११-७० श्री १०८ आचार्य सुमतिसागरजी महाराजजी से ली थी । इसके वाद आपने १० वीं प्रतिमा अनुमति त्याग रोज गुरुवार मार्गशीर्ष शुद्ध ९ को आरामें १०८ आचार्य सुमतिसागर महाराजजी से ली । उसके वाद आपने शुभ मिती वैशाख कृष्ण पक्ष २ सोमवार दि० ८-४-७४ स्थान देई (राजस्थान) में पंचकल्याणक समारोह में श्री १०८ आचार्य सुमतिसागरजी महाराज का शिष्यत्व ग्रहणकर उनसे मुनि दीक्षा ग्रहण की, आपका परिवर्तिक नाम श्री १०८ मुनि श्री श्रेयांससागरजी महाराज रखा गया आपने कुछ दिन तक उन्हीं के संघ के साथ विहार किया सम्वत २०३१ में आपका पहिला चातुर्मास अजमेर में भव्य समारम्भ के साथ सम्पन्न हुआ । इस अवसर पर आपका केशलोंच भी हुआ वहां से फिर गुरु के साथ विहार कर, गिरनार, तारंगाजी, शत्रुन्जय, पावागड करते दूसरा चातुर्मास ईडर (गुजरात) में सं० २०३२ में हुआ । इसके वाद आपका तीसरा चातुर्मास सं० २०३३ में विजौलियां ग्राम में (राजस्थान) स्वतन्त्रता से हुआ और यहां आपका वड़े धूमधाम से केशलोंच हुआ । ये आपका जीवन परिचय है ।

श्री १०८ गुरु आचार्य सुमति सागर जी के परम शिष्य
श्री १०५ क्षुल्लक मल्लिसागरजो का जोवन परिचय

आपका जन्म महाराष्ट्र राज्य के अन्तर्गत सिवा, जि० नागपुर सिवा ग्राम में हुआ। आपके पिताजी का नाम वापूजी गडेकार जैन था। आपका जन्म नाम बिठोवाजी गडेकार था जाति सैतवाल जैन और माताजी का नाम सौ० राधाबाई गडेकार जैन था। आपके एक लड़का है। उसका नाम नरेन्द्र-कुमार बारामती में टेलिफोन ऑपरेटर है। आपकी पत्नी का नाम सरस्वती बाई गडेकार था। आपकी भाषा मराठी है। आपने ७ प्रतिमा मुक्तागिरी पंचकल्याणिक में धारण की थी। आपने उसके बाद मु० सिवा में ही किराणा दुकान चलाई इसके पहले आप नागपुर में मोटर ड्राइविंग का काम करते थे। इसके बाद आप यात्रा करने लगे। पहिले से ही आपकी धार्मिक वृत्ति होने से चार प्रकार के दान देते थे। आप गुरु की सेवा पूजा आदि षट् कार्यों में निमग्न रहते थे और १०-१० उपवास करते थे। स्वाध्याय और गुरु संयोग मिलने से आपकी वैराग्य भावना दिन दिन बढ़ती गई। आप बरावर गृहस्थी अवस्था में श्रावक धर्म ठीक तरह से पालन करते थे। जिससे आपकी रुचि धर्म के तरफ ज्यादा बढ़ी। आप आचार्य सुमतिसागर जी महाराज के दर्शनार्थ चातुर्मास में आये। वहाँ से फिर शिखरजी यात्रा गये। यात्रा करते करते ब्रह्मचारी अवस्था में आप श्री १०८ गुरु आचार्य सुमतिसागर जी के दर्शन के लिए ईडर (गुजरात) पधारे वहां पर आपने आचार्य महाराज जी से क्षुल्लक दीक्षा के लिए प्रार्थना की। तब आचार्य महाराज जी ने आपकी प्रार्थना स्वीकार कर आपको ईडर (गुजरात) चौमासे में क्षुल्लक दीक्षा प्रदान की। आपका क्षुल्लक दीक्षा का नाम श्री १०५ क्षुल्लक मल्लिसागर जी रखा। फिर दीक्षा के बाद आप गुरु आचार्य सुमतिसागर जी के साथ ८ महिने संघ में रहे। उनके साथ में तारंगाजी, पावागढ़ की यात्रा की। फिर संघ चौमासा के बाद बिहार कर कोटा आया। गुरु के परवानगी से आपने श्री १०८ मुनि श्रेयांस सागर जी महाराज जी के साथ बिजौलियां (राजस्थान) में चातुर्मास किया। अब आप श्री १०८ मुनि श्रेयांससागर जी के साथ हैं।

❀ णमोकार मंत्र एवं णमोकार मंत्र स्तुति ❀

ॐ जय अरिहंताणम्, स्वामी जय अरिहंताणम्,
भाव भक्ति से नित प्रति प्रणमो सिद्धाणं......ॐ जय अरिहंताणम् ।
दर्शन, ज्ञान, अनन्तो शक्ति के धारी, स्वामी शक्ति के धारी,
यथा ख्यात है, जिसमें कर्म शत्रुहारी...ॐ जर अरिहंताणम् ।
ॐ जय अरिहंताणम्, स्वामी जय अरिहंताणम्,
भाव भक्ति से नित प्रति प्रणमो सिद्धाणं...ॐ जय अरिहंताणम् ।
हे सर्वज्ञ सर्व दर्शी सुख अनन्त पाये, स्वामी सुख अनन्त पाये,
अ गुरु लघु अ मूर्ति, अव्यय कहलावे...ॐ जय अरिहंताणम् ।
ॐ जय अरिहंताणम् स्वामी जय अरिहंताणम् ।
भाव भक्ति से नित प्रति प्रणमो सिद्धाणं......ॐ जय अरिहंताणम् ।
णमो आयरियाणं छत्तीस गुण धारक, स्वामो छत्तीस गुण धारक,
जैन धर्म के नेता, संघ के संचालक......ॐ जय अरिहंताणम् ।
ॐ जय अरिहंताणम् स्वामी जय अरिहंताणम् ।
भाव भक्ति से नित प्रति प्रणमो सिद्धाणं......ॐ जय अरिहंताणम् ।
णमो उवज्झायाणं, चरण शरण ग्याता, स्वामी चरण शरण ग्याता,
अंग उपांग पढ़ावत ज्ञान दान दाता, ॐ जय अरिहंताणम् ।
ॐ जय अरिहंताणम् स्वामी जय अरिहंताणम्
भाव भक्ति से नित प्रति प्रणमो सिद्धाणं......ॐ जय अरिहंताणम्
णमो लोए सव्व साहूणं ममता मदहारी, स्वामी ममता मद हारी,
सत्य अहिंसा अचौर्य वह्मचर्य धारी, ॐ जय अरिहंताणम् ।
ॐ जय अरिहंताणम् स्वामी जय अरिहंताणम्,
भाव भक्ति से नित प्रति प्रणमो सिद्धाणं......ॐ जय अरिहंताणम् ।
वह्मचारी कहे शुध मन ध्यान धरे, स्वामी शुध मन ध्यान धरे,
पावन पंच परमेष्ठी प्रत्याख्यान करे......ॐ जय अरिहंताणम् ।
ॐ जय अरिहंताणम् स्वामी जय अरिहंताणम्,
भाव भक्ति से नित प्रति प्रणमो सिद्धाणं......ॐ जय: अरिहंताणम् ।

भक्तामर-महिमा

(श्री १०८ मानतुंग आचार्य प्रणित)

श्री भक्तामर का पाठ, करो नित प्रातः भक्ति मन लाई
सब संकट जाय नसाई ॥

जो ज्ञान मान मतवारे थे, मुनि मानतुंग से हारे थे,
उन चतुराई से नृपति लिया बहकाई...सब संकट जाय नसाई ॥
मुनिजी को नृपति बुलाया था, सैनिक जा हुक्म सुनाया था,
मुनि वीतराग को आज्ञा नहीं सुहाई...सब संकट जाय नसाई ॥
श्री भक्तामर का पाठ करो नित प्रातः भक्ति मन लाई,
सब संकट जाय नसाई ॥

उपसर्ग घोर तब आया था, बलपूर्वक पकड़ मंगाया था,
हथकड़ी बेडियों से तन दिया बंधाई, सब संकट जाय नसाई ॥
श्री भक्तामर का पाठ करो, नित प्रातः भक्ति मन लाई,
सब संकट जाय नसाई ॥

मुनि कारागृह भिजवाये थे, अडतालीस ताले लगाये थे,
क्रोधित नृप बाहर पहरा दिया बिठाई, सब संकट जाय नसाई ॥
श्री भक्तामर का पाठ करो नित प्रातः भक्ति मन लाई,
सब संकट जाय नसाई ॥

मुनि शान्त भाव अपनाया था, श्री आदिनाथ को ध्याया था,
हो ध्यान–मग्न भक्तामर दिया बनाई, सब संकट जाय नसाई ॥
श्री भक्तामर का पाठ, करो नित प्रातः भक्ति मन लाई,
सब संकट जाय नसाई ॥

सब बन्धन टूट गये मुनि के, ताले सब स्वयं खुले उनके,
कारागृह से आ बाहर दिए दिखाई, सब संकट जाय नसाई ॥
श्री भक्तामर का पाठ, करो नित प्रातः भक्ति मन लाई,
सब संकट जाय नसाई ॥

राजा नत होकर आया था, अपराध क्षमा करवाया था,
मुनि के चरणों में अनुपम भक्ति दिखाई, सब संकट जाय नसाई ॥

श्री भक्तामर का पाठ, करो नित प्रातः भक्ति मन लाई,
सब संकट जाय नसाई ॥

जो पाठ भक्ति से करता है, नित ऋषभ-चरण चित्त धरता है,
जो ऋद्धि मन्त्र का विधिवत् जाप कराई, सब संकट जाय नसाई ॥
श्री भक्तामर का पाठ, करो नित प्रातः भक्ति मन लाई,
सब संकट जाय नसाई ॥

भय विघन उपद्रव टलते हैं, विपदा के दिवस बदलते हैं,
सब मन वांछित हो पूर्ण शांति छा जाई, सब संकट जाय नसाई ॥
श्री भक्तामर का पाठ करो नित प्रातः भक्ति मन लाई,
सब संकट जाय नसाई ॥

जा वीतराग आराधन है, आत्म उन्नति का साधन है,
उससे प्राणी का भव वन्धन कट जाई, सब संकट जाय नसाई ॥
श्री भक्तामर का पाठ, करो नित प्रातः भक्ति मन लाई,
सब संकट जाय नसाई ॥

कौशल सु भक्ति को पहिचानो, संसार–दृष्टि बन्धन जानो।
लो भक्तामर से आत्म ज्योति प्रकटाई, सब संकट जाय नसाई ॥
श्री भक्तामर का पाठ करो नित प्रातः भक्ति मन लाई,
सब संकट जाय नसाई ॥

* जिनवाणी स्तुति *

ओमानन्द ओमानन्द ओमानन्द परमानन्द,

धर्म अहिंसा परमानन्द जिनवाणी सुन परमानन्द

सप्त भंग वाणी समझाया द्वादशांग की जोत जगाया

आदि अनादि जग जन तारे, कर्म विदारन शिव सुख दाता।

केवल ज्ञानी उपदेश देवे, गणधर गुथि में भवि समझावे

तारण तरण जिनवाणी माता, लोका लोक प्रकाशन माता

जिनवाणी को नमन करत हूँ, सुफल बना दो जननी माता

श्रेयांस सागर जननी माता, कर्म विदारण शिव सुख दाता

ओमानन्द ओमानन्द ओमानन्द परमानन्द

धर्म अहिंसा परमानन्द जिनवानी सुन परमानन्द ॥

पार्श्वनाथ-स्तवन

नरेन्द्रं फणेन्द्रं सुरेन्द्रं अधिशं, शतेन्द्रं सुपूजें भजे नाय शीशं।
मुनिन्द्रं गणेन्द्रं नमो जोड़ हाथं, नमो देव देवं सदा पार्श्वनाथं।
गजेन्द्रं मृगेन्द्रं गह्यो तु छुड़ावे, महा आग तें नाग तें तू बचावे।
महावीर तें युद्ध में तू जितावे, महा रोग तें वंघ ते तू छुड़ावे।
दुःखी दुःख हर्ता सुखी सुख कर्ता, सदा सेवकों को महानन्द भर्ता।
हरे यक्ष राक्षस भूतं पिशाचं, विषं डाकिनी विघ्न के भय अवाचं।
दरिद्रीन को द्रव्य के दान दीने, अपुत्री न को तू भले पुत्र कीने।
महा संकटों सें निकारे विधाता, सवै संम्पदा सर्व को देही दाता।
महा चोर को वज्र को भय निवारे, महा पौन के पूंजते तू उबारे।
महा क्रोध की अग्नि को मेघधारा, महा लोभ शैलेश को वज्रधारा।
महा मोह अन्धेर को ज्ञान भानुं, महा कर्म कांतार को दो प्रधानुं।
किये नाग नागिन अधोलोक स्वामीन, हरयो मान तू दैत्य को हो अकामी
तुही कल्प वृक्ष तुही काम धेनु, तुही दिव्य चिन्तामणी नाग एनं।
पशु नर्क के दुःख तें तू छुड़ावे, महा स्वर्ग ते मुक्ति में तू बसावे।
करे लोह को हेम पाषाण नामी रटै नाम सो क्यों न हो मोक्षगामी
करै सेव ताकी करे देव सेवा, सुने बैन सोही लहे ज्ञान मेवा।
जपै जाप ताको नहीं पाप लागे, धरे ध्यान ताके सभी दोष भागे।
विना तोहि जाने धरे भव घनेरे, तुम्हारी कृपा से सरे काज मेरे।

दोहा—गणधर इन्द्र न कर सकें, तुम विनती भगवान।
ह्यानत प्रीति निहार कें कीजे आप समान॥

❀ माने पारस प्रभुजी को नाम घणो प्यारो लागे हो ❀

(तर्ज—राजस्थानी माण्ड)

माने पारस प्रभुजी को नाम घणो प्यारो लागे हो। तर्ज

मेवाड़ देश मायने जी नगरी विंध्यावली जान।
भीमनामा वन विशेजी पारस प्रभु को स्थान। माने पारस...(१)

सं० १४८३ का जी हाल सुनो धर ध्यान पदमनन्दी शुभचन्द्र
मुनि ने लिखी समादी आन। माने पारस...(२)
सं० १२२६ में जी शिलालेख बतलाय सेठ लोलारक सोती बेला
सपनो एक लखाय।
धरनेन्द्र आकर यों बोला सुन ले ध्यान लगाय।
रेवती तीर पे पारस जिनवर सोहे सुन्दर जान।
बेग निकालो पारस प्रभु को सपना सच्चा जान। माने पारस...(३)

प्रातः होते ही सेठ लोलारक भूमि खोदी जाय।
अकृतिम प्रभु पारस स्वामी का दर्शन हो जाय। माने पारस...(४)

पारस प्रभुका इस भूमि पर हुआ है आत्म-कल्याण।
पूरव बैरी कमठ जीव ने उपसर्ग कीना महान। माने पारस...(५)

पाताल मूल से उस ही बेला पद्मा-धरणेन्द्र आय।
उपसर्ग दूर किया जिनवरका केवल ज्ञान उपाय। माने पारस...(६)

चितंत से ही दुःख मिटे जी गमन करे तो लक्ष।
कोटि-कोटि उपवास फल जी जिन दर्शन प्रत्यक्ष। माने पारस...(७)

ये भूमि इणविध कहीजी, आधि, व्याधि मिट जाय।
रोग मरी दुर्भिक्ष न फैले कुष्ठ रोग मिट जाय। माने पारस...(८)

रेवती कुण्डकी महिमा भारी, ज्यों नर स्नान कराय।
पुत्र-पुत्रादिक सम्पत्ति पाये, उत्तम गति को जाय। माने पारस...(९)

लाल गणेश या अरज करत है पारस प्रभु जिनराय।
अब तो मुझको दर्शन दे दो चरणाम चित्त लाऊँ। माने पारस...(१०)

—जैन गणेशलाल चौधरी, बिजौलियां

महावीर भगवान की स्तुति

जय बोलो महावीर स्वामी की, जय बोलो महावीर स्वामी की।
घट घटके अन्तर यामी की, जय बोलो महावीर स्वामी की।

जिस धरती का उद्धार किया, जो आया शरण वो पार किया।
उस पीड सुनी हर प्राणी की, जय बोलो महावीर स्वामी की।
घट घटके अन्तर यामी की, जय बोलो महावीर स्वामी की।

जो पाप मिटाने आया था, जिस भारत आन जगाया था।
उस त्रिशला नन्दन ज्ञानी की, जय बोलो महावीर स्वामी की।
घट घटके अन्तर यामी की, जय बोलो महावीर स्वामी की।

हो लाखों वार प्रणाम तुम्हें, हे वीर प्रभु भगवान तुम्हें।
मुनि दर्शन मुक्ति गामी की, जय बोलो महावीर स्वामी की।
घट घटके अन्तर यामी की, जय बोलो महावीर स्वामी की।

तुमसे लागी लगन–वीर प्यारा

तुमसे लागी लगन, ले लो अपनी शरण, वीर प्यारा,
मेटो—मेटोजी संकट हमारा ॥

निश दिन तुमको जपूं, तुमसे विनति करूँ,
जीवन सारा, तेरे चरणों में बीते हमारा ॥
पिता सिद्धार्थ के राज दुलारे, त्रिशला माता के नयनों के तारे,
ब्याह से नेहा तोड़ा, जग से मुँह को मोडा संयम धारा,
मेटो—मेटोजी संकट हमारा ॥

इन्द्रा दिकों ने भी उत्सव मनाएँ, देवी-देवों ने मंगल गाये,
आशा पूरो सदा, दुःख नहीं पावें कदा, सेवक–थारा,
मेटो—मेटोजी संकट हमारा ॥

अपनी सुख की तो परवाह नहीं की, आत्म सुख को ही तुमने पाया
मेटो जामन–मरण होवे ऐसा यतन, वीर प्यारा,
मेटो—मेटोजी संकट हमारा ॥

तुमसे लागी लगन, ले लो अपनी शरण, वीर प्यारा,
मेटो—मेटोजी संकट हमारा ॥

लाखों बार तुम्हें शीश नवाऊँ, जग के तुम्हें कैसे पाऊँ,
मन व्याकुल भया, दर्शन बिन यह जीया लागे–खारा,
मेटो—मेटोजी संकट हमारा ॥

तुमसे लागी लगन लें लो अपनी शरण, वीर प्यारा
मेटो—मेटोजी संकट हमारा ॥

श्री १०८ मुनि श्रेयांससागरजी की पूजा

श्री श्रेयांससागर मुनिराज की, पूजा करूँ मन लाय,
इस भव सुख संम्पति लहे, पर-भव पुण्य बँधाय ॥
परभव पुण्य बँधाय, पाप कबहूँ नहिं छाये, वर घर मंगलाचार
होय, दुःख कवहू नहिं आवे ॥

ॐ ह्रीं श्री १०८ श्रेयांससागरजी मुनिराजाय नमः अत्र अत्र अवतर संवौष्ट आह्वानन। अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्। अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणम्।

तथाष्टक

निर्मल जल प्रत्शुक कर में ले, स्वर्ण कलश भर लाया,
जन्म मृत्यु के नाश करन को, मुनिवर अग्र चढ़ाया ॥

अजर अमर पद या सूं पाहूँ, भव का भ्रमण मिटावूं,
चहूँ गति दुःख व्यापे नहिं कबहूँ; यही भाव उर लावूँ ॥

ॐ ह्रीं श्री १०८ श्रेयांससागरजी मुनिराजाय नमः जन्म जरा मृत्यु विनाशाय जलं निर्वपामते स्वाहा ॥१॥

मलयागिरी चन्दन घिसकर के, प्रासुक जल में मिलावूँ।
भव आतापके नाश करनको, मुनिवर अग्र चढ़ावूँ ॥
अजर अमर पद या सूं पाहूँ, भवका भ्रमण मिटावूँ।
चहुँ गति दुःख व्यापे नहीं कबहूँ; यही भाव उर लावूँ ॥

ॐ ह्रीं श्री १०८ श्रेयांससागर मुनिराजाय नमः भव ताप विनाशाय चंदनम् निर्ववापते स्वाहा ॥२॥

मुक्तासम उत्तम अक्षत ले, भक्ति भाव से लावूँ,
अक्षय पदके प्राप्त करन को इनके अग्र चढावूँ ॥
अजर अमर पद या सूं पाहूँ, भव का भ्रमण मिटावूँ,
चहुँ गति दुःख व्यापे नहीं, भाव उर लावूँ ॥

ॐ ह्रीं श्री १०८ श्रेयांससागरजी मुनिराजाय नमः अक्षय पद प्राप्त अक्षतम् निर्वपामते स्वाहा ॥३॥

काम दाह या जग में भारी, जीयको अतिभर मावे
विषय भोग का मोह बढाकर, चहुँ गति भ्रमण करावे
याके नाश करनके कारन, उत्तम पुष्प बनावूँ
तंदुल को मैं करके केसरिया, पुष्प ही समझ चढावूँ
अजर अमर पद या सूँ पाहूँ, भव का भ्रमण मिटावूँ
चहुँ गति दुःख व्यापे नहीं कबहूँ, यही भाव उरलावूँ

ॐ ह्रीं श्री १०८ श्रेयांससागरजी मुनिराजाय नमः कामबाण विनाशाय पुष्पं निर्वपामते स्वाहा ।।४।।

क्षुधा रोग भव भवमें सतावे, इसका अन्त न पावूँ ।
भूख वेदना नाश करन को इसके अग्र चढावूँ ।।
गिरी खोपरा प्राशुक लेकर, भाव युक्त मैं लावूँ ।
श्वेत वर्ण की शुद्ध मनोहर, इनके अग्र चढावूँ ।।
अजर अमर पद या सूँ पाहूँ, भवका भ्रमण मिटावूँ ।
चहुँ गति दुःख व्यापे नहीं कबहूँ, यही भाव उरलावूँ ।।

ॐ ह्रीं श्री १०८ श्रेयांससागरजी मुनिराजाय मुनिराजाय नमः क्षुधारोग विनाशाय नैवेद्यं निर्वपामते स्वाहा ।।५।।

मोह तिमिर अंधियारा जग में, जीव को अंध बनावे,
निच आतम के भूल भानको, परमें मन ललचावे ।।
मोह तिमिर के नाश करनको ज्ञान दीप प्रटटावूँ ।।
गिरी खोपरा कर केसरिया, दीप समझही चढावूँ
अजर अमर पद या सू पाहूँ, भवका भ्रमण मिटावूँ
चहुँ गति दुःख व्यापे नहीं कबहूँ, यही भाव उरलावूँ

ॐ ह्रीं श्री १०८ श्रेयांससागरजी मुनिराजाय नमः मोहांधकार विनाशाय दीपम् निर्वपामते स्वाहा ।।६।।

अष्ट कर्म चहुँ गति भटकावें, घोर महा दुःख देवे,
काल अनादिसे भटक भटक करी, नेक न साता आवे ।।
इनको जारन के कारण में, धूप शुद्ध कर लावूँ
शुद्ध अगनि में जार इसे मैं, जग से पिण्ड छुड़ावूँ ।।
अभर अमर पद या सूँ पाहूँ, भव का भ्रमण मिटावूँ
चहुँ गति दुःख व्यापे नहीं कवहूँ, यही भाव उरलावूँ ।।

ॐ ह्रीं श्री १०८ श्रेयांससागरजी मुनिराजाय नमः अष्ट कर्म विनाशाय धूपं निर्वपामते स्वाहा ॥७॥

तिहूं जगके फल खाते खाते, थिरता नेक न पावूं,
इन फल से मैं तृप्त न थायो, वृथाही जनम गमावूं ॥
मोक्ष महाफल पावन कारन, राडा य द्वेश नशावूं
लवंगा दिक को करमें लेकर, इनके अग्र चढावूं ॥
अजर अमर पद या सू पाहूँ, भव का भ्रमण मिटावूं,
चहुँ गति दुःख व्यापे नहीं कवहूँ, यही भाव उरलावूं ॥

ॐ ह्रीं श्री १०८ श्रेयांससागरजी मुनिराजाय नमः महा मोक्ष फल प्राप्ताये फलं निर्वपामते स्वाहा ॥८॥

या जगके पद नाशवान है, यामें शंका न पावूं
जो पद आप धार कर लिनो, ऐसो पद सो मैं पावूं ॥
इस पदको मैं प्राप्त करनको, शक्ति निज प्रगटावूं
अष्ट द्रव्य शामिल करके मैं, चरन न अग्र चढावूं ॥
अजर अमर पद या सू पावूं, भव का भ्रमण मिटावूं
चहुँ गति दुःख व्यापे नहीं, कवहूँ यही भाव उरलावूं ॥

ॐ ह्रीं श्री १०८ श्रेयांससागरजी मुनि राजाय नमः अनर्घ पद प्राप्तये अर्घं निर्वपामते स्वाहा ॥९॥

❁ **दोहा** ❁

श्रेयांससागर मुमिराज के चरण के परताप
भक्ति युत् गुण गाणकरी निम्न लिहूँ

❁ **जयमाल** ❁

जय श्रेयांससागर मुनिराजजी, वर्धा नगर मँझार,
चवडे कुल में जन्म ले, शिया उजागर सार ॥
जय श्रेयांससागर मुनिराजजी

जन्म नाम रत्नाकरजी, घर संसार मँझार,
पिना नाम हिरासावजी, दादा जिनदास सुजान ॥
जय श्रेयांससागर मुनिराजजी

माता श्री पार्वतीबाई इनके उदर मँझार,
मास नवलों तिष्टियें प्रगटे या जग आप ॥
जय श्रेयांससागर मुनिराजची

दशही प्रतिमा पालकर, गुरु आचार्य मुनि श्री सुमतिसागरजी के पास,
चार महाव्रत आपने लीना जनम सुधार, जय श्रेयांससागर मुनिराजजी ॥
वैशाख कृष्ण द्वितीया दिनांक संवत् २०३० मँझार देई ग्राम राजस्थान में ली
दिक्षा सुखकार, जय श्रेयांससागर मुनिराजजी ॥

नाम धरा श्रेयांससागरजी, आचार्य सुमतिसागरजी के पास द्वै चातुर्मास
उनके संघमें बिताये सानन्दकार, जय श्रेयांससागरजी मुनिराजजी ॥

तिजा चौमासा २०३३ में ग्राम बिजौलिया मँझार,
शुभ आनन्द वर्तत सदा इयाही ग्राम मँझार ॥
जय श्रेयांससागरजी मुनिराजजी

जैन समाज बहु पुण्यवान है, ऐसा शुभ अवसर पाय
धर्म लाभ अति करत हैं, नरनारी मिल आय,
जय श्रेयांससागरजी मुनिराजजी

द्वै मन्दिर अति विशाल हैं, नशियाभी सुखकार,
नित प्रति पूजा करत हैं, श्रावक गण मिली आय,
जय श्रेयांससागरजी मुनिराजजी

तारा भी इस क्षेत्र में आया मन उमगाय,
धन दिवस धन या दिन दर्शन कर सुख पाय,
जय श्रेयांससागरजी मुनिराजजी

❀ दोहा ❀

जो भवी मन उमगाय कर, पूजा कर सुख पाय,
जन्म मरण के दुःख से निकसी मोक्ष सुख पाय।

॥ श्री महावीराय नमः ॥

ओम जय श्रेयांस सागर मुनिराजा

आरती

ओम जय श्रेयांस सागर मुनिराजा, स्वामी जय श्रेयांस सागर मुनिराजा, आतम तप धारी, स्वामी आतम तप धारी, कर्म शत्रु के विजेता, आतम अनुरागी, ओम जय श्रेयांस सागर मुनिराजा ॥

द्वादश तप धर सहत परिषह, द्वाविंशति भारी,
स्वामी द्वाविंशति भारी।
रंचमात्र नहि डिगते, ऐसे बलधारी, ओम जय श्रेयांस सागर मुनिराजा ॥

मन वच काय त्रियोग संभारे, समिति पंचचारी,
स्वामी समिति पंचधारी।
पंच महाव्रत पालन करते भविजन हितकारी, ओम जय श्रेयाससागर मुनिराजा

निज आतम में ही रत रहते, मोह विमिर हारी,
स्वामी मोह विमिर हारी।
तन से ममत निवारे, आतम अनुरागी, ओम जय श्रेयांस सागर मुनिराजा ॥

शत्रु मित्र सम जानत, महाव्रत में धारी,
स्वामी महाव्रत के धारी।
तारा इनको नमन करत है, गुण के हैं धारी, ओम जय श्रेयांससागर मुनिराजा

सब जन मिल गुण गावो, चरण न बलिहारी,
बार बार हम विनवे, जग जन हितकारी।
ओम जय श्रेयांस सागर मुनिराजा ॥

मुक्ति की राह पर

जुग जुग जीवो श्रेयांस सागर मुनिराज मुक्ति की राह बताने वाले ॥

राह बताने वाले, भव से पार लगाने वाले,
ऐसे श्रेयांस सागर मुनिराज मुक्ति की राह बताने वाले ॥

जिनने प्रतिमा पालन करके, अणुव्रत धार महाव्रत धारे,
लीना मानुप जन्म सुधार, मुक्ति का मार्ग बताने वाले ॥

जुग जुग जीवो श्रेयांस सागर मुनिराज मुक्ति की राह बताने वाले ॥

अनुमोल मनुष्य भव जाना, इसको सही रूप पहिचाना,
ऐसे अनुभव से इन जान, भव से पार उतारने वाले ॥

त्याग धर्म जग को बतलाया, ऐसा ही मग खुद अपनाया,
कर उपकार महान भनि को पार लगाने वाले ॥

जुग जुग जीवो श्रेयांस सागर मुनिराज मुक्ति की राह बताने वाले ॥

तारा सब मिलकर इनके गुण गावे, भव से पार उतरना चाहे,
ऐसी सन्मति दो महाराज, जगत से पार लगाने वाले ॥

जुग जुग जीवो श्रेयांस सागर मुनिराज मुक्ति की राह बताने वाले ॥

धन्य धन्य भाग्य हमारे, ऐसे मुनिवर मम ग्रह पधारे ॥

(आहार देने के बाद)

भजन

घन धान्य भाग्य हमारे, ऐसे मुनिवर मम ग्रह पधारे,
धन्य धन्य भाग्य हमारे, ऐसे मुनिवर मम ग्रह पधारे ॥

छहुँ काय की रक्षा करते नासा दृष्टि पसारे,
चार हात निरखत चलत हैं, ऐसे मुनि हैं हमारे।
धन्य धन्य भाग्य हमारे, ऐसे मुनिवर मम ग्रह पधारे ॥

परम दिगम्बर दिग्-दश् अम्बर चलत चतुर्संग आरे,
शत्रु-मित्र कांच अरु कंचन सुख-दुःख समान निहारे।
धन्य धन्य भाग्य हमारे, ऐसे मुनिवर मम ग्रह पधारे ॥

पंच महाव्रत पालन करते, तीन गुप्तित संभारे,
निज आतम में निश दिन रमते, तनते ममत निवारे।
धन्य धन्य भाग्य हमारे, ऐसे मुनिवर मम ग्रह पधारे ॥

जर जर नाव भँवर भवो दधि, घुम रही मझधारे,
ऐसे साधु निशदिन उर, तारा भव दधि पार उतारे।
धन्य धन्य भाग्य हमारे, ऐसे मुनिवर मम ग्रह पधारे ॥

नरनारी मिल मंगल गावे, तीनों काल मझारे,
ऐसे साधु के दर्शन करते पाप निमिर निवरे।
धन्य धन्य भाग्य हमारे, ऐसे मुनिवर मम ग्रह पधारे ॥
धन्य धन्य भाग्य हमारे ॥

मुनि सकल परिग्रह त्यागी

[केशलोंच करते समय का भजन]

मुनि सकल परिग्रह त्यागी, इन्द्रिय भोगनते वैरागी,
वैराग्य इन्हों के माही ओत प्रोत भरा शक नाहीं।
जग है नाशवान इन जाना, चमत्कार बिजलीवत् माना,
मुनि सकल परिग्रह त्यागी, इन्द्रिय भोगनते वैरागी।
निश्चय कर यहा त्याग सुहाया, जग को यह साफ बताया,
तनते ममत जिन्हें न सुहाया, वस्त्रा भूषण त्याग बताया।
जे जे भोग विषय इन्द्रिन के, त्याग सभी जग मोह छुड़ाया,
मस्तक से जिनने केश उपाड़े, रंच मात्र भी खेद न आने,
मुनि सकल परिग्रह त्यागी, इन्द्रिय भोगनते वैरागी।
ऐसे दुर्धर परिवह विजयी, आतम ध्यान सुहाया तब ही,
जग वनिता से मोह हटाया, मुक्त रमणीका ध्यान लगाया।
आतम स्वरूप सही जिन चिन्हा, तन से मोह त्याग कर दिना,
बाह्य अभ्यंतर त्यागी परिग्रह, जगते हुए परम वैरागी।
त्रैलोकी सम्पत्ति सब छोड़ी, निज आतमसूं नेहा जोडी,
धन्य धन्य इन जीवन जानो, आतम स्वरूप सही पहचानो।
मानुष भव का सार यही है, पर वस्तुन से नेह नहीं है,
जो नर इम आचरण धरेगा, अविनाशी सुख वोही भरेगा,
मुनि सकल परिग्रह त्यागी, इन्द्रिय भोगनते वैरागी॥
तारा को भी सुबुद्धि इम दीजो, जग का दुःख छुड़ा संग लीजो
जगवासी ममकार बुरा है, नामम् में ये सार भरा है।
तातें जग ममता सब त्यागी, जाय बनो यूं परम वैरागी,
मुनि सकल परिग्रह त्यागी, इन्द्रिय भोगनते वैरागी॥

बिहार करते समय

(भजन–१)

श्री श्रेयांस सागर मुनिराज, छोड़ सब साज, तपस्या धारी,
और हुए विमुख संसारी श्री श्रेयांस सागरजी मुनिराज ॥
संयम धारे बहु दिन बीते, अब हृदय मोहते हैं रीते
केवल निज आतम से, जिनका मन भाया, परसे सब मोह हटाया
श्री श्रेयांस सागर मुनिराज, छोड़ सब साज
तपस्या धारी, और हुए विमुख संसारी ॥

हमने तो परको अपनाया, इनके तो निज ही मन भाया
इसही कारण से धन्य अहो बड़भागी, सासारिक तृष्णा सब त्यागी,
हम सब मेरा मेरा करते, इन भावों से ये है रीते
इसही कारण से जगने शीश झुकाया, यह अनुपम त्याग सुहाया ॥
श्री श्रेयांस सागर मुनिराज, छोड़ सब साज
तपस्या धारी और हुए विमुख संसारी ॥

इस तनसे ममत निवार दिया, कर केशलोंच उत्साह क्रिया
यह त्याग जनाय दिया जग को अब सारा, यह त्यागही धर्म हमारा ।
गुणगान करन की शक्ति नहीं, धर्मामृत वर्षे नित्य सही ।
तारा इन गुरु के चरण महा सुखकारी, दे झुका शीश बलिहारी ।
श्री श्रेयांस सागरजी मुनिराज छोड़ सब साज
तपस्या धारी, ओर हुये विमुख संसारी ॥

हम सब जन मिलि आये, मस्तक नवाय बहु सुख पाये
ऐसे गुरु का यह त्याग देख गुण गाये, जीवन भी सफल बनाये,
श्री श्रेयांस सागरजी मुनिराज, छोड़ सब साज
तपस्या धारी, ओर हुए विमुख संसारी ॥

बिहार करते समय

(भजन नं० २)

श्री श्रेयांस सागर मुनिराज, छोड़ सब साज चले वनवासा,
अब किस विधि रक्खे आशा, श्री श्रेयांस सागर मुनिराज ॥

बिजौलिया नगर महा सुन्दर, जहाँ दोन बने हैं जिन मन्दिर ।
एक नाशियाकी शोभा अद्भुत वर्णी न जाई,
महाभाग्य से हस्त गत आई, श्री श्रेयांस सागर मुनिराज ॥

जब चातुर्मास का आगम था, श्रावक गण अति उमंगाया था,
बच्चा बच्चा भी फूला नहीं समाया, अब समय यह कैसा आया,
अब हृदय हमारा रोता है, आंखों से झरणा वहता है,
यह तो हम श्रावक गण का प्रेम पसारा,अब किसका होय सहारा ।
श्री श्रेयांससागर मुनिराज ॥

मुनिवर दिल के पक्के हैं, हम श्रावक दिल के कच्चे हैं,
धर्मोपदेश सुन दिल में किया विचारा, यह मोह जाल है सारा
श्री श्रेयांससागर मुनिराज ॥

चौमासा सानन्द पूर्ण हुआ, घर घर में अति आनन्द हुआ,
अब मुनि विहार का समय सही बन आया ये दिल में
किस विधि भाया, श्री श्रेयांससागर मुनिराज

संवत् २०३३ सा है, कार्तिक सुदी १४ मासा है, शुभ
शुक्रवार दिन ही अब इन्हें सुहाया, कर विहार अति हर्षाया,
धन्य धन्य समाज यहां की हैं, ऐसा शुभ अवसर पाया है,
ऐसे मुनि संघ को तारा शिश झुकाया, ऐसा शुभ अवसर
पाया । श्री श्रेयांससागर मुनिराज छोड़ सब साज चले
बनवासा, अब किस विधि रक्खे आशा ॥

धन्य तपस्वीजी महाराज

❀ भजन ❀

धन्य तपस्वीजी महाराज सभा मैं आज तप किया भारी
मैं वार वार बलिहारी ॥

पिता हिरासावजी कहलाये, माता पार्वती के नन्द जाये,
शुभ नाम आपका श्रेयांस मुनि यशधारी, मैं वार वार बलिहारी।
धन्य तपस्वीजी महाराज सभा मैं आज तप किया भारी
मैं बार बार वलिहारी ॥

तपस्या का ठाठ लगाया है, घर घर में धर्म फैलाया है,
इकतालीस का पुर, चमक भारी,
मैं बार वार वलिहारी

धन्य तपस्वीजी महाराज सभा मैं आज तप किया भारी,
मैं वार वार वलिहारी ॥

विजौलियाँ में आनन्द आया है, ठाणाचार गुण भाया है,
है शिष्य आप श्री ईश्वर मुनि के इसवारी
मैं वार वार वलिहारी ॥

धन्य तपस्वीजी महाराज सभा में आज तप किया भारी,
मैं वार वार वलिहारी ॥

श्री संघका भाग्य सवाया है, अति आनन्द यहां पर आया है,
भादव कृष्ण पक्ष दसक का पुर अपकारी
मैं वार वार वलिहारी ॥

धन्य तपस्वीजी महाराज सभा मैं आज तप किया भारी,
मैं वार वार वलिहारी ॥

सब भाइयों से यह कहना है, दर्शन करने को आना है, सेवा करने की करलो अब तैयारी, कथ कन्हैयालाल ने अपनी अर्ज मुजारी, मैं वार वार वलिहारी ॥

धन्य तपस्वीजी महाराज सभा मैं आज तप किया भारी
मैं वार वार वलिहारी ॥

मा अति आनन्द यहां पायाजी

❀ भजन ❀

मा अति आनन्द यहां पायाजी
किया चौमासा नगर बिजौलियां आनन्द आयाजी
नाम आपका श्रेयांस मुनिजी, सर्व आप अधिकारी
समझा है सरल आपको, समझे जनता सारी
मा अति आनन्द यहां आयाजी ॥

श्री संघ की विनती पर पूरा ध्यान लगाया
धर्म ध्यान का ठाठ लगाया, हो रहा मनका चाया
मा अति आनन्द यहां पायाजी ॥

शिष्य मण्डली संघ आपके सारा ही गुणवान
चार ठाणा से किया चौमासा, सुन लीजो पर ध्यान
मा अति आनन्द पायाजी ॥

घोर तपस्वी श्रेयांस मुनिजी कहां तक महिमा गावे
इकतालिस दिनका पुर मनाये, गुण गाये नहीं जाये
मा अति आनन्द यहां पायाजी ॥

गुरुवर बिराजे शहर बिजौलियां, दर्शन करवा आईजो
मा अति आनन्द यहां पायाजी ॥

किया चौमासा नगर बिजौलियां आनन्द आयाजी
मा अति आनन्द यहां पायाजी ॥

❀ श्री १०८ श्री श्रेयांससागरजी मुनि महाराज का ❀

प्रवचन नं० १

श्रवण संस्कृति के अनुसार के अनुसार भगवान ऋषभदेव का जन्म ऐसे समय में हुआ, जब लोग कृषि करना नहीं जानते थे, केवल कल्प वृक्षों पर ही निर्भर थे। जब कल्पवृक्ष लुप्त होने लगे, जनता भूख से तड़पने लगी, तब भगवान ऋषभदेव ने जनता को कृषिका तरीका समझाया और गन्ना खाना बतलाया। इसलिये इन्हें इक्ष्वाकु वंशी कहते हैं। उनका संदेश था कि कृषि करो। आपने इन्द्रिय और मनकी दुर्वलता पर विजय पाने की शिक्षा दी। आपने कैलाश पर्वत पर मोक्ष प्राप्त किया। भारतवर्ष हमेशा ही धर्मभूमि, कर्म भूमि और पर्वभूमि रही है जब जब यहां के मनुष्य किसी लौकिक अथवा लोक्कोत्तर इल्हास का अवसर पाते है, तब उसे पर्वोत्सव का रूप देकर सामूहिक आनन्द मनाते हैं।

जो भी पर्व आते हैं, सब एकताके सूत्र में बांधने के लिए आते हैं। उनमें दीपावली, पर्यूषण राखी और सोलह कारण पर्व मुख्य हैं। ये सब भारतीय परम्परा के और जैन संस्कृति के द्योतक हैं। दीपावली पर्व भगवान महावीर के निर्वाण होने के उपलक्ष में मनाते हैं, भगवान महावीर ने मोक्ष जाने से पूर्व भव्य जीवों को उपदेश दिये हैं।

जो निम्न प्रकार है—

१—सच्ची श्रद्धा, सच्चा ज्ञान और सच्चा चारित्र ही मोक्ष मार्ग है।
२—मानव के लिए मानव ही आदर्श हो सकता है।
३—समता और समानता को पहिचान ने का ज्ञान ही सच्चा ज्ञान है।
४—धर्म वह है, जिसमें विषमता मिटे और समता जागे।
५—भागों में आसक्त होना वुरा है।
६—भौतिक समृद्धि का मूलाधार आत्म ज्ञान है।
७—अहिंसा परमो धर्मः।
८—जीवो और जीने दो।
९—किसी से लड़ना हो तो विषैली मनोवृत्ति से लड़ना न चाहिये।
१०—पाप से घृणा करो पापी से नहीं।
११—जो व्यवहार तुम दूसरों से नहीं चाहते हो उसे तुम दूसरों के साथ न करो।

१२—सदैव अनाथों, पीड़ितों, निर्धनों तथा असहायता की सहायता करो।
१३—पशु भी मानव जैसा प्राणी है। वह भी मानव की तरह जीना चाहता है।

भगवान महावीर ने संयम के बारे में कहा है अहिंसादि पंच व्रत धारण करना, इर्यापिथ आदि पांच समितियों का पालन करना, क्रोधादि कषायों का निग्रह करना, मनोयोग आदि तीनों योगों को रोकना, पांचों इन्द्रियों पर विजय करना सो संयम है। जो इसका पालन नहीं करता अपना भव नहीं सुधार सकता।

घट पट में भगवान बसे, पर मोह का पाट लगाया है।
गुरु बोध से जिसने खोजलिया, उसने शुभ दर्शन पाया है।

आत्मा के अस्तित्व को स्वीकार करने के बाद उसके हित की ओर ध्यान देना मानव का कर्तव्य है। यह जीव कर्म भार को लेकर संसार में भ्रमण करता है। अनादि काल से इसकी स्थिति यही है। लेकिन खाली नग्न होने से ही कोई साधु श्रेष्ठ नहीं हो सकता। अन्तरंग से विकारों को निकाल पर ही नग्न अवस्था धारण करने से कुछ लाभ हो सकता है।

आत्म साधना के लिए सर्वोत्कृष्ट मार्ग दिगम्बरत्व अवस्था में ही है। ऐसा सबही तीर्थंकरों ने, ऋषि-महर्षियों ने कहा है।

जिन महान पुरुषों ने अपने जीवन में विषय वासना तथा कषायों को मन्द करने का अभ्यास किया है, उसका दिव्य फल समाधि मरण उनको ही मिलता है।

भगवान महावीर का दिव्य संदेश

प्रवचन नं० २

आज से लगभग २५७५ वर्ष पूर्व भारत में धर्म के नाम पर पशुओं की बलि दी जाती थी और नाना तरह के अत्याचार हो रहे थे, और इस हिंसा में मोक्ष की व्याख्याकर भोले भोले लोगों को पाखन्डी लोग फँसाते थे । उंच नीच जाति-पांति के भेद भाव से मानव में हीनाधिक की भावना उत्पन्न हो गई थी । आपस में प्रेम नहीं था । चारों ओर अशान्ति का वातावरण फैल चुका था । जब बहुत पाप बढ़ जाता है, तब किसी अवतारी यहां पुरुष का जन्म होता है ।

दुःखी प्राणियों का दुःख दूर करने के लिए और अत्यन्त उपयोगी मार्ग बताने के लिए बिहार प्रांत में कुंडलपुरेक राजा सिद्धार्थ के घर उनकी सहधर्मी भार्या त्रिशला के गर्भ से चैत्र शुक्ला त्रयोदशी को भगवान महावीर का जन्म हुआ । इन्द्रादि देवोंने जन्माभिषेक महोत्सव मनाया और उनका नाम वर्धमान रखा ।

तीस वर्ष की अवस्था में भगवान महावीर को वैराग्य प्राप्त हो गया और वन में जाकर अपने हाथों से केशलोंच करके सब परिग्रह त्याग करके जैनेश्वरी दीक्षा ग्रहण कर ली । घोर तपश्चरण में १२ वर्ष बीत जाने पर भगवान को दिव्य केवलज्ञान प्रगट हो गया । देवों के द्वारा समवशरण की रचना हुई । भगवान महावीर के समवशरण में बारह सभाये थी । राजगृही नगर के विपुलाचल पर्वत पर प्रथम देशना हुई । भगवान की दिव्य ध्वनि सात सौ अठारह भाषाओं में हुई । बिना किसी भेद भाव से सभी भगवान का धर्मोपदेश सुनते थे । भगवान उपदेश से अनेक भव्य जीवों का कल्याण हुआ ।

१—स्वयं जियो और दूसरों को जीने दो । प्रत्येक प्राणी को अपने समान समझकर मैत्री भाव रखने का नाम अहिंसा है ।
२—दूसरों के प्राण घातक, अप्रिय, कठोर एवं निंद्य वचन नहीं बोलना गृहस्थों का सत्याणु व्रत है ।
३—दूसरों की वस्तु को बिना पूछे ग्रहण नहीं करना एवं किसी की भूली हुई या रखी हुई वस्तु को नहीं उठाना अर्थात् पर धन को ढेले के समान समझना अचौर्याणुवत है ।

४—अपनी स्त्री के अतिरिक्त अन्य संसार में जितनी भी स्त्रियां हैं उन्हें माता के समान एवम् बहिन के समान समझना गृहस्थों का ब्रह्मचर्याणु व्रत है।

५—मनुष्य की अनन्त इच्छाएं हैं। परन्तु उन्हें कम कर संग्रह प्रवृत्ति को नहीं बढ़ाना एवं दूसरों की सुख सुविधा का भी ध्यान रखना सच्चा अपरिग्रह है।

६—अपनी अपेक्षा से प्रत्येक वस्तु अनेक धर्म वाली है। स्याद्वाद के द्वारा उन अनेकों धर्मों का समन्वय करना अनेकान्त है। आप जो कुछ कहते हैं वह सत्य है, पर जो दूसरा कुछ कहता है वह भी सत्य हो सकता है। अनेकांत सत्य की कसौटी है।

७—इस जीवके साथ कर्मों का सम्बन्ध है। जो जैसा कर्म करेगा उसे वैसा ही फल प्राप्त होगा कर्मों के उदय से जीव सुख दुख आदि फल को भोगता है यह जीव कर्मों का बंधन करता है। और यही जीव कर्मों की निर्जरा कर मोक्ष प्राप्त कर सकता है। सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान एवं सम्यक्चारित्र मार्ग का उपक्रम मोक्ष पाता है।

इस प्रकार भगवान महावीर ने भव्य जीवों को दिव्य संदेश दिया है। इस संदेश के मुताबिक हम कार्यरत होवेंगे, तो हमें मोक्ष पाना कोई कठिनाई नहीं।

भगवान महावीर ने कहा है—

"हरेक प्राणी को अपनी जिन्दगी प्यारी है। हरेक को सुख अच्छा और दुःख बुरा लगता है। ऐसा होने से हिंसा न करो।"

कबीरदास ने भी अहिंसा की ओर लक्ष्य करके बताया है—

"दया राखी धरम को पाल जगसु रहे उदासी,
अपना-सा जीव सबको जाने, ताहि मिलै अविनाशी।
बकरी पाती खात है, ताकि खींची खाल,
जो बकरी को खात है, ताको कौन हवाल।"

तुलसीदासजी ने भी दया, जो अहिंसा का एक रूप है, के बारे में मार्मिक प्रकाश डालते हुए कहा हैं—

"दया धर्म का मूल है, पाप मूल अभिमान।
तुलसी दया न छोड़िये, जब लग घटमें प्राण॥"

राष्ट्र विधायक महात्मा गांधी ने भी मार्मिक बात बताते हुए कहा है—

"शाकाहार और अहिंसात्मक भावनाएँ ही संयम को बढ़ावा देती है। संयम-शक्ति लाखों शस्त्रों के अधिक शक्तिशाली है।"

गुरु नानकजी ने भी यही तो कहा है कि अगर सुखी होना है, तो मांस-भक्षण न करो।

'कुराने शरीफ' के प्रारम्भ में भी दया के बारे में ऊंची बात बताते हुए लिखा है—

"सब प्राणियों पर दया करो (Be kind to all creatures.) खुदा का विशेषण रहीम अर्थात् सब पर रहम करने वाला है। अर्थात् हे दयालु परमात्मा, तू सभी प्राणियों पर दया की दृष्टि रख।"

दया-अवतार ईसामसीह ने एक प्रसंग विशेष पर अपने शिष्यों से बताया कि जीव-हिंसा और मांस-भक्षण से सदैव दूर रहना। हमेशा ही शाकाहारी भोजन करना। किसी भी प्राणी की हिंसा मत करो। "Thou shalt not kill. Be merciful as your father is merciful." जब हमारे पिता दयावान हैं, तब हम भी दयावान बनें।"

ईसाइयों के महान सन्त सेंट फ्रांसिसी ने अपने सुलझे विचारों को इस प्रकार व्यक्त किया है—

"संसार में छोटे बड़े जीव सभी बराबर हैं। सभी सुख-दुःख महसूस करते हैं। सभी जीना चाहते हैं। अतः किसीको भी दुःख मत दो।"

बादशाह अकबर ने अपने राज्य में जीव-हिंसा बन्द कराने के फरमान जारी किये थे, और उन्होंने स्वयं भी मांस-भक्षण का त्याग कर दिया था।

❀ ❀

कुछ अन्य बातें—

शराब से हार्ट फेइल, कैंसर, टी. बी. जैसे असाध्य रोग पैदा हो जाते हैं। शराब का पान करना एक सामाजिक अपराध है।

सिगरेट-पान से फेफड़ों में कैंसर होता है। उसके धुएँ से चिकना तारकोल व निकोटीन फेफड़ों में जमा होने से हो कैंसर का दुःसाध्य रोग उत्पन्न होता है।

अण्डों का उपयोग भी हाई-ब्लड-प्रेसर, पत्थरी आदि रोग पैदा करने में सहायक है।

मांस-भक्षण से पाचन शक्ति नष्ट होती है। मांस एक तेजाबयुक्त भोजन है। मौत के डर एवं दुःख के कारण पशुओं के मांस अधिक तेजाबयुक्त बनते हैं। ऐसे विषैले मांस को मत खाओ। अपने पेट को जानवरों का कब्रस्तान मत बनाओ।

कृष्णजी ने गीता में उत्तम आहार के बारे में इस प्रकार प्रकाश डाला है—

"आयु सत्त्वबलमारोग्य सुख प्रीति विवर्धनाः।
रस्त्याः स्निग्धाः स्थिरा हृधा अहाराः सात्त्विक प्रियाः॥

सदैव शाकाहार करो। यह सब प्रकार से उत्तम है—आयु, बुद्धि, वल, आरोग्य, सुख एवं प्रीति को बनाने वाला है। रसीले, चिकने, मधुर तथा मनमोहक पदार्थों का सेवन करो। मांस खाने वाले और शराव पीने वालों के हाथ का भी खाने-पीने में महान दोष है।

गो आदि पशुओं के विनाश से राजा और प्रजा दोनों का विनाश होता है।

(दि० १५-१०-७६, केशलोंच के शुभावसर पर दिये गये व्याख्यान से)

आपने इस बात पर प्रकाश डालते हुए कहा कि कषाय चार हैं : क्रोध, मान, माया एवं लोभ। संसार परिभ्रमण करने का कारण कषाय ही है, इसलिए उसे छोड़िये।

आपनें कहा, "आत्म कल्याण के लिए ही मनुष्य पर्याय मिली है, इस लिए मनुष्य पर्याय का अधिक से अधिकतर एवं अधिकतर से अधिकतम उपयोग आत्म-कल्याण के लिए ही करना चाहिए।"

सम्यक् दर्शन ज्ञान चारित्र के बारे में बतलाते हुए आपने कहा कि उस रत्नत्रय के पालन से ही संसार-बन्धन टूट जायेंगे, मिथ्यात्व सेवन से संसार की जड़ नहीं कटेगी। संसार सागर से छूटने के लिए रत्नत्रय धर्म पालने का पुरुषार्थ कीजिए।

आपने देह की नश्वरता के सम्बन्ध में मार्मिक उद्गार व्यक्त करते हुए कहा कि आत्मा रूपी चन्दन चमड़े रूपी शरीर में पड़ी हुई है। हमारा ध्यान चमड़े पर जाता है, उसकी सजावट में हमारा मूल्यवान समय यों ही कट जाता है। हम आत्मा की ओर निगाह डालें और उसकी उन्नति के लिए भरसक प्रयत्न करें।

भोग-उपभोग के बारे में बोलते समय आपने इस बात पर जोर दिया कि मनुष्य भोगोपभोग में इतना रत होता जा रहा है कि उसे आत्मतत्व की रूची ही नहीं होती। मनुष्य को याद रखना चाहिए कि भोगोपभोग की वस्तुएँ उसकी अपनी नहीं हैं, उन्हें छोड़कर एक-न-एक दिन जाना ही पड़ेगा। आत्मकल्याण के पथ पर अग्रसर होने के लिए यही आवश्यक है कि भोगोप भोग की सामग्री से ममत्वभाव छोड़ने का पुरुषार्थ करते रहें।

आपने अपने बहुमूल्य वक्तव्य में यह भी कहा कि ब्रह्मचर्यव्रत धारण करने से अनगिनत हिंसा-पाप-कार्य से बच जायेंगे, सच्चे गुरुने आत्महितार्थ जो मार्ग अपनाया है, उसे अपनाने से ही कल्याण होगा, बिना संयम आत्मा का उद्धार नहीं हो सकेगा, कुदेवों को नमस्कार न करके वीतरागी देवों को ही नमन-नमस्कार करें, सांसारिक वासनाओं का त्याग करें, सत्यवान, शीलवान एवं गुणवान बने इत्यादि।

आपने एकत्रित जनसमूह को लक्ष्य करते हुए कहा कि अगर उन्नति के शृंग पर चढ़ना है तो आप कभी भी झगड़ों में मत फँसे, शत्रुत्व के भाव न रखें, संगठन बनाये रखें, प्रेम से मिल जुलकर रहें।

बिजौलियां दि० जैन समाज की धर्म भक्ति की सराहना करते हुए आपने कहा कि ठीक इसी ही प्रकार यहां की समाज धर्मभक्ति में लवलीन रहकर आत्मकल्याण के अपने लक्ष्य को सिद्ध करती रहे।

आपकी प्रवचन शैली इतनी रोचक और धारावाहिक थी, जिसके कारण श्रोतागण अध्यात्म ज्ञान सागर में बिना डूबे न रह पाया।

(छोटी बिजौलियां की ओर विहार प्रस्थान करते समय पू० १०८ अध्यात्म योगीराज श्री श्रेयांससागरजी महाराज ने जो व्याख्यान दिया उसके कुछ प्रेरक अंश।)

८ नवम्बर, '७६ —बाबूलाल चूनीलाल गांधी ईडर (गुजरात)

मोक्ष शास्त्र के कर्ता श्री उमा स्वामी का

संक्षिप्त जीवन परिचय

आचार्य प्रवर उमा स्वामी का नाम 'तत्त्वाथ सूत्र' नामक ग्रन्थ के कारण अजर अमर है । यह ग्रन्थ जैनों के सब शास्त्रों का वर्णन इसमें बतलाया है। और खूबी यह है कि संस्कृत भाषा में सबसे पहला यही ग्रन्थ है। सचमुच आचार्य उमा स्वामी जिने ही जैन सिद्धांतों को प्राकृत से संस्कृत भाषा में प्रकट करने का श्री गणेश किया था और फिर तो इस भाषा में अनेकानेक जैना चार्यों ने ग्रन्थ रचनाएँ की हैं।

श्री उमा स्वामी की मान्यता जैनों के दोनों सम्प्रदायों में श्रद्धा की दृष्टि से देखा जाता है।

किन्तु ऐसे प्रख्यात आचार्य के जीवन की घटनाओं का ठीक हाल ज्ञात नहीं है। श्वेतांबरीय शास्त्रों से यह जरूर विदित है कि महानुभाव ने यह शब्द लिखा है। माता ने उत्तर कि एक महानुभाव निर्ग्रन्थाचार्य ने यह बताया है कि 'दर्शन, ज्ञान, चारित्र के ठिकाणे पर 'सम्यग्दर्शन ज्ञान चारित्राणि मोक्ष मार्गः ऐसा लिख दिया। इस पर वह श्रावक गिरी और अरण्य को ढूँढता हुआ उनके आश्रम में पहुँचा और भक्ति भाव से नम्रीभूत होकर उक्त मुनिराज से पूछने लगा कि आत्मा का हित क्या है। मुनिराज ने कहा "मोक्ष" है। इस पर मोक्ष का स्वरूप और उसकी प्राप्ति का उपाय पूछा गया जिसके उत्तर रूप में ही इस ग्रन्थ का अवतार हुआ है। इसी कारण इस ग्रन्थ का अवतार हुआ है। इसी कारण इस ग्रन्थ का नाम 'मोक्ष शास्त्र' भी है । कैसा अच्छा वह समय था, जब दिगम्बर और श्वेताम्बर आपस में प्रेम से रहते हुए धर्म प्रभावना के कार्य कर रहे थे । श्वेताम्बर उपासक सिद्धय्य के लिए एक निर्ग्रन्थाचार्य का शास्त्र रचना करना इसी वात्सल्य भाव का द्योतक है। यह निर्ग्रन्थाचार्य 'उमा स्वामी' ही थे। धर्म और उसके लिए उनने क्या क्या किया यह कुछ ज्ञात नहीं होता। इस कारण इन महान आचार्य के विषय में इस संक्षिप्त वृत्तान्त से ही संतोष धारण करना पड़ता है। दिगम्बर सम्प्रदाय में वह 'श्रुतिमधुर' उमा स्वामी के नाम से प्रसिद्ध हैं।

मोक्ष शास्त्रं

मोक्षमार्गस्य नेतारं भेत्तारं कर्मभूभृतां ।
ज्ञातारं विश्वतत्त्वानां वन्दे तद्गुणलब्धये ॥

त्रैकाल्यं द्रव्यषट्कं नवपदसहितं जीवषट्कायलेश्याः ।
पंचान्ये चास्तिकाया व्रतसमितिगतिज्ञानचारित्रभेदाः ॥

इत्येतन्मोक्षमूलं त्रिभुवनमहितैः प्रोक्तमर्हद्भिरीशैः ।
प्रत्येति श्रद्दधाति स्पृशति च मतिमान् यः स वै शुद्धदृष्टिः ॥१॥

सिद्धे जयप्पसिद्धे, चउविहाराहणाफलं पत्ते ।
वंदित्ता अरहंते, वोच्छं आराहणा कमसो ॥२॥

उज्जोवणमुज्जवणं णिव्वाहणं साहणं च णिच्छरणं ।
दंसणणाणचरित्तं तवाणमाराहणा भणिया ॥३॥

सम्यग्दर्शनज्ञानचारित्राणि मोक्षमार्गः ॥१॥ तत्त्वार्थश्रद्धानं सम्यगदर्शनं॥२॥ तन्निसर्गादधिगमाद्वा॥३॥ जीवाजीवास्रवबंधसंवरनिर्जरामोक्षास्तत्त्वं ॥४॥ नामस्थापनाद्रव्यभावतस्तन्न्यासः ॥५॥ प्रमाणनयैरधिगमः ॥६॥ निर्देशस्वामित्वसाधनाधिकरणास्थितिविधानतः ॥७॥ सत्संख्याक्षेत्रस्पर्शनकालांतरभावाल्पबहुत्वैश्च ॥८॥ मतिश्रुतावधिमनःपर्ययकेवलानि ज्ञानं ॥९॥ तत्प्रमाणे ॥१०॥ आद्ये परोक्षं ॥११॥ प्रत्यक्षमन्यत् ॥१२॥ मतिः स्मृतिः संज्ञा चिंताभिनिवोध इत्यनर्थांतरं ॥१३॥ तदिंद्रियानिंद्रियनिमित्तं ॥१४॥ अवग्रहेहावायधारणाः ॥१५॥ बहुबहुविधक्षिप्रानिःसृतानुक्तध्रुवाणां सेतराणां ॥१६॥ अर्थस्य ॥१७॥ व्यंजनस्यावग्रहः ॥१८॥ न चक्षुरनिंद्रियाभ्यां ॥१९॥ श्रुतं मतिपूर्व द्व्यनेकद्वादशभेदं ॥२०॥ भवप्रत्ययोवधिर्देवनारकाणां ॥२१॥ क्षयोपशमनिमित्तः षड्विकल्पः शेषाणां ॥२२॥ ऋजुविपुलमती मनःपर्ययः ॥२३॥ विशुद्ध्यप्रतिपाताभ्यां तद्विशेषः ॥२४॥ विशुद्धिक्षेत्रस्वामिविषयेभ्योऽवधिमनःपर्यययोः ॥२५॥ मतिश्रुतयोर्निबंधो द्रव्येष्वसर्वपर्यायेषु ॥२६॥ रूपिष्ववधेः ॥२७॥ तदनंतभागे मनः पर्ययस्य ॥२८॥ सवद्रव्यपर्यायेषु केवलस्य ॥२९॥ एकादीनि भाज्यानि युगपदेकस्मिन्नाचतुर्भ्यः ॥३०॥ मतिश्रुतावधयो विपर्ययश्च ॥३१॥ सदसतोरविशेषाद्यदृच्छोपलब्धेरुन्मत्तवत् ॥३२॥ नैगमसंग्रहव्यवहारर्जुसूत्रशब्दसमभिरूढैवंभूता नयाः ॥३३॥

इति तत्वार्थाधिगमे मोक्षशास्त्रे प्रथमोऽध्यायः ॥१॥

औपशमिकक्षायिकौ भावौ मिश्रश्च जीवस्य खतत्त्वमौदयिकपारिणामिकौ च ॥१॥ द्विनवाष्टादशैकविंशतित्रिभेदा यथाक्रमं ॥२॥ सम्यक्त्वचारित्रे ॥३॥ ज्ञानदर्शनदानलाभभोगोपभोगवीर्याणि च ॥४॥ ज्ञानाज्ञानदर्शनलब्ध्यश्चतुस्त्रित्रिपंचभेदाः सम्यक्त्वचारित्रसंयमासंयमाश्च ॥५॥ गतिकषायलिंगमिथ्यादर्शनाज्ञानासंयतासिद्धलेश्याश्चतुश्चतुस्त्र्येकैकैकैकषड्भेदाः ॥६॥ जीवभव्याभव्यत्वानि च ॥७॥ उपयोगो लक्षणं ॥८॥ स द्विविधोऽष्टचतुर्भेदः ॥९॥ संसारिणो मुक्ताश्च ॥१०॥ समनस्कामनस्काः ॥११॥ संसारिणस्त्रसस्थावराः ॥१२॥ पृथिव्यप्तेजोवायुवनस्पतयः स्थावराः ॥१३॥ द्वींद्रियादयस्त्रसाः ॥१४॥ पंचेंद्रियाणि ॥१५॥ द्विविधानि ॥१६॥ निर्वृत्त्युपकरणे द्रव्येंद्रियं ॥१७॥ लब्ध्युपयोगो भावेंद्रियं ॥१८॥ स्पर्शनरसनघ्राणचक्षुः श्रोत्राणि ॥१९॥ स्पर्शरसगंधवर्णशब्दास्तदर्थाः ॥२०॥ श्रुतमनिंद्रियस्य ॥२१॥ वनस्पत्यंतानामेकं ॥२२॥ कृमिपिपीलिकाभ्रमरमनुष्यादीनामेकैकवृद्धानि ॥२३॥ संज्ञिनः समनस्काः ॥२४॥ विग्रहगतौ कर्मयोगः ॥२५॥ अनुश्रेणि गतिः ॥२६॥ अविग्रहा जीवस्य ॥२७॥ विग्रहवती च संसारिणः प्राक्चतुर्भ्यः ॥२८॥ एकसमयाऽविग्रहा ॥२९॥ एकं द्वौ त्रीन्वानाहारकः ॥३०॥ संमूर्छनगर्भोपपादा जन्म ॥३१॥ सचित्तशीतसंवृताः सेतरा मिश्राश्चैकशस्तद्योनयः ॥३२॥ जरायुजांडजपोतानां गर्भः ॥३३॥ देवनारकाणामुपपादः ॥३४॥ शेषाणां सम्मूर्च्छनं ॥३५॥ औदारिकवैक्रियिकाहारकतैजसकार्मणानि शरीराणि ॥३६॥ परं परं सूक्ष्मं ॥३७॥ प्रदेशतोऽसंख्येयगुणं प्राक्तैजसात् ॥३८॥ अनंतगुणे परे ॥३९॥ अप्रतीघाते ॥४०॥ अनादिसंबंधे च ॥४१॥ सर्वस्य ॥४२॥ तदादीनि भाज्यानि युगपदेकस्मिन्नाचतुर्भ्यः ॥४३॥ निरुपभोगमंत्यं ॥४४॥ गर्भसंमूर्च्छनजमाद्यं ॥४५॥ औपपादिकं वैक्रियिकं ॥४६॥ लब्धिप्रत्ययं च ॥४७॥ तैजसमपि ॥४८॥ शुभं विशुद्धमव्याघाति चाहारकं प्रमत्तसंयतस्यैव ॥४९॥ नारकसंमूर्च्छिनो नपुंसकानि ॥५०॥ न देवाः ॥५१॥ शेषास्त्रिवेदाः ॥५२॥ औपपादिकचरमोत्तमदेहाऽसंख्येयवर्षायुषोऽनपवर्त्यायुषः ॥५३॥

इति तत्वार्थाधिगमे मोक्षशास्त्रो द्वितीयोऽध्यायः ॥२॥

रत्नशर्करावालुकापंकधूमतमोमहातमः प्रभा भूमयो घनांबुवाताकाशप्रतिष्ठाः सप्ताऽधोऽधः ॥१॥ तासु त्रिंशत्पंचविंशतिपंचदशदशत्रिपंचोनैकनरकशतसहस्राणि पंच चैव यथाक्रमं ॥२॥ नारका नित्याऽशुभतरलेश्यापरिणामदेहवेदनाविक्रियाः ॥३॥ परस्परोदीरितदुःखाः ॥४॥ संक्लिष्टाऽसुरोदीरितदुःखाश्च प्राक् चतुर्थ्याः ॥५॥ तेष्वेकत्रिसप्तदशसप्तदशद्वाविंशतित्रयस्त्रिंशत्सागरोपमा सत्वानां परा स्थितिः ॥६॥ जम्बूद्वीपलवणोदादयः शुभनामानो द्वीपस-

मुद्राः ॥७॥ द्विर्द्विर्विष्कंभाः पूर्वपूर्वपरिक्षेपिणो वलयाकृतयः ॥८॥ तन्मध्येमेरुनाभिर्वृत्तो योजनशतसहस्त्रविष्कंभो जंबूद्वीपः ॥९॥ भरतहैमवतहरिविदेहरम्यकहैरण्यवतैरावतवर्षाः क्षेत्राणि ॥१०॥ तद्विभाजिनः पूर्वापरायता हिमवन्महाहिमवन्निषधनीलरुक्मिशिखरिणो वर्षधरपर्वताः ॥११॥ हेमार्जुनतपनीयवैडूर्यरजतहेममयाः ॥१२॥ मणिविचित्रपार्श्वा उपरिमूले च तुल्यविस्ताराः ॥१३॥ पद्ममहापद्मतिगिंछकेशरिमहापुंडरीकपुंडरीका ह्रदास्तेषामुपरि ॥१४॥ प्रथमो योजनसहस्रायामस्तदर्द्धविष्कंभो ह्रदः ॥१५॥ दशयोजनावगाहः ॥१६॥ तन्मध्ये योजनं पुष्करं ॥१७॥ तद्द्विगुणद्विगुणा ह्रदाः पुष्कराणि च॥१८॥तन्निवासिन्यो देव्यः श्री ह्रीधृतिकीर्तिबुद्धिलक्ष्म्यः पल्योपमस्थितयः ससामानिकपरिषत्काः ॥१९॥ गंगासिंधुरोहिद्रोहितास्याहरिद्धरिकांतासीतासीतोदानारीनरकातासुवर्णरूप्यकूलारक्तार सरितस्तन्मध्यगाः ॥२०॥ द्वयोर्द्वयोः पूर्वापूर्वगाः ॥२१॥ शेषास्त्वपरगाः ॥२२॥ चतुदर्शनदीसहस्रपरिवृता गंगासिंध्वादयो नद्यः ॥२३॥ भरतः षड्विंशतिपंचयोजनशतविस्तारः षट्चैकोनविंशतिभागा योजनस्य ॥२४॥ तद्द्विगुणद्विगुणविस्तारा वर्षधरवर्षा विदेहांताः ॥२५॥ उत्तरा दक्षिणतुल्याः ॥२६॥ भरतैरावतयोर्वृद्धिह्रासौ षट्समयाभ्यामुत्सर्पिण्यवसर्पिणीभ्यां ॥२७॥ ताभ्यामपरा भूमयोऽवस्थिताः ॥२८॥ एकद्वित्रिपल्योपमस्थितयो हैमवतकहारिवर्षकदैवकुरवकाः ॥२९॥ तथोत्तराः ॥३०॥ विदेहेषु संख्येयकालाः ॥३१॥ भरतस्य विष्कंभो जंबूद्वीपस्य नवतिशतभागः ॥३२॥ द्विर्धातकीखंडे ॥३३॥ पुष्करार्द्धे च ॥३४॥ प्राङ्मानुषोत्तरान्मनुष्याः ॥३५॥ आर्याम्लेच्छाश्च ॥३६॥ भरतैरावतविदेहाः कर्मभूमयोऽन्यत्र देवकुरूत्तारकुरुभ्यः ॥३७॥ नृस्थिती परावरे त्रिपल्योपमांतर्मुहूर्ते ॥३८॥ तिर्यग्योनिजानां च ॥३९॥

इति तत्वार्थाधिगमे मोक्षशास्त्रे तृतीयोऽध्यायः ॥३॥

देवाश्चतुर्णिकायाः ॥१॥ आदितस्त्रिषु पीतांतलेश्याः ॥२॥ दशाष्टपंचद्वादशविकल्पाः कल्पोपपन्नपर्यंताः ॥३॥ इंद्रसामानिकत्रायस्त्रिंशत्पारिषदात्मरक्षलोकपालानीकप्रकीर्णकाभियोग्यकिल्विषिकाश्चैकशः ॥४॥ त्रायस्त्रिंशल्लोकपालवर्ज्या व्यंतरज्योतिष्काः ॥५॥ पूर्वयोर्द्वीन्द्राः ॥६॥ कायप्रवीचारा आ ऐशानात् ॥७॥ शेषाः स्पर्शरूपशब्दमनः प्रवीचाराः ॥८॥ परेऽप्रवीचाराः ॥९॥ भवनवासिनोसुरनागविद्युत्सु पर्णाग्निवातस्तनितोदधिद्वीपदिक्कुमाराः ॥१०॥ व्यंतराः किन्नरकिंपुरुषमहोरगगंधर्वयक्षराक्षसभूतपिशाचाः ॥११॥ ज्योतिष्काः सूर्याचन्द्रमसौ ग्रहनक्षत्रप्रकीर्णकतारकाश्च ॥१२॥ मेरुप्रदक्षिणा नित्यगतयो नृलोके ॥१३॥ तत्कृतः कालविभागः ॥१४॥ वहिरवस्थिताः ॥१५॥ वैमानिकाः ॥१६॥ कल्पापपन्नाः कल्पातीताश्च ॥१७॥ उपर्युपरि ॥१८॥ सौधर्मैशानसानत्कुमारमाहेन्द्रब्रह्मब्रह्मोत्तरलांतवकापिष्ठशुक्रमहाशुक्रशतारसहस्रारेष्वानतप्राण-

तयोरारणाच्युतयोर्नवसु ग्रैवेयकेषु विजयवैजयंतजयंतापराजितेषु सर्वार्थसिद्धौ च ॥१९॥ स्थितिप्रभावसुखद्युतिलेश्या विशुद्धींद्रियावधिविषयतोधिकाः ॥२०॥ गतिशरीरपरिग्रहाभिमानतो हीनाः ॥२१॥ पीतपद्मशुक्ललेश्या द्वित्रिशेषेषु ॥२२॥ प्राग्ग्रैवेयकेभ्यः कल्पाः ॥२३॥ ब्रह्मलोकालया लौकांतिकाः ॥२४॥ सारस्वतादित्यवह्न्यरुणगर्दतोयतुषिताव्याबाधारिष्टाश्च ॥२५॥ विजयादिषु द्विचरमाः ॥२६॥ औपपादिकमनुष्येभ्यः शेषास्तिर्यग्योनयः ॥२७॥ स्थितिरसुर-नागसुपर्णद्वीपशेषाणां सागरो पम-त्रिपल्योपमार्धहीनमिताः ॥२८॥ सौधर्मैशान-योसागरोपमऽधिके ॥२९॥ सानत्कुमारमाहेन्द्रयोः सप्त ॥३०॥ त्रिसप्तनवैकादश-त्रयोदशपंचदशभिरधिकानि तु ॥३१॥ आरणाच्युतादूर्ध्वमेकैकेन नवसु ग्रैवेय-केषु विजयादिषु सर्वार्थसिद्धौ च ॥३२॥ अपरा पल्योपममधिकं ॥३३॥ परतः परतः पूर्वापूर्वानंतराः ॥३४॥ नारकाणां च द्वितीयादिषु ॥३५॥ दशवर्षसह-स्राणि प्रथमायां ॥३६॥ भवनेषु च ॥३७॥ व्यंतराणां च ॥३८॥ परापल्योपम-मधिकं ॥३९॥ ज्योतिष्काणां च ॥४०॥ तदष्टभागोऽपरा ॥४१॥ लौकांतिका-नामष्टौ सागरोपमाणि सर्वेषां ॥४२॥

इति तत्वार्थाधिगमे मोक्षशास्त्रे चतुर्थोऽध्यायः ॥४॥

अजीवकाया धर्माधर्माकाशपुद्गलाः ॥१॥ द्रव्याणि ॥२॥ जीवाश्च ॥३॥ नित्यावस्थितान्यरूपाणि ॥४॥ रूपिणः पुद्गलाः ॥५॥ आ आकाशादेकद्रव्याणि ॥६॥ निष्क्रियाणि च ॥७॥ असंख्येयाः प्रदेशाधर्माधर्मैकजीवानां ॥८॥ आका-शस्यानंताः ॥९॥ संख्येयासंख्येयाश्च पुद्गलानां ॥१०॥ नाणोः ॥११॥ लोका-काशेऽवगाह ॥१२॥ धर्माधर्मयोः कृत्स्ने ॥१३॥ एकप्रदेशादिभाज्यः पुद्गलानां ॥१४॥ असंख्येयभागादिषु जीवानां ॥१५॥ प्रदेश संहारविसर्पाभ्यां प्रदीपवत् ॥१६॥ गतिस्थित्युपग्रहौ धर्माधर्मयोरुपकारः ॥१७॥ आकाशस्यावगाहः ॥१८॥ शरीरवाङ्मनः प्राणापानाः पुद्गलानां ॥१९॥ सुखदुःखजीवितमरणोपग्रहाश्च ॥२०॥ परस्परोपग्रहो जीवानां ॥२१॥ वर्तनापरिणामक्रियापरत्वापरत्वे च कालस्य ॥२२॥ स्पर्शरसगंधवर्णवंतः पुद्गलाः ॥२३॥ शब्दबंधसौक्ष्म्यस्थौल्य-संस्थानभेदतमश्छायातपोद्योतवंतश्च ॥२४॥अणवस्कंधाश्च ॥२५॥ भेदसंघातेभ्य उत्पद्यंते ॥२६॥ भेदादणुः ॥२७॥ भेदसंघाताभ्यां चाक्षुषः ॥२८॥ सद्द्रव्य-लक्षणं ॥२९॥ उत्पादव्ययध्रौव्ययुक्तं सत् ॥३०॥ तद्भावाव्ययं नित्य ॥३१॥ अर्पितानर्पितसिद्धेः ॥३२॥ स्निग्धरूक्षत्वाद्बंधः ॥३३॥ न जघन्यगुणानां ॥३४॥ गुणसाम्ये सदृशानां ॥३५॥ द्व्यधिकादिगुणानां तु ॥३६॥ बंधेऽधिकौपारिणा-मिकौ च ॥३७॥ गुणपर्ययवद्द्रव्यं ॥३८॥ कालश्च ॥३९॥ सोऽनंतसमयः ॥४०॥ द्रव्याश्रया निर्गुणा गुणाः ॥४१॥ तद्भावः परिणामः ॥४२॥

इति तत्वार्थाधिगमे मोक्षशास्त्रे पंचमोऽध्यायः ॥५॥

कायवाङ्मनःकर्मयोगः ॥१॥ स आस्रवः ॥२॥ शुभः पुण्यस्याशुभः पापस्य ॥३॥ सकषायाकषाययोः सांपरायिकेर्यापथयोः ॥४॥ इन्द्रियकषायाव्रतक्रियाः पंच चतुः पंच पंचविंशतिसंख्याः पूर्वस्य भेदाः ॥५॥ तीव्रमंदज्ञाताज्ञातभावाधिकरणवीर्यविशेषेभ्यस्तद्विशेषः ॥६॥ अधिकरणं जीवाजीवाः ॥७॥ आद्यं संरंभसमारंभारंभयोगकृतकारितानुमतकषायविशेषैस्त्रिस्त्रिस्त्रिश्चतुश्चैकशः ॥८॥ निर्वर्तनानिक्षेपसंयोगनिसर्गा द्विचतुर्द्वित्रिभेदाः परं ॥९॥ तत्प्रदोषनिह्नवमात्सर्यान्तरायासादनोपघाता ज्ञानदर्शनावरणयोः ॥१०॥ दुःखशोकतापाक्रंदनवधपरिदेवनान्यात्मपरोभयस्थानान्यसद्वेद्यस्य ॥११॥ भूतवृत्यनुकंपादानसरागसंयमादियोगः क्षांतिः शौचमिति सद्वेद्यस्य ॥१२॥ केवलिश्रुतसंघधर्मदेवावर्णवादो दर्शनमोहस्य ॥१३॥ कषायोदयात्तीव्रपरिणामश्चारित्रमोहस्य ॥१४॥ बह्वारंभपरिग्रहत्वं नारकस्यायुषः ॥१५॥ माया तैर्यग्योनस्य ॥१६॥ अल्पारंभपरिग्रहत्वं मानुषस्य ॥१७॥ स्वभावमार्दवं च ॥१८॥ निःशीलव्रतित्वं च सर्वेषां ॥१९॥ सरागसंयमसंयमासंयमाकामनिर्जराबालतपांसि दैवस्य ॥२०॥ सम्यक्त्वं च ॥२१॥ योगवक्रताविसंवादनं चाशुभस्य नाम्नः ॥२२॥ तद्विपरीतं शुभस्य ॥२३॥ दर्शनविशुद्धिर्विनयसंपन्नता शीलव्रतेष्वनतीचारोऽभीक्ष्णज्ञानोपयोगसंवेगौ शक्तितस्त्यागतपसी साधुसमाधिर्वैयावृत्यकरणमर्हदाचार्यबहुश्रुतप्रवचनभक्तिरावश्यकापरिहाणिर्मार्गप्रभावना प्रवचनवत्सलत्वमिति तीर्थंकरत्वस्य ॥२४॥ परात्मनिंदाप्रशंसे सदसद्गुणोच्छादनोद्भावने च नीचैर्गोत्रस्य ॥२५॥ तद्विपर्ययो नीचैर्वृत्यनुत्सेकौ चोत्तरस्य ॥२६॥ विघ्नकरणमंतरायस्य ॥२७॥

इति तत्वार्थाधिगमे मोक्षशास्त्रे षष्ठोऽध्यायः ॥६॥

हिंसानृतस्तेयाब्रह्मपरिग्रहेभ्यो विरतिर्व्रत ॥१॥ देशसर्वतोऽणुमहती ॥२॥ तत्स्थैर्यार्थं भावना पंच पंच ॥३॥ वाङ्मनोगुप्तीर्यादाननिक्षेपणसमित्यालोकितपानभोजनानि पंच ॥४॥ क्रोधलोभभीरुत्वहास्यप्रत्याख्यानान्यनुवीचिभाषणं च पंच ॥५॥ शून्यागारविमोचितावासपरोपरोधाकरणभैक्ष्यशुद्धिसद्धर्माविसंवादाः पंच ॥६॥ स्त्रीरागकथाश्रवणतन्मनोहरांगनिरीक्षणपूर्वरतानुस्मरणवृष्येष्टरसस्वशरीरसंस्कारत्यागाः पंच ॥७॥ मनोज्ञामनोज्ञेंद्रियविषयरागद्वेषवर्जनानि पंच ॥८॥ हिंसादिष्विहामुत्रापायावद्यदर्शनं ॥९॥ दुःखमेव वा ॥१०॥ मैत्रीप्रमोदकारुण्यमाध्यस्थ्यानि च सत्वगुणाधिकक्लिश्यमानाविनियेषु ॥११॥ जगत्कायस्वभावौ वा संवेगवैराग्यार्थं ॥१२॥ प्रमत्तयोगात्प्राणव्यपरोपणं हिंसा ॥१३॥ असदभिधानमनृतं ॥१४॥ अदत्तादानं स्तेय ॥१५॥ मैथुनमब्रह्म ॥१६॥ मूर्छा परिग्रहः ॥१७॥ निःशल्यो व्रती ॥१८॥ अगार्यनगारश्च ॥१९॥ अणुव्रतोऽगारी ॥२०॥ दिग्देशानर्थदंडविरतिसामायिकप्रोषधोपवासोपभोगपरिभोगपरि-

माणा तिथिसंविभागव्रतसंपन्नश्च ॥२१॥ मारणांतिकी सल्लेखनां जोषिता ॥२२॥ शंकाकांक्षाविचिकित्सान्यदृष्टिप्रशंसासंस्तवाः सम्यग्दृष्टेरतीचाराः ॥२३॥ व्रतशीलेषु पंच पंच यथाक्रमं ॥२४॥ बंधवधच्छेदातिभारारोपणान्नपाननिरोधाः ॥२५॥ मिथ्योपदेशरहोभ्याख्यानकूटलेखक्रियान्यासापहारसाकारमंत्रभेदाः॥२६॥ स्तेन प्रयोगतदाहृतादानविरुद्धराज्यातिक्रमहीनाधिकमानोन्मानप्रतिरूपकव्यवहाराः॥२७॥परविवाहकरणेत्वरिकापरिगृहीतापरिगृहीतागमनानंगक्रीडाकामतीव्राभिनिवेशाः ॥२८॥ क्षेत्रवास्तुहिरण्यसुवर्णधनधान्यदासीदासकुप्यप्रमाणातिक्रमाः ॥२९॥ ऊर्ध्वाधस्तिर्यग्व्यतिक्रमक्षेत्रवृद्धिस्मृत्यंतराधानानि ॥३०॥ आनयनप्रेष्यप्रयोगशब्दरूपानुपातपुद्गलक्षेपाः॥३१॥कंदर्पकौत्कुच्यमौखर्यासमीक्ष्याधिकरणोपभोगपरिभोगानर्थक्यानि ॥३२॥ योगदुःप्रणिधानानादरस्मृत्यनुपस्थानानि ॥३३॥ अप्रत्यवेक्षिताप्रमार्जितोत्सर्गादानसंस्तरोपक्रमणानादरस्मृत्यनुपस्थानानि ॥३४॥ सचित्तसंबंधसंमिश्राभिषवदुःपक्वाहाराः ॥३५॥ सचित्तनिक्षेपापिधानपरव्यपदेशमात्सर्यकालत्रिक्रमः ॥३६॥ जीवितमरणाशंसामित्रानुरागसुखानुबंधनिदानानि ॥३७॥ अनुग्रहार्थं स्वस्यातिसर्गो दानं ॥३८॥ विधिद्रव्यदातृपात्रविशेषात्तद्विशेषः ॥३९॥

इति तत्वार्थाधिगमे मोक्षशास्त्रे सप्तमोऽध्यायः ॥७॥

मिथ्यादर्शनाविरतिप्रमादकषाययोगा बंधहेतवः ॥१॥ सकषायत्वाज्जीवः कर्मणो योग्यान्पुलद्गानादत्ते स बंधः ॥२॥ प्रकृतिस्थित्यनुभागप्रदेशास्तद्विधयः ॥३॥ आद्यो ज्ञानदर्शनावरणवेदनीयमोहनीयायुर्नामगोत्रांतरायाः ॥४॥ पंचनवद्व्यष्टाविंशतिचतुर्द्विचत्वारिंशद्द्विपंचभेदा यथाक्रमं ॥५॥ मतिश्रुतावधिमनःपर्ययकेवलानां ॥६॥ चक्षुरचक्षुरवधिकेवलानां निद्रानिद्रानिद्राप्रचलाप्रचलाप्रचलास्त्यानगृद्धयश्च ॥७॥ सदसद्वेद्ये ॥८॥ दर्शनचारित्रमोहनीयाकषायकषायवेदनीयाख्यास्त्रिद्विनवषोडशभेदाःसम्यक्त्यमिफ्यात्यतदुभयान्यकषायकषायौ हास्यरत्यरतिशोकभवजुगुप्सास्त्रीपुन्नपुंसकवेदा अनंतानुबंध्यप्रत्याख्यानप्रत्याख्यानसंज्वलनविकल्पाश्चैकशः क्रोधमानमायालोभाः॥९॥नारकतैर्यग्योनमानुषदैवानि॥१०॥ गतिजातिशरीरांगोपांगनिर्माणवन्धनसंघातसंस्थानसंहननस्पर्शरसगन्धवर्णानुपूर्व्यगुरुलघूपघातपरघातातपोद्योतोच्छ्वासविहारोगतयः प्रत्येकशरीरत्रसंसुभगसुस्वरशुभसूक्ष्मपर्याप्तिस्थिरादेययशः कीर्ति सेतराणि तीर्थंकरत्वं च ॥११॥ उच्चैर्नीचैश्च ॥१२॥ दानलाभभोगोपभोगवीर्याणां ॥१३॥ आदितस्तिसृणामंतरायस्य च त्रिंशत्सागरोपमकोटीकोट्यः परा स्थितिः ॥१४॥ सप्ततिर्मोहनीयस्य ॥१५॥ विंशतिर्नामगोत्रयोः ॥१६॥ त्रयस्त्रिंशत्सागरोपमाण्यायुषः ॥१७॥ अपरा द्वादशमुहूर्ता वेदनीयस्य ॥१८॥ नामगोत्रयोरष्टौ ॥१९॥ शेषाणामंतर्मुहूर्ता॥२०॥

विपाकोनुभवः ॥२१॥ स यथानाम ॥२२॥ ततश्च निर्जरा ॥२३॥ नामप्रत्ययाः सर्वतो योगविशेषात्सूक्ष्मैकक्षेत्रावगाहस्थिताः सर्वात्मप्रदेशेष्वनंतानंतप्रदेशाः ॥२४॥ सद्वेद्यशुभायुर्नामगोत्राणि पुण्यं ॥२५॥ अतोऽन्यत्पापं ॥२६॥

इति तत्वार्थाधिगमे मोक्षशास्त्रेऽष्टमोध्यायः ॥८॥

आश्रवनिरोधः संवरः ॥१॥ सगुप्तिसमितिधर्मानुप्रेक्षापरीषहजयचारित्रैः ॥२॥ तपसा निर्जरा च ॥३॥ सम्यग्योगनिग्रहो गुप्तिः ॥४॥ ईर्याभाषैषदाननिक्षेपोत्सर्गाः समितयः ॥५॥ उत्तमक्षमामार्दवार्जवसत्यशौचसंमयतपस्त्यागाकिंचन्यब्रह्मचर्याणि धर्माः ॥६॥ अनित्याशरणसंसारैकत्वान्यत्वाशुच्यास्रवसंवरनिर्जरालोकबोधिदुर्ल्लभधर्मस्वाख्यातत्त्वानुचिंतनमनुप्रेक्षाः ॥७॥ मार्गाच्यिवननिर्जरार्थं परिषोढव्याः परीषहाः ॥८॥ क्षुत्पिपासाशीतोष्णदंशमशकनाग्न्यारतिस्त्रीचर्यानिषद्याशय्याक्रोशवधयाच्ञालाभरोगतृणस्पर्शमलसत्कारपुरस्कारप्रज्ञानार्शनानि॥९॥ सूक्ष्मसांपरायच्छद्मस्थवीतरागवोश्चतुर्दश ॥१०॥ एकादशजिने ॥११॥ बादरसांपराये सर्वे ॥१२॥ ज्ञानावरणे प्रज्ञाज्ञाने॥१३॥ दर्शनमोहांतराययोरदर्शनालाभौ ॥१४॥ चारित्रमोहे नाग्न्यारतिस्त्रीनिषद्याक्रोशयाच्ञासत्कार पुरस्काराः ।१५॥ वेदनीये शेषाः ॥१६॥ एकायो भाज्या युगपदेकस्मिनैकोनविंशतिः ॥१७॥ सामायिकच्छेदोपस्थापनापरिहारविशुद्धिसूक्ष्मसांपराययथाख्यातमिति चारित्रं ॥१८॥ अनशनावमौदर्यवृत्तिपरिसंख्यानरसपरित्यागविविक्तशय्यासनकायक्लेशा बाह्यं तपः ॥१९॥ प्रायश्चित्तविनयवैयावृत्यस्वाध्यायव्युत्सर्गध्यानान्युत्तरं ॥२०॥ नवचतुर्दशपंचद्विभेदायथाक्रमंप्राग्ध्यानात् ॥२१॥ आलोचनाप्रतिक्रमणतदुभय, विवेकव्युत्सर्गतपश्छेदपरिहारोपस्थापनाः ॥२२॥ ज्ञानदर्शनचारित्रोपचाराः ॥२३॥ आचार्योपाध्यायतपस्विंशेक्ष्यग्लानगणकुलसंघसाधुमनोज्ञानां ॥२४॥ वाचनापृच्छनानुप्रेक्षाम्नायधर्मोपदेशाः ॥२५॥ बाह्याभ्यंतरोपध्योः ॥२६॥ उत्तमसंहननस्यैकाग्रचितानिरोधो ध्यानमांतमुहूर्तात्॥२७॥ आर्त्तरौद्रधर्म्यशुक्लानि ॥२८॥ परे मोक्षहेतू ॥२९॥ आर्त्तममनोज्ञस्य संप्रयोगे तद्विप्रयोगाय स्मृतिसमन्वाहारः ॥३०॥ विपरीतं मनोज्ञस्य ॥३१॥ वेदनायाश्च ॥३२॥ निदानं च ॥३३॥ तदविरतदेशविरतप्रमत्तसंयतानां ॥३४॥ हिंसानृतस्तेयविषयसंरक्षणेभ्यो रौद्रमविरतदेशविरतयोः ॥३५॥ आज्ञापायविपाकसंस्थानविचयाय धर्म्यं ॥३६॥ शुक्ले चाद्ये पूर्वविदः ॥३७॥ परे केवलिनः ॥३८॥ पृथक्त्वैकत्ववितर्कसूक्ष्मक्रियाप्रतिपातिव्युपरतक्रियानिवर्तीनि ॥३९॥ त्र्यैकयोगकाययोगायोगानां ॥४०॥ एकाश्रये सवितर्कवीचारे पूर्वे ॥४१॥ अवीचारं द्वितीयं ॥४२॥ वितर्कः श्रुतं ॥४३॥ वीचारोर्थव्यंजनयोगसंक्रांतिः ॥४४॥ सम्यग्दृष्टि श्रावकविरतानातवियोजकदर्शनमोसक्षपकोपशमकोपशांतमोहक्षपकक्षीणमोह-

जिनाः क्रमशोऽसंख्येयगुणनिर्जराः ॥४५॥ पुलाकवकुशकुशीलनिर्ग्रंथस्नातका निर्ग्रंथाः ॥ ४६ ॥ संयमश्रुतप्रतिसेवनातीर्थलिंगलेश्योपपादस्थानविकल्पतः साध्याः ॥४७॥

इति तत्वार्थाधिगमे मोक्षशास्त्रे नवमोऽध्यायः ॥९॥

मोहक्षयाज्ज्ञानदर्शनावरणांतरायक्षयाच्च केवलं ॥१॥ बंधहेत्वभावनिर्जराभ्यां कृत्स्नकर्मविप्रमोक्षो मोक्षः ॥२॥ औपशमिकादिभव्यत्वानां च ॥३॥ अन्यत्र केवलसम्यक्त्वज्ञानदर्शनसिद्धत्वेभ्यः ॥४॥ तदनंतरमूर्ध्वं गच्छत्यालोकांतात् ॥५॥ पूर्वप्रयोगादसंगत्वाद्बंधच्छेदात्तथागति परिणामाच्च ॥६॥ आविद्धकुलालचक्रवद्व्यपगतलेपालावुवदेरंडबीजवदग्निशिखावच्च ॥७॥ धर्मास्तिकायाभावात् ॥८॥ क्षेत्रकालगतिलिंगतीर्थचारित्रप्रत्येकबुद्धबोधितज्ञानावगाहनांतरसंख्याल्पबहुत्वतः साध्याः ॥९॥

इति तत्वार्थाधिगमे मोक्षशास्त्र दशमोऽध्यायः ॥१०॥

मोक्षमार्गस्य नेतारं, भेत्तारं कर्मभूभृतां ।
ज्ञातारं विश्वतत्वानां, वन्दे तद्गुणलब्धये ॥
कोटिशतं द्वादश चैव कोट्यो लक्ष्याण्यशीतिस्त्र्यधिकानि चैव ।
पंचाशदष्टौ च सहस्रसंख्यामेतद्श्रुतं पंचपदं नमामि ॥१॥
अरहंत भासियत्थं गणहरदेवेहिं गंथियं सव्वं ।
पणमामि भत्तिजुत्तो, सुदणाणमहोवयं सिरसा ॥२॥
अक्षरमात्रपदस्वरहीनं व्यंजनसंधिविवर्जितरेफम् ।
साधुभिरत्र मम क्षमितव्यं को न विमुह्यति शास्त्रसमुद्रे ॥३॥
दशाध्याये परिच्छिन्ने तत्वार्थे पठिते सति
फलं स्यादुपवासस्य भाषितं मुनिपुंगवैः ॥४॥
तत्वार्थसूत्रकर्त्तारं गृद्ध्रपिच्छोपलक्षितम् ।
वंदे गणीन्द्रसंजातमुमास्वामिमुनीश्वरम् ॥५॥
जं सक्कइ तं कीरइ, जं पण सक्कइ तहेव सद्दहणं ।
सद्दहमाणो जीवो पावइ अजरामरं ठाणं ॥६॥
तव यरणं वयधरणं, संजमसरणं च जीवदयाकरणम्
अंते समाहिमरणं चउविह दुक्खं णिवारेई ॥७॥

इति तत्वार्थसूत्रापरनाम तत्वार्थाधिगममोक्षशास्त्रम् समाप्तम् ॥

भक्तामर - स्तोत्र

(श्री मानतुंगाचार्य प्रणित)

कथा—

मालवा प्रांत के उज्जैन नगर में राजा भोज बड़े गुणग्राही और विद्या के प्रेमी हो गये हैं। संस्कृत विद्या से तो उनको बहुत ही रुचि थी। उन्होंने स्वयम् संस्कृत भाषा का खूब अध्ययन किया था। और अपनी कचहरियों या नित्य व्यवहार में संस्कृत को ही स्थान दे रखा था। उनकी राज्य सभा में बड़े–बड़े संस्कृत के विद्वान थे। उनमें विप्र कालिदास और वर रूचि ब्राह्मण बहुत प्रवीण थे, उनका कीर्ति ध्वज संसार में चहुँ ओर फहराता था, और बड़े बड़े विद्वान उन्हें सिर झुकाते थे। कालिदास ने तो कालिदेवी को सिद्ध करके विद्या प्राप्त की। उसने देवी के मठ में जाकर ७ दिन तक कठिन तपस्या की और बिना अन्न जल के काली की मूर्ति के पास उसका ध्यान लगाये ओंधा पड़ा रहा। आठवें दिन कालि ने प्रगट होकर उसे दर्शन दिये, तब कालिदास ने राजपाट कुछ भी न मांग केवल वचन सिद्धि मांगी और विपत्ति में सहायक होने का वचन ले लिया। एक दिन सेठ सुदत्तजी अपने प्रिय पुत्र मनोहर को साथ लेकर महाराजा भोज की सभा में गये। राजा ने उनका बड़ा आदर किया और कुशल मंगल के पश्चात पूछा कि आपका यह होनहार बालक क्या पढ़ता है। सेठजी ने उत्तर दिया कि हे महाराज अभी इसका विद्यारम्भ ही है। इसने केवल नाममाला के श्लोक कंठस्थ किये हैं। विद्वान राजा भोज ने 'नाममाला' नामका कोई संस्कृत ग्रन्थ सुना भी नहीं था।

वे बोले 'नाममाला' ग्रन्थ का नाम मैं आज ही आपके मुख से सुन रहा हूँ। इस अश्रुत पूर्व ग्रन्थ के रचियता कौन है ?

सेठजी बोले महाराज—आपकी इसी नगरी में स्याद्वाद विद्या पारगंत महाकवि धनंजय रहते हैं, उन्हीं के कृपा का यह प्रसाद है।

राजा—'ऐसे महान विद्वान के आपने हमें कभी दर्शन भी नहीं कराये।

विप्र कालिदास सभा में बैठे हुए यह सब चर्चा सुन रहे थे। उनका जैनियों से स्वाभाविक द्वेष था। और महाकवि धनंजय से तो खास विद्वेष था और उन्हें उनकी प्रशंसा सहन नहीं हुई। वे बीच में बोल उठे कि महाराज। कहीं वैश्य महाजन भी वेद पढ़ते हैं। इन बिचारों के पास विद्या कहां से आई ?

विद्वद्जन अनुरागी महाराज भोज के चित्त पर कालिदास के इस कथन का कुछ भी प्रभाव नहीं पड़ा। उन्हें विद्वद्वर धनंजय से मिलनाही था, क्योंकि विद्वानों से प्रेम संभाषण का उन्हें एक व्यसन था, इस लिये कालिदास के कहने की उपेक्षा करके उन्होंने अपने मंत्री को धनंजय को लेने के लिये भेज दिया और वे आ भी गये। उन्होंने पहुँचते ही एक आशीर्वादात्मक श्लोक पढ़ा, जिसे सुनकर सभा के लोग और राजा भोज बहुत प्रसन्न हुए। राजा ने उन्हें बड़े मान सन्मान से बैठाया, और कुशल प्रश्न के अनन्तर पूछा।

"हमनें आपको एक प्रसिद्ध विद्वान सुना है, परन्तु आश्चर्य है कि हमसे आप आज तक मिले नहीं ?"

धनंजय ने हँसकर कहा "नाथ। आप पृथ्वी पति है। जब तक पुण्य का प्रबल उदय न हो तब तक आपके दर्शन का लाभ क्यों कर हो सकता हैं ?आज हमारे धन्य भाग्य हैं, जो आपसे साक्षात् करके सफल मनोरथी हुआ हूँ।"

राजा—आप इतने बड़े नामांकित विद्वान हैं, फिर यह छोटासा ग्रन्थ आपको नहीं शोभता। अवश्य लिखा होगा या रचने का प्रारम्भ किया होगा।"

यह सुनकर कालिदास से न रहा गया। वे बोले कि महाराज—नाम माला हम लोगों की है इसका यथार्थ नाम मंजरी है। ब्राह्मण विद्वान ही इसको बनाने वाले हैं और ब्राह्मणों में ही ऐसी योग्यता होती है। ये बेचारे वणिक लोग ग्रन्थ रचना के मर्म को क्या जाने ?" यह बात विद्वान धनंजय को बहुत बुरी लगी और लगना ही चाहिये। क्योंकि दिन दहाड़े उनकी कृति पर हड़ताल फेरी जा रही थी। उन्होंने कहा कि हे महाराज, यह झूठ है। मैंने यह ग्रन्थ बालकों के पठनार्थ रचा है। यह बहुत लोग जानते हैं, और आप पुस्तक मंगाकर देख लीलिए। जान पड़ता है कि इन लोगों ने मेरा नाम लोप करके अपना नाम रख लिया है, और नाम 'मंजरी' बना लिया है।

विद्या विशारद राजा भोज ने वह ग्रन्थ मंगाया और स्वयं परीक्षा की। पश्चात अन्य विद्वान मंडली से समर्थन पाकर कालिदास से कहा कि तुमने यह बड़ा अनर्थ किया है। दूसरों की कृति को छिपा कर अपने नाम पर यह कृति प्रसिद्ध की यह चोरी नहीं तो क्या है। इस पर कालिदास बोले कि महाराज ये धनंजय अभी कल ही तो उस मानतुंग के पास पढ़ते थे, जिसमें विद्या की गंध भी नहीं है। आज यह कहां से विद्वान हो गये जो ग्रन्थ रचने

लग गये। उस मानतुंग को ही बुलाके हमसे शास्त्रार्थ करवाके देख लीजिये। पांडित्य की परीक्षा सहज में हो जावेगी।

गुरुदेव मानतुंगजी के विषय में ऐसे अनादर वचन धनंजय को सहन न हुए। वे कुपित होकर वोलें कि कौन ऐसा विद्वान है, जो स्वामी मानतुंग के चरणों से विवाद कर सके। मैं देखूँ कि तुममें कितना पांडित्य है पहिले मुझसे शास्त्रार्थ कर लो पीछे गुरुवर का नाम लेवें। बस कालिदास को अपने ज्ञानका अभिमान भरपूर तो था ही। धनंजय से शास्त्रार्थ छेड़ दिया और विविध विषयों पर परस्पर वाद विवाद हुआ। स्याद्वादि धनंजय के उत्तर प्रत्युत्तर से निरुत्तर होकर कालिदास खिसिया गये और राजा से फिर वही वात वोले कि मैं इनके मानतुंग से शास्त्रार्थ करूँगा।

विद्वान धनंजय का पक्ष प्रवल है, यह बात महाराज भोज समझ चुके थे, परन्तु कालिदास के सन्तोष के लिये और शास्त्रार्थ का कौतुक देखने के लिये उन्होंने स्वामी मानतुंग के निकट अपना दूत भेज दिया। दूत वन में गया और राजा की आज्ञानुसार स्वामी से निवेदन किया कि भगवन् मालवाधीश महाराजा भोज ने आपकी ख्याति सुनकर दर्शन की अभिलाषा की और दरबार में बुलाया है। सो कृपाकर चलिये। इस पर मुनिराज ने उत्तर दिया कि भाई राजद्वार से हमें क्या मतलब है। हम खेती नहीं करते और न किसी प्रकार की याचना करते हैं, फिर राजा हमें क्यों बुलावेगा। अस्तु साधुओं को राजा से कुछ सम्बन्ध नहीं है और न हम उनके पास जाना चाहते हैं।

वेचारा दूत हताश होकर लौट पड़ा और मुनिराज ने जो उत्तर दिया राजा को सुना दिया। इस पर फिर सेवक भेजे, परन्तु वे नहीं आये। इस प्रकार चार बार हुआ। पांचवी बार कालिदास के उकसाने से महाराज क्रोधित हो उठे और अपने सेवकों को आज्ञा दे दी कि जिस तरह हो सके पकड़के लावो। कई बार के भटके हुए सेवक यह चाहते ही थे। तत्काल उनके महात्माजी को पकड़ लाये और राज्य सभा में खड़ा कर दिया।

उस समय स्वामीजी ने उपसर्ग समझकर मौन धारण करके साम्यभाव का अवलम्बन कर लिया। राजा ने वहुत चाहा कि ये महानुभाव कुछ वोलें, परन्तु उनके मुँह से एक अक्षर भी नहीं निकला, तव कालिदास और अन्य द्वेषी ब्राह्मण बोले कि महाराज यह कर्नाटक देश से निकाला हुआ यहां आके रहा है, महा मूर्ख है। राज सभा देखके भयभीत हो रहा है। आपका प्रताप नहीं सह सकने से कुछ बोलता नहीं है। इस पर बहुत लोगों ने मुनि महाराज

से प्रार्थना की कि आप संत हैं। इस समय आपको कुछ धर्मोपदेश देना चाहिये। राजा विद्या विलासी हैं और धर्म प्रवचन सुनकर संतुष्ट होंगे परन्तु वे धीर वीर महा साधु महास मेरु की तरह अडोल हो गये। सब लोग कह कहकर थक गये, परन्तु फल कुछ नहीं हुआ। इस पर राजा ने क्रोधित होकर हथकड़ी बेडी डालकर उन्हें अडतालीस कोठरियों के भीतर एक बन्दीगृह में कैद कर दिया और मजबूत ताले लगवाकर पहरेदार बिठा दिये। वे मुनिराज तीन दिन तक बंदी गृह में रहे। चौथे दिन 'आदिनाथ स्तोत्र' काव्य रचा जो यन्त्र मन्त्र और ऋद्धि से गर्भित है। ज्यों ही स्वामी ने एक बार पाठ पढ़ा त्यों ही हथकड़ी, बेड़ी और सब ताले टूट गये और खट खट किवाड़ खुल गये। स्वामी बाहिर निकलकर चबूतरे पर जा विराजे। बेचारे पहिरेदारों को बड़ी चिन्ता हुई। उन्होंने बिना किसी से कहे सुने फिर उसी तरह उन्हें कैद कर दिया। परन्तु थोड़े ही देर में फिर वही दशा हुई। सेवकों ने फिर वैसा ही किया पर मुनिराज फिर बाहर आये। अबकी बार सेवकों ने राजा से आकर निवेदन किया और मुनिराज का बंधन रहित होने का वृतान्त सुनाया यह सुनकर राजा को बड़ा आश्चर्य हुआ, परन्तु पीछे यह सोचकर कि शायद रक्षा में कुछ प्रमाद हुआ होगा, इसलिए सेवकों से फिर कहां कि उन्हें उसी तरह बन्द कर दो और खूब निगरानी रखो सेवकों ने वैसा ही किया, परन्तु फिर यह हाल हुआ कि वे सकल व्रती साधु बाहर आकर सीधे राज्य सभा में जा पहुँचे।

महात्माजी के दिव्य शरीर के प्रभाव से राजा का हृदय काँप गया। उन्होंने कालिदास को बुलाकर कहाँ कि कविराज मेरा आसन कंपित हो रहा है। मैं अब इस सिंहासन पर क्षण भर भी नहीं ठहर सकता हूँ।

कालिदास ने राजा को धैर्य बंधाया और उसी समय योगासन पर बैठ कर काली का स्तोत्र पढ़ना चालू कर दिया तो थोड़े ही समय में कालिका देवी प्रकट हुई।

इतने में मुनिराज के समीप चक्रेश्वरी देवी ने दर्शन दिये। चक्रेश्वरी देवी का रूप भव्य, सौम्य और कालिका का विकराल चण्डि रूप देखकर राज्य सभा चकित हो गई। चक्रेश्वरी ने ललकार कर कहा कि कालिके तू यहां क्यों आई। क्या अब तूने मुनि महात्माओं पर उपसर्ग करने की ठानी है। अच्छा देख, अब मैं तेरी कैसी दशा करती हूँ। प्रभाव शालिनी चक्रेश्वरी को देखकर कुटिल कालिका काँप गई और नाना प्रकार से स्तुति करके कहने

लगो कि हे माता क्षमा करो। अब मैं ऐसा कृत्य कभी नहीं करूंगी। इस पर चक्रेश्वरी ने कालिका को बहुत सा उपदेश दिया और अन्तर्ध्यान हो गई। इसके पश्चात कालिका ने मुनिराज से क्षमा प्रार्थना की और अदृश्य हो गई।

राजा और कालिदास ने मुनिराज का प्रताप देखकर क्षमा मांगी और नाना प्रकार से स्तुति की। राजा भोज ने मुनिराज से श्रावक के व्रत लिये और अपने राज्य में जैन धर्म का खूब प्रचार किया, जिससे आज तक धर्म हरा भरा बना है।

श्री मानतुंगाचार्य विरचित आदिनाथ

भक्तामर - स्तोत्र

भक्तामर-प्रणत-मौलि-मणि-प्रभाणा—
मुद्योतकं दलित-पाप-तमो-वितानम् ।
सम्यक्प्रणम्य जिन-पादयुगं युगादा—
वालंबनं भव-जले पततां जनानां ॥१॥

यः संस्तुतः सकल-वाङ्मय-तत्त्व-बोधा—
दुद्भूत-बुद्धि-पटुभिः सुर-लोक-नाथैः ।
स्तोत्रैर्जगत्त्रितय-चित्त-हरैरुदारैः,
स्तोष्ये किलाहमपि तं प्रथमं जिनेन्द्रम् ॥२॥

बुद्धया विनापि विबुधार्चित-पाद-पीठ—
स्तोतुं समुद्यत-मतिर्विगत-त्रपोऽहं ।
बालं विहाय जल-संस्थितमिंदु-बिंब—
मन्यः क इच्छति जनः सहसा गृहीतुं ॥३॥

वक्तुं गुणान् गुण-समुद्र शशांक-कान्तान्,
कस्ते क्षमः सुर-गुरु-प्रतिमोऽपि बुद्धया ।
कल्पांत-काल-पवनोद्धत-नक्र-चक्रं,
को वा तरीतुमलमंबुनिधिं भुजाभ्यां ॥४॥

सोऽहं तथापि तव भक्तिवशान्मुनीश,
कर्तुं स्तवं विगत-शक्तिरपि प्रवृत्तः ।
प्रीत्यात्म-वीर्यमविचार्य मृगी मृगेंद्रम्,
नाभ्येति किं निज-शिशोः परिपालनार्थम् ॥५॥

अल्प-श्रुतं श्रुतवतां परिहास-धाम,
त्वद्भक्तिरेव मुखरीकुरुते बलान्माम् ।
यत्कोकिलः किल मधौ मधुरं विरौति,
तच्चाम्र-चारु-कलिका-निकरैक-हेतु ॥६॥

त्वत्संस्तवेन भव-सन्तति-सन्निबद्धं,
पापं क्षणात्क्षयमुपैतिशरीरभाजाम् ।
आक्रांत-लोकमलि-नीलमशेषमाशु,
सूर्यांशु-भिन्नमिव शार्वरमंधकारं ॥७॥

मत्वेति नाथ तव संस्तवनं मयेद—
मारभ्यते तनु-धियापि तव प्रभावात् ।
चेतो हरिष्यति सतां नलिनी-दलेषु,
मुक्ता-फलद्युतिमुपैति ननूदबिंदुः ॥८॥

आस्तां तव स्तवनमस्त-समस्त-दोषं,
त्वत्संकथापि जगतां दुरितानि हंति ।
दूरे सहस्रकिरणः कुरुते प्रभैव,
पद्माकरेषु जलजानि विकासभांजि ॥९॥

नात्यद्भुतं भुवन-भूषण ! भूत-नाथ ।
भूतैर्गुणैर्भुवि भवंतमभिष्टुवंतः ।
तुल्या भवंति भवतो ननु तेन किं वा,
भूत्याश्रितं य इह नात्मसमं करोति ॥१०॥

दृष्ट्वा भवंतमनिमेष-विलोकनीयं,
नान्यत्र तोषमुपयाति जनस्य चक्षुः ।
पीत्वा पयः शशिकर-द्युति-दुग्ध-सिंधोः,
क्षारं जलं जल-निधेरसितुं क इच्छेत् ॥११॥

यः शांत-राग-रुचिभिः परमाणुभिस्त्वं,
निर्मापितस्त्रिभुवनैक-ललामभूत !
तावंत एव खलु तेप्यणवः पृथिव्यां,
यत्ते समानमपरं न हि रूपमस्ति ॥१२॥

वक्त्रं क्व ते सुर-नरोरग-नेत्रहारि,
निःशेष-निर्जित-जगत्त्रितयोपमानं ।
विम्बं कलंकमलिनं क्व निशाकरस्य,
यद्वासरे भवति पांडुपलाश-कल्पं ॥१३॥

संपूर्ण-मण्डल-शशांक-कला-कलाप—
शुभ्रागुणास्त्रिभुवनं तव लंघयंति ।
ये संश्रितास्त्रिजगदीश्वर-नाथमेकं,
कस्तान्निवारयति संचरतो यथेष्टं ॥१४॥

चित्रं किमत्र यदि ते त्रिदशांगनाभि—
नीतं मनागपि मनो न विकार-मागम् ।
कल्पांत-काल-मरुता चलिताचलेन,
किं मंदराद्रि-शिखरं चलितं कदाचित् ॥१५॥

निर्धूम वर्तिरपवर्जित-तैल-पूरः,
कृत्स्नं जगत्त्रयमिदं प्रगटीकरोषि ।
गम्यो न जातु मरुतां चलिताचलानां,
दीपोऽपरस्त्वमसि नाथ जगत्प्रकाशः ॥१६॥

नास्तं कदाचिदुपयासि न राहु-गम्यः,
स्पष्टीकरोषि सहसा युगपज्जगंति ।
नांभोधरोदर-निरुद्ध-महा-प्रभावः,
सूर्यातिशायि-महिमासि मुनीन्द्र लोके ॥१७॥

नित्योदयं दलित-मोह-महांधकारं,
गम्यं न राहु-वदनस्य न वारिदानां ।
विभ्राजते तव मुखाब्जमनल्पकांति,
विद्योतयज्जगदपूर्व-शशांक-विम्ब ॥१८॥

किं शर्वरीषु शशिनाह्नि विवस्वता वा,
युष्मन्मुखेंदुदलितेषु तमःसु नाथ ।
निष्पन्न-शालि-वन-शालिनि जीव-लोके,
कार्यं कियज्जलधरैर्जल-भार-नम्रैः ॥१९॥

ज्ञानं यथा त्वयि विभाति कृतावकाशं,
नैवं तथा हरिहरादिषु नाय केषु ।
तेजः स्फुरन्मणिषु याति यथा महत्त्वं,
नैवं तु काच-शकले किरणाकुलेऽपि ॥२०॥

मन्ये वरं हरि-हरादय एव दृष्टा,
दृष्टेषु येषु हृदयं त्वयि तोषमेति ।
किं वीक्षितेन भवता भुवि येन नान्यः,
कश्चिन्मनो हरति नाथ भवांतरेऽपि ॥२१॥

स्त्रीणां शतानि शतशो जनयंति पुत्रान्,
नान्या सुतं त्वदुपमं जननी प्रसूता
सर्वा दिशो दधति भानि सहस्ररश्मि,
प्राच्येव दिग्जनयति स्फुरदंशुजालम् ॥२२॥

त्वामामनंति मुनयः परमं पुमांस—
मादित्य-वर्णममलं तमसः पुरस्तात् ।
त्वामेव सम्यगुपलभ्य जयंति मृत्युं,
नान्यः शिवः शिवपदस्य मुनीन्द्र पंथाः ॥२३॥

त्वामव्ययं विभुमचिंत्यमसंख्यमाद्य,
ब्रह्माणमीश्वरमनंतमनंगकेतुं ।
योगीश्वरं विदित-योगमनेकमेकं,
ज्ञान-स्वरूपममलं प्रवदंति संतः ॥२४॥

बुद्धस्त्वमेव विबुधार्चित-बुद्धि-बोधात्,
त्वं शंकरोऽसि भुवनत्रयशंकरत्वात् ।
धाताऽसि धीर शिव-मार्ग-विधेर्विधानाद्
व्यक्तं त्वमेव भगवन् पुरुषोत्तमोऽसि ॥२५॥

तुभ्यं नमस्त्रिभुवनार्त्तिहराय नाथ !
तुभ्यं नमः क्षिति-तलामल-भूषणाय ।
तुभ्यं नमस्त्रिजगतः परमेश्वराय,
तुभ्यं नमो जिनभवोदधि-शोषणाय ॥२६॥

को विस्मयोऽत्र यदि नाम गुणैरशेषै—
स्त्वं सश्रितो निरवकाशतया मुनीश !
दोषैरुपात्तविविधाश्रय-जात-गर्वैः,
स्वप्नांतरेऽपि न कदाचिदपीक्षितोऽसि ॥२७॥

उच्चैरशोक-तरु-संश्रितमुन्मयूख—
माभातिरूपममलं भवतो निनांतं ।
स्पष्टोल्लसत्किरणमस्त-तमो-वितानं,
बिम्बं रवेरिवपयोधरपार्श्ववर्ति ॥२८॥

सिंहासने मणि-मयूख-शिखा-विचित्रे,
विभ्राजते तव वपुः कनकावदातं ।
बिम्बं वियद्विलसदंशुलता-वितानं,
तुंगोदयाद्रिशिरसीव सहस्र-रश्मेः ॥२९॥

कुंदावदात-चल-चामर-चारु-शोभं,
विभ्राजते तव वपुः कलधौत-कांतं ।
उद्यच्छशांक-शुचि-निर्झर-वारि-धार—
मुच्चैस्तटं सुरगिरेरिव शातकौम्भम् ॥३०॥

छत्र-त्रयं तव विभाति शशांककांत—
मुच्चैः स्थितं स्थगित-भानु-कर-प्रतापं ।
मुक्ता-फल-प्रकर-जाल-विवृद्ध-शोभं,
प्रख्यापयत्त्रिजगतः परमेश्वरत्वं ॥३१॥

गभीर-तार-रव-पूरित-दिग्विभाग—
स्त्रैलोक्य-लोक-शुभ-संगम-भूतिदक्षः ।
सद्धर्मराज-जय-घोषण-घोषकः सन्,
खे दुंदुभिर्ध्वनति ते यशसः प्रवादी ॥३२॥

मंदार-सुंदर-नमेरु-सुपारिजात—
संतानकादि-कुसुमोत्कर-वृष्टि-रुद्धा ।
गंधोद-बिंदु-शुभ-मंद-मरुत्प्रपाता,
दिव्यादिवः पतति ते वयसां ततिर्वा ॥३३॥

शुंभत्प्रभा-वलय-भूरि-विभा विभोस्ते,
लोक-त्रये द्युतिमतां द्युतिमाक्षिपंती ।
प्रोद्यद्दिवाकर-निरंतरभूरि-संख्या,
दीप्त्या जयत्यपि निशामपि सोमसौम्यां ॥३४॥

स्वर्गापवर्ग-गम-मार्ग-विमार्गणेष्टः,
सद्धर्म-तत्त्व-कथनैक-पटुस्त्रिलोक्याः ।
दिव्य-ध्वनिर्भवति ते विशदार्थ सर्व—
भाषा-स्वभाव-परिणाम-गुणैः प्रयोज्यः ॥३५॥

उन्निद्र-हेम-नव-पंकज-पुंज-कांती,
पर्युल्लसन्नख-मयूख-शिखाभिरामौ।
पादौ पदानि तव यत्र जिनेंद्र धत्तः
पद्मानि तत्र विबुधाः परिकल्पयंति ॥३६॥

इत्थं यथा तव विभूतिरभूज्जिनेन्द्र,
धर्मोपदेशन-विधौ न तथा परस्य।
यादृक्प्रभा दिनकृतः प्रहतांधकारा,
तादृक् कुतो ग्रह-गणस्य विकासिनोऽपि ॥३७॥

श्च्योतन्मदाविल-विलोल-कपोल-मूल—
मत्त-भ्रमद्भ्रमर-नाद-विवृद्ध-कोपं।
ऐरावताभमिभमुद्धतमापतन्तम्,
दृष्ट्वा भयं भवति नो भवदाश्रितानां ॥३८॥

भिन्नेभ-कुंभ-गलदुज्ज्वल-शोणिताक्त—
मुक्ता-फल-प्रकर-भूषित-भूमि-भागः।
बद्ध-क्रमः क्रम-गतं हरिणाधिपोऽपि,
नाक्रामति क्रम-युगाचल-संश्रितं ते ॥३९॥

कल्पांत-काल-पवनोद्धत-वह्नि-कल्पं,
दावानलं ज्वलितमुज्ज्वलमुत्स्फुलिंगं।
विश्वं जिघित्सुमिव संमुखमापतंतं,
त्वन्नाम-कीर्त्तन-जलं शमयत्यशेषं ॥४०॥

रक्तेक्षणं समद-कोकिल-कंठ-नीलं,
क्रोधोद्धतं फणिनमुत्फणमापतंतं।
आक्रामति क्रम-युगेण निरस्तशंक—
स्त्वन्नाम-नाग-दमनी हृदि यस्त पुंसः ॥४१॥

वल्गत्तुरंग-गज-गर्जित-भीमनाद—
माजौ बलं बलवतामपि भूपतीनां।
उद्यद्दिवाकर-मयूख-शिखापविद्धं,
त्वत्कीर्त्तनात्तम इवाशु भिदामुपैति ॥४२॥

कुंताग्र-भिन्न-गज-शोणित-वारिवाह—
वेगावतार-तरणातुर-योध-भीमे ।
युद्धे जयं विजित-दुर्जय-जेय-पक्षा—
स्त्वत्पाद-पङ्कज-वनाश्रयिणो लभंते ॥४३॥

अंभोनिधौ क्षुभित-भीषणनक्र-चक्र—
पाठीन-पीठभय-दोल्वण-वाडवाग्नौ ।
रंगत्तरंग-शिखर-स्थित-यान-पात्रा—
स्त्रासं विहाय भवतः स्मरणाद् व्रजंति ॥४४॥

उद्भूत-भीषण-जलोदर-भार-भुग्नाः,
शोच्यां दशामुपगताश्च्युत-जीविताशाः ।
त्वत्पाद-पङ्कज-रजोऽमृत-दिग्ध-देहा,
मर्त्या भवंति मकरध्वज-तुल्यरूपाः ॥४५॥

आपाद-कंठमुरुशृङ्खल-वेष्टितांगा,
गाढं बृहन्निगड-कोटि-निघृष्ट-जंघाः ।
त्वन्नाम-मंत्रमनिशं मनुजाः स्मरंतः,
सद्यः स्वयं विगत-बंध-भया भवंति ॥४७॥

मत्तद्विपेन्द्र-मृगराज-दवानलाहि—
संग्राम-वारिधि-महोदर-बंधनोत्थं ।
तस्याशु नाशमुपयाति भयं भियेव,
यस्तावकं स्तवमिमं मतिमानधीते ॥४७॥

स्तोत्रस्रजं तव जिनेन्द्र गुणैर्निबद्धां,
भक्त्या मया विविध-वर्ण-विचित्रपुष्पां ।
धत्ते जनो य इह कंठ-गतामजस्रं,
तं 'मानतुंग' मवशा समुपैति लक्ष्मीः ॥४८॥

इति श्री मानतुङ्गाचार्य विरचितमादिनाथस्तोत्रम् (भक्तामर स्तोत्रम्)

छहढाला

स्वर्गीय पं० दौलतरामजी कृत—सोरठा

तीन भुवनमैं सार, वीतराग विज्ञानता।
शिवस्वरूप शिवकार, नमौं त्रियोग सम्हारिकैं ॥

पहली ढाल। चौपाई (१५ मात्रा)

जे त्रिभुवनमैं जीव अनन्त। सुख चाहैं दुखतैं भयवंत ॥
तातैं दुखहारी सुखकारि। कहै सीख गुरु करुणा धारि ॥२॥

ताहि सुनो भवि मन थिर आन। जो चाहो अपनो कल्यान ॥
मोह महामद पियो अनादि। भूलि आपको भरमत वादि ॥३॥

तास भ्रमनकी है बहु कथा। पै कछु कहूँ कही मुनि जथा ॥
काल अनन्त निगोदमँझार। बीत्यो एकेन्द्रिय-तन धार ॥४॥

एक स्वासमें अठदश बार। जन्म्यो मर्‍यो भर्‍यो दुखभार ॥
निकसि भूमि जल पावक भयो। पवन प्रतेक वनस्पति थयो ॥५॥

दुर्लभ लहि ज्यों चिंतामणी। त्यों परजाय लही त्रसतणी ॥
लटपिपीलि अलि आदि शरीर। धरधर मरयो सही बहु पीर ॥६॥

कबहूँ पंचेन्द्रिय पशु भयो। मनविन निपट अज्ञानी थयो ॥
सिंहादिक सैनी ह्वै क्रूर। निबल पशू हति खाये भूर ॥७॥

कबहूँ आप भयो बलहीन। सबलनिकरि खायो अतिदीन ॥
छेदन भेदन भूखपियास। भारबहन हिम आतप त्रास ॥८॥

बध-बंधन आदिक दुख घने। कोटि जीभतैं जात न भने ॥
अतिसंक्लेश भावतैं मर्‍यो। घोर श्वभ्रसागरमैं पर्‍यो ॥९॥

तहां भूमि परसत दुख इस्यो। बीछू सहस डसैं तन तिस्यो ॥
तहां राधशोणितबाहिनी। कृमिकुलकलित देह-दाहिनी ॥१०॥

समरतरुजुत दलअसिपत्र। असि यों देह विदारैं तत्र ॥
मेरु समान लोह गलिजाय। ऐसी शीत उष्णता थाय ॥११॥

तिलतिल करहिं देहके खण्ड। असुर भिडावैं दुष्टप्रचंड ॥
सिंधुनीरतैं प्यास न जाय। तौ पण एक न बूंद लहाय ॥१२॥

तीनलोकको नाज़ न खाय। मिटै न भूख कणा न लहाय ॥
ये दुख बहु सागरलौं सहै। कर्मजोगतैं नरतन लहै ॥१३॥

जननी उदर बस्यो नवमास । अंग सकुचतैं पाई त्रास ॥
निकसत जे दुख पाये घोर । तिनको कहत न आवैं ओर ॥१४॥

बालपनमैं ज्ञान न लह्यो । तरुणसमय तरुणीरत रह्यो ॥
अर्धमृतकसम बूढ़ापनो । कैसें रूप लखै आपनो ॥१५॥

कभी अकामनिर्जरा करै । भवनत्रिकमैं सुरतन धरै ॥
विषय-चाह-दावानल दह्यो । मरत विलाप करत दुख सह्यो ॥१६॥

जो विमान वासी हू थाय । सम्यकदर्शन विन दुख पाय ॥
तहँतैं चय थावरतन धरै । यों परिवर्तन पूरे करै ॥१७॥

दूसरी ढाल । पद्धरि छन्द ।

ऐसें मिथ्या-दृगज्ञानचरण । वश भ्रमत भरत दुख जन्ममरण ॥
तातैं इनको तजिये सुजान । सुन तिन संक्षेप कहूँ बखान ॥१॥

जीवादि प्रयोजनभूत तत्व । सरधै तिनमांहि विपर्ययत्व ॥
चेतनको है उपयोगरूप । विन मूरति चिनमूरति अनूप ॥२॥

पुद्गल नभ धर्म अधर्म काल । इततैं न्यारी है जीवचाल ॥
ताकों न जान विपरीत मान । करि करै देहमैं निज पिछान ॥३॥

मैं सुखो दुखी मैं रंक राव । मेरो धन गृह गोधन प्रभाव ॥
मेरे सुत तिय मैं सबल दीन । वे रूप सुभग मूरख प्रवीन ॥४॥

तन उपजत अपनी उपज जानि । तन नशत आपको नाश मान ॥
रागादि प्रगट जे दुःखदैन । तिनहीको सेवत गिनहि चैन ॥५॥

शुभअशुभबंधके फलमझार । रति अरति करै निजपद विसार ॥
आतमहितहेतु विराग ज्ञान । ते लखै आपको कष्ठ दान ॥६॥

रोकी न चाह निज शक्ति खोय । शिवरूप निराकुलता न जोय ॥
याही प्रतीतजुत कछुक ज्ञान । सो दुखदायक अज्ञान जान ॥७॥

इनजुत विषयनिमैं जो प्रवृत्त । ताको जानो मिथ्याचरित्त ॥
या मिथ्यात्वादि निसर्ग जेह । अब जे गृहीत सुनिये सु तेह ॥८॥

जो कुगुरु कुदेव कुधर्म सेव पोषैं । चिर दर्शन मोह एव ॥
अन्तररागादिक धरैं जेह । बाहरधन अंबरतैं सनेह ॥९॥

धारैं कुलिंग लहि महतभाव । ते कुगुरु जनम-जल उपल-नाव ॥
जे रागरोपमल करि मलीन । वनितागदादिजुत चिन्हचीन ॥१०॥

ते हैं कुदेव तिनकी जु सेव। शठ करत न तिन भवभ्रमनछेव ॥
रागादिभाव हिंसा समेत। दर्वित त्रसथावर मरनखेत ॥११॥

जे क्रिया तिन्हैं जानहु कुधर्म। तिन सरधै जीव लहै अशर्म ॥
याकौं गृहीतमिथ्यात जान। अब सुन गृहीत जो है कुज्ञान ॥१२॥

एकांतवाद दूषित समस्त। विषयादिकपोषक अप्रशस्त ॥
कपिलादिरचित श्रुतको अभ्यास। सो है कुबोध बहु देन त्रास ॥१३॥

जो ख्यातिलाभ पूजादि चाह। धरि करत विविधविध देहदाह ॥
आतम अनात्मके ज्ञानहीन। जे जे करनी तनकरनछीन ॥१४॥

तैं सब मिथ्याचारित्र त्यागि। अब आतमके हित पंथ लागि ॥
जगजालभ्रमन को देय त्यागि। अब दौलत निज आतम सुपागि ॥१५॥

तीसरी ढाल। नरेन्द्रछन्द (जोगीरासा।)

आतमको हित है सुख, सो सुख आकुलता विन कहिये।
आकुलता शिवमांहि न तातैं, शिवमग लाग्यो चाहिये।
सम्यकदर्शन ज्ञान चरन शिव, मग सो दुविध विचारो।
जोसत्या रथरूप सु निश्चय, कारन सो व्यवहारो ॥१॥

परद्रव्यनितैं भिन्न आपमैं रुचि, सम्यक्त भला है।
आप रूपको जानपनो, सो सम्यकज्ञानकला है॥
आपरूपमैं लीन रहै थिर, सम्यकचारित सोई।
अब व्यवहार मोख मग सुनिये, हेत नियतको होई ॥२॥

जीव अजीव तत्व अरु आस्रव, बंध रु संवर जानो।
निर्जर मोक्ष कहे जिन तिनको, ज्यौंको त्यौं सरधानो॥
है सोई समकित व्यवहारी, अब इन रूप वखानौ।
तिनको सुनि सामान्यविशेषैं, दृढ प्रतीक उर आनौं ॥३॥

बहिरातम अन्तरआतम परमातम जीव त्रिधा है।
देह जीवको एक गिनै, बहिरातमतत्व मुधा है॥
उत्तम मध्यम जघन त्रिविधिके अन्तरआतमज्ञानी।
द्विविध संगविन शुधउपयोगी, मुनि उत्तम निजध्यानी ॥४॥

मध्यम अन्तर आतम हैं जे देशव्रती आगारी।
जघन कहे अविरतसमदृष्टी तीनों शिवमगचारी॥
सकल निकल परमातम द्वैविध तिनमैं घाति निवारी।
श्री अरहंत सकल परमातम लोकालोकनिहारी॥५॥

ज्ञानशरीरी त्रिविध कर्ममल-वर्जित सिद्ध महन्ता।
ते हैं निकल अमल परमातम, भोगैं शर्म अनन्ता॥
वहिरातमता हेय जानि तजि, अन्तरआतम हूजै।
परमातमको ध्याय निरन्तर, जो नित आनन्द पूजै॥६॥

चेतनता विन सो अजीव है, पंच भेद ताके हैं।
पुद्गल पंच वरन, रसपन गंध दु फरस वसु जाके हैं॥
जिय पुदगलको चलन सहाई, धर्मद्रव्य अनरूपी।
तिष्ठत होय अधर्म सहाई, जिन विनमूर्ति निरूपी॥७॥

सकल द्रव्य को वास जासमैं, सो आकाश पिछानों।
नियत वरतना निशिदिन सो व्यवहारकाल परिमानो॥
यौं अजीव अव आस्रव सुनिये, मनवचकाय त्रियोगा।
मिथ्या अविरत अरु कषायपरमादसहित उपयोगा॥८॥

ये ही आतमके दुखकारन, तातैं इनको तजिये।
जीवप्रदेश वँधै विधिसों सो, वंधन कवहुँ न सजिये॥
शमदससों जो कर्म न आवैं, सो संवर आदरिये।
तपवलतैं विधिझरन निरजरा, ताहि सदा आचरिये॥९॥

सकल करमतैं रहित अवस्था, सो शिव थिरसुख कारी।
इहिविधि जो सरधा तत्वनको, सो समकित व्योहारी॥
देव जिनेन्द्र गुरू परिग्रह विन, धर्म दयाजुत सारो।
यहू मान समकितको कारन अष्टअंगजुत धारो॥१०॥

वसुमद टारि निवारि त्रिशठता, षट अनायतन त्यागो।
शंकादिक वसु दोष विना, [१]संवेगादिक चित पागो॥
अष्ट-अंग अरु दोष पचीसों, अव संक्षेपहु कहिये।
विन जानेतैं दोषगुननको, कैसे तजिये गहिये॥११॥

१ प्रशम संवेग अनुकंपा आस्तिक्य।

जिनवचमैं शंका न धारि वृष, भवसुखवांछा भानै।
मुनितन मलिन न देख घिनाव, तत्व कुतत्व पिछानै॥
निजगुन अर पर अवगुन ढाकै, वा जिनधर्म बढावै।
कामादिककर [1]वृषतैं चिगते, निजपर को सु दृढावै॥१२॥

धर्मीसों गउबच्छप्रीतिसम, कर जिनधर्म दिपावै।
इन गुनतैं विपरीतदोष वसु, तिनको सतत खिपावै॥
पिता भूप वा [2]मातुल नृप जो, होय तो न मद ठानै।
मद न रूपको मद न ज्ञानको, धन बलको मद भानै॥१३॥

तपको मद न मद जु प्रभुताको, करै न सो निज जानै।
मद धारै तौ येहि दोष वसु, समकितको मल ठानै॥
कुगुरुकुदेवकुवृषसेवककी नहिं, प्रशंस उचरै है।
जिनमुनि जिनश्रुत विन कुगुरादिक, तिन्हैं न नमन करै है॥१४॥

दोषरहित गुनसहित सुधी जे, सम्यकदरश सजै हैं।
चरितमोहवश लेश न संजम, पै सुरनाथ जजै हैं॥
गेही पै गृहमैं न रचै ज्यों, जलमैं भिन्न कमल है।
नगरनारिको प्यार यथा कादेमैं हेम अमल है॥१५॥

प्रथम नरक विन षट भू ज्योतिष, वान भवन षंढे नारी।
थावर विकलत्रय पशुमैं नहिं, उपजत समकित-धारी॥
तीनलोक तिहुँकालमाहिं नहिं, दर्शनसम सुखकारी।
सकलधरमको मूल यही इस, विन करनी दुखकारी॥१६॥

मोहमहलकी परथम सीढ़ी, या विन ज्ञान चरित्रा।
सम्यकता न लहै सो दर्शन, धारो भव्य पवित्रा॥
'दौल' समझ सुन चेत सयाने, काल वृथा मत खोवै।
यह नरभव फिर मिलन कठिन है, जो सम्यक नहिं होवै॥१७॥

चौथी ढाल। दोहा—

सम्यकश्रद्धा धारि पुनि, सेवहु सम्यक्ज्ञान।
स्वपरअर्थ वहु धर्मजुत, जो प्रकटावन भान॥१॥

१ धर्मसे। २ मामा। ३ नपुंसक

रोला छन्द २४ मात्रा।

सम्यकसाथैं ज्ञान होय, पै भिन्न अराधो।
लक्षण श्रद्धा जान, दुहूमें भेद अबाधो॥
सम्यककारण जान, ज्ञान कारज है सोई।
युगपद होतैं हू, प्रकाश दीपकतैं होई॥१॥

तास भेद दो हैं परोक्ष, परतछ तिनमांहीं।
मति श्रुत दोय परोक्ष, अक्ष मनतैं उपजाहीं॥
अवधिज्ञानमनपर्जय, दो हैं देशप्रतच्छा।
द्रव्यक्षेत्रपरिमान लिये जानैं जिय स्वच्छा॥३॥

सकल द्रव्यके गुन अनन्त, परजाय अनन्ता।
जानैं एकै काल, प्रगट केवलि भगवन्ता॥
ज्ञान समान न आन, जगतमैं सुखको कारन।
इह परमामृत जन्म, जरामृतरोगनिवारन॥४॥

कोटि जनम तप तपैं, ज्ञान विन कर्म झरैं जे।
ज्ञानीके छिनमांहिं गुप्तितैं सहज टरैं ते॥
मुनिव्रत धार अनन्तवार, ग्रीवक उपजायो।
पै निजआतमज्ञान विना सुख लेश न पायो॥५॥

तातैं जिनवरकथित, तत्त्व अभ्यास करीजै।
संशय विभ्रम मोह, त्याग आपो लखि लीजै॥
यह मानुषपरजाय, सुकुल सुनिवो जिनवानी।
इहविधि गये न मिलै, सुमणि ज्यों उदधिसमानी॥६॥

धन समाज गज वाज राज, तो काल न आवै।
ज्ञान आपको रूप भये, फिर अचल रहावै॥
तास ज्ञानको कारण, स्वपरविवेक बखान्यो।
कोटि उपाय बनाय, भव्य ताको उर आन्यो॥७॥

जे पूरब शिव गये, जांय अब आगैं जै हैं।
सो सब महिमा ज्ञानतनी, मुनिनाथ कहै हैं॥

विषयवाह-दव-दाह, जगतजन अरनि दझावें।
तासु उपाय न आन ज्ञानघनघान बुझावै ॥८॥

पुण्यपाप-फल मांहि, हरख विलखौ मत भाई।
यह पुद्गल परजाय, उपजि विनसैं थिर थाई॥
लाख बातकी बात, यहै निश्चय उर लावो।
तोरि सकल जगदंदफंद, निज आतम घ्यावो ॥९॥

सम्यकज्ञानी होइ, बहुरि दृढ़ चारित लीजै।
एक देश अरु सकलदेश, तस भेद कहीजै॥
त्रसहिंसाको त्याग वृथा, थावर न सँघारै।
परवधकार कठोर निंद्य नहिं वयन उचारै ॥१०॥

जल मृतिकाविन और नाहिं कछु गहै अदत्ता।
निज वनिताविन सकल, नारिसौं रहै विरत्ता॥
अपनी शक्ति विचार परिग्रह थोरो राखै।
दश दिशि गमनप्रमान, ठान तसु सीम न नाखै ॥११॥

ताहूमैं फिर ग्राम गली ग्रह बाग बजारा।
गमनागमन प्रमान ठान अन सकल निवारा॥
काहूके धनहानि, किसी जयहार न चीतैं।
देय न सो उपदेश, होय अघ बनिज कृषीतैं ॥१२॥

कर प्रमाद जल भूमि, वृक्ष पावक न विराधै।
असि धनु हल हिंसोपकरन, नहिं दे जस लाधै॥
रागरोषकरतारकथा, कबहूँ न सुनीजै।
अनरथदण्ड, हेतु अघ तिन्हैं न कीजै ॥१३॥

धर उर समताभाव सदा, सामायिक करिये।
पर्वचतुष्टयमाहिं पाप तजि प्रोषध धरिये॥
भोग और उपभोग नियमकरि ममतु निवारै।
मुनिको भोजन देय फेर, निज करहि अहारै ॥१४॥

बारहव्रत के अतीचार, पन पन न लगावै।
मरन समय सन्यास धारि, तसु दोष नशावै॥

यौं श्रावकव्रत पाल स्वर्ग, सोलम उपजावं।
तहँतैं चय नरजन्म पाय मुनि ह्वै शिव जावै ॥१५॥

पांचवीं ढाल। सखीछन्द (मात्रा १४)

मुनि सकलवृती वडभागी। भवभोगनतैं वैरागी॥
वैराग्य उपावन माई। चिंतो अनुप्रेक्षा भाई॥१॥

इन चितत समरस जागै। जिमि ज्वलन पवनके लागै॥
जवही जिय आतम जानै। तवही जिय शिवसुख ठानै॥२॥

जोवन गृह गोधन नारी। हय गय जन आज्ञाकारी॥
इन्द्रीय भोग छिन थाई। सुरधनु चपला चपलाई॥३॥

सुर असुर खगाधिप जेते। मृग ज्यों हरि काल दले ते॥
मणि मंत्र तंत्र वहु होई। मरते नबचावै कोई॥४॥

चहुँगतिदुख जीव भरै हैं। परिवर्तन पंच करै हैं॥
सवविधि संसार असारा। यामैं सुख नाहिं लगारा॥५॥

शुभ अशुभ करमफल जेते। भोगै जिय एकहि तेते॥
सुत दारा होय न सीरी। सब स्वारथके हैं भीरी॥६॥

जलपय ज्यौं जियतन मेला। पैं भिन्न भिन्न नहिं भेला॥
तो प्रगट जुदे धन धामा। क्यों ह्वै इक मिलि सुत रामा॥७॥

पल-रुधिर राध-मल-थैली। कीकस वसादितैं मैली॥
नव द्वार वहै घिनकारा। अस देह करै किम यारी॥८॥

जो जोगनकी चपलाई। तातैं ह्वै आस्रव भाई॥
आस्रव दुखकार घनेरे। वुधिवंत तिन्हैं निरवेरे॥९॥

जिन पुण्यपाप नहिं कीना। आतम अनुभव चितदीना॥
तिन ही विधि आवत रोके। संवर लहि सुख अवलोके॥१०॥

निज काल पाय विधि झरना। तासौं निजकाज न सरना॥
तप करि जो कर्म खपावै। सोई शिवसुख दरसावै॥११॥

किन हू न करचो न धरै को। षटद्रव्यमयो न हरै को ॥
सो लोकमाहिं विन समता। दुख सहै जीव नित भ्रमता ॥१२॥

अन्तिम ग्रीवकलौंकी हद। पायो अनन्तविरियां पद ॥
पर सम्यकज्ञान न लाध्यो। दुर्लभ निजमैं मुनि साध्यो ॥१३॥

जे भाव मोहतैं न्यारे। दृग ज्ञान व्रतादिक सारे ॥
सो धर्म जबै जिय धारै। तवही सुख सकल निहारै ॥१४॥

सो धर्म मुनिनकरि धरिये। तिनकी करतूति उचरिये ॥
ताको सुनिकै भवि प्रानी। अपनी अनुभूति पिछानी ॥१५॥

छट्ठीढाल (हरिगीता छन्द)

षटकाय जीव न हननतैं सबविधि दरबहिंसा टरी।
रागादि भाव तिवारितैं हिंसा न भावित अवतरी ॥
जिनके न लेश मृषा जलतृन हू विना दीयो गहैं।
अठदशसहस विधि शीलधर चिदब्रह्ममैं नित रमि रहैं ॥१॥

अन्तर चतुर्दश भेद बाहिर संग दशधातैं टलैं।
परमाद तजि चउकर मही लखि समिति ईर्यातैं चलैं ॥
जग सुहितकर सब अहितकर श्रुतिसुखद सब संशय हरैं।
भ्रमरोग-हर जिनके वचन मुखचन्द्रतैं अमृत झरैं ॥२॥

छयालीस दोष विना सुकुल श्रावकतणे घर अशनको।
लें तप बढावन हेत नहिं तन पोषते तजि रसनको ॥
शुचि ज्ञान संजम उपकरन लखिकैं गहैं लखिकैं धरैं।
निर्जन्तु थान विलोकि तन-मल मूत्र श्लेषम परिहरैं ॥३॥

सम्यक प्रकार निरोधि मन-वच-काय आतम ध्यावतै।
तिन सुथिर मुद्रा देखि मृगगन उपल खाज खुजावते ॥
रसरूपगंध तथा फरस अरु शब्द शुभ असुहावने।
तिनमैं न राग विरोध पंचेन्द्रियजयन पद पावने ॥४॥

समता सम्हारैं थुति उचारैं बन्दना जिनदेवको।
नित करैं श्रुतरति धरैं प्रतिक्रम तजैं तन अहमेवको ॥

जिनके न न्हौन दन्तधोवन लेश अम्बर आवरन।
भूमाहिं पिछली रयनिमें कछु शयन एकाशन करन ॥५॥

इक वार दिनमैं लें अहार खड़े अलप निज पानमैं।
कचलोंच करत न डरत परिषहसों लगे निज ध्यानमैं॥
अरिमित्र महल मसान कंचन काच निंदन थुति करन।
अर्घावतारत असिप्रहारन,—मैं सदा समताधरन ॥६॥

तप तपैं द्वादश धरैं वृष दश रतनत्रय सेवैं सदा।
मुनिसाथमैं वा एक विचरैं चहैं नहिं भयसुख कदा॥
यों है सकल संजम चरित सुनिये स्वरूपाचरन अव।
जिस होत प्रगटै आपनी निधि मिटै परकी प्रवृति सब ॥७॥

जिन परम पैनी सुवुधि छैनी डारि अन्तर भेदिया।
वरनादि अरु रागादितैं निज भावको न्यारा किया॥
निजमाहिं निजके हेतु निजकर आपको आपै गह्यो।
गुनगुनी ज्ञाता ज्ञानज्ञेय मझार कछु भेद न रह्यो ॥८॥

तहँ ध्यान ध्याता ध्येयको न विकल्प वचभेद न जहां।
चिद्भाव कर्म चिदेश करता चेतना किरिया तहां॥
तीनों अभिन्न अखिन्न शुध उपयोगकी निश्चल दशा।
प्रगटी जहां दृग ज्ञान व्रत ये तीनधा एकै लशा ॥९॥

परमान नय निक्षेपको न उदोत अनुभव मैं दिखै।
दृग-ज्ञान-सुख-वलमय सदा नहिं आन भाव जु मोविखैं॥
मैं साध्य साधक मैं अवाधक कर्म अरु तसु फलनितैं।
चितपिंड चंड अखंड सुगुन,-करंडच्युत पुनि कलनितैं ॥१०॥

यों चिंत्य निजमैं थिर भये तिन अकथ जो आनन्द।
सो इन्द्र नाग नरेन्द्र वा अहमिंद्रकै नाहीं कह्यो॥
तवही शुकलध्यानाग्निकर चउघाति विधिकानन दह्यो।
सव लख्यो केवलज्ञानकरि भविलोकको शिवमग कह्यो ॥११॥

पुनि घाति शेप अघाति विधि छिनमांहि अष्टम भू वसैं।
वसुकर्म विनशैं सुगुन वसु सम्यक्त्व आदिक सव लसैं॥

संसार खार अपार पारावार तिर तीरहिं गये।
अविकार अकल अरूप शुध चिद्रूप अविनाशी भये ॥१२॥

निजमांहि लोक अलोक गुर परजाय प्रतिविंवित थये।
रहि हैं अनंतानंतकाल यथा तथा शिव परनये ॥
धनि धन्य हैं जे जीव नरभव पाय यह कारज किया।
तिनही अनादी भ्रमन पंचप्रकार तजि वर सुख लिया ॥१३॥

मुख्योपचार दुभेद यौं बडभागि रत्नत्रय धरैं।
अरु धरैंगे ते शिव लहैं तिन सुजस जल जगमल हरैं ॥
इमि जानि आलस हानि साहस ठानि यह सिख आदरो।
जबलों न रोग जरा गहै तबलौं जगत निज हितकरो ॥१४॥

यह राग आग दहै सदा तातैं समामृत सेइये।
चिर भजे विषय कषाय अब तौ त्याग निजपद वेइये ॥
कहा रच्यो परपदमें न तेरो पद यहै क्यों दुख सहै।
अब 'दौल' होउ सुखी स्वपद रचि दाव मत चूको यहै ॥१५॥

दोहा—इक नव वसु इक वर्षकी, तीज शुकल वैशाख।
कर्‍यो तत्व उपदेश यह, लखि बुधजन की भाख ॥१६॥

लघुधी तथा प्रमादतैं, शब्द अर्थ की भूल।
सुधी सुधार पढो सदा जो पावो भवकूल ॥१७॥

इति श्री पं० दौलतरामजीकृत छहढाला समाप्त।

प्रतिक्रमण कर्म

काल अनन्त भ्रम्यो जगमें, सविये दुःख भारी,
जन्म मरण नित किये पाप को, न्है अधिकारी।
कोटि भवांतर मांहि मिलन, दुर्लभ सामायिक,
धन्य आज मैं भयो योग, मिलियो सुखदायक ॥१॥

हे सर्वज्ञ जिनेश, किये जे पाप जु मैं अव,
ते सब मन-वच-काय-योग की, गुप्ति विना लभ।
आप समीप हजूर मांहि, मैं खडो खडो सव,
दोष कहूँ सो सुनो करो, नठ दुःख देहिं सब ॥२॥

क्रोध मान मद लोभ, मोह माया वश प्रानी।
दुःख सहित जे किये दया, तिनको नहिं आनी।
विना प्रयोजन एकेंद्रिय, द्वि, वि, चउ पंचेद्रिय,
आप प्रसादहिं मिटै दोष जो लग्यो मोहि जिय ॥३॥

आपस में इक ठौर भाप करि जे दुःख दीने,
पेलि दिए पग तले, दावि करि प्राण हरीने।
आप जगतके जीव जीते, तिन सवके नायक,
अरज करूं मैं सुनो, दोष मेटो दुखदायक ॥४॥

अंजन आदिक चोर, महा घनघोर पापमय,
तिनके जे अपराध भये, ते क्षमा क्षमा किय।
मेरे जे अव दोष भये, ते क्षमहु दयानिधि,
यह पडिकोणो कियो आदि षट्कर्म मांहि विधि ॥५॥

प्रत्याख्यान कर्म

जो प्रमाद वशि होय विराधे, जीव घनेरे,
तिनको जो अपराध भयो, मेरे अघ ढेरे।
सो सब झूट होऊँ, जगतपति के परसादै,
जा प्रसाद तें मिलै, सर्वं सुख दुख न लाघैं ।।१।।

मैं पापी निर्लज्ज, दया करि हीन महाशठ,
किये पाप अघ ढेर, पाप मति होय चित्त दुठ।
निंदू हूँ मैं बार बार, निज जिय को गरहूँ,
सब विधि धर्म उपाय पाय, फिर पापहि करहूँ ।।२।।

दुर्लभ है नर जन्म, तथा श्रावक कुल भारी,
सत्संगति संयोग, धर्म जिन श्रद्धा धारी।
जिन वचनामृत धार, समवर्ते जिन वानी,
तोहू जीव संघारे, धिक धिक हम जानी ।।३।।

इन्द्रिय लम्पट होय, खोय निज ज्ञान जमा सव,
अज्ञानी जिमि करै, तिसी विधि हिंसक व्है अव।
गमना गमन करतो, जीव विराधे भोले,
ते सब दोष किये निंदू, अव मन वच तोले ।।४।।

आलोचन विधि थकी, दोष लागे जु घनेरे,
ते सब दोष बिनाश होऊँ, तुम तें जिन मेरे।
बार बार इस भांति, मोह मद दोष कुटिलता,
ईर्षादिकतें भये निंदिये जे भयभीता ।।५।।

सब जीवन में मेरे, समता भाव जग्यो है,
सब जीय मो समसमता, राखो भाव लग्यो है।
आर्त रौद्र द्वय ध्यान छांडि, करहूँ सामायिक,
संयम मो कब शुद्ध होय, यह भाव वधायक ॥१॥

पृथ्वी जल अरु अग्नि वायु, चउ काय वनस्पति,
पंचहि थावर मांहि, तथा त्रस जीव बसै जीव।
बे इन्द्रिय तिय चउ पंचेन्द्रिय, मांहि जीव सव,
तिन ते क्षमा कराऊँ, मुझ पर क्षमा करो अब ॥२॥

इस अवसर में मेरे, सब सम कंचन अरू तृण,
महल मसान समान, शत्रु अरु मित्रहीं सम गण।
जामन मरण समान, जानि हम समता कीनी,
सामायिक का काल जिवै यह भाव नवीनी ॥३॥

मेरो है इक आतम तामें, ममत जु कीनो,
और सबे मम भिन्न, जानि समता रस भीनो।
मात पिता सुव बन्धु, मित तिय आदि सबै यह,
मौतें न्यावे जानि जथारथ, रूप कर्यो गह ॥४॥

मैं अनादि जगजाल मांहि, फंसिरूप न जाण्यो,
एकेन्द्रिय दे आदि, जन्तु को प्राण हराण्यो।
ते सब जीव समूह, सुनो मेरी यह अरजी,
भव भव को अपराध, छिमा किज्यो करि मरजी ॥५॥

स्तवन कर्म

नमो ऋषभ जिनदेव, अजित जिन जीति कर्म को,
संभव भव दुख हरण, करण अभिनन्द शर्म को।
सुमति सुमति दातार, तार भव सिंधु पार कर,
पद्म प्रभ पद्माभ, भानि भव भीति प्रीति घर ॥१॥

श्री सुपार्श्व कृतपाश, नाश भव जास शुद्ध कर,
श्री चन्दप्रभ चन्द्र कांतिसम, देह कांति धर।
पुष्पदन्त दमि दोष कोश, भवि पोष रोष हर,
शीतल शीतल करण हरण, भवताप दोष कर ॥२॥

श्रेयरूप जिनश्रेय ध्येय, नित सेय भव्य जन,
वासुपूज्य शतपूज्य, वासवादिक भव भव हन।
विमल विमल मति देन, अंतरात हैं अनन्त जिन,
धर्म शर्म शिव करण, शांति जिन शांति विधायिन ॥३॥

कुंथ कुंथु मुख जीव पाल, अर नाथ जाल हर,
मल्लि मल्ल सम मोह मल्ल, मारन प्रचार धर।
मुनि सुव्रत व्रत करण, नमत सुर संघहि नमि जिन,
नेमिनाथ जिन नेमि, धर्म रथ मांहि ज्ञान धन ॥४॥

पार्श्वनाथ जिन पार्श्व उपलसम, मोक्ष रमापति,
वर्द्धमान जिन नमूं, बमूं भव दुःख कर्मकृत।
मा त्रिधि मैं जिन संघरूप, चउवीस संख्य धर,
स्तवूं नमूं हूं बार बार, वंदूं शिव सुखकर ॥५॥

वन्दना कर्म

वन्दू मैं जिनवीर धीर, महावीर सुसन्मति,
वर्द्धमान अतिवीर, बंदि हूँ मन वच तन कृत।
त्रिशला तनुज महेश धीश, विद्यापति बन्दूं,
वन्दों नितप्रति कनक रूप, तनुपाय निकन्दूं ॥१॥

सिद्धारथ नृप नन्द, द्वंय दुखं दोष मिटावन,
दुरित दवानल ज्वलित ज्वाल, जग जीव उद्धारन।
कुंडलपुर लियं जन्म जगत, जिय आनन्द कारन,
वर्षं वहत्तर आयु पाय, सब ही दुख टारन ॥२॥

सप्त हस्त तनु तुंग, भंग कृत जन्म मरण भय,
बाल ब्रह्म मय ज्ञेय हेय आदेय ज्ञानमय।
दे उपदेश उधारि तारि, भव सिंधु जीव घने,
आप बसे शिव मांहि, ताहि वंदौ मन वच तन ॥३॥

जाके वंदन थकी दोष, दुःख दूरहि जावै,
जाके वंदन थकी मुक्ति तिय, सन्मुख आवै।
जाके वंदन थकी, वंद्य होवें सुरगन के,
ऐसे वीर जिनेश वंदि हूँ, क्रम युग तिनके ॥४॥

सामायिक षट्कर्म मांहि, दन यह पंचम,
वंदों वीर जिनेन्द्र, इन्द्र रात वंघ वंघ मन।
जन्म मरण भय हरो करो, अघ शांति शांतिमय,
मैं अघकोष सुपोष, दोष को दोष विनाशय ॥४॥

कायोत्सर्ग कर्म

कायोत्सर्ग विधान करूं, अन्तिम सुखदाई,
काय-त्यजनमय होय, काय सबको दुखदाई।
पूरब दक्षिण नमूं दिशा, पश्चिम उत्तर में,
जिन गृह वंदन करूं हरूं, भव पाप तिमिर मैं ॥१॥

शिरोनति मैं करूं नमूं, मस्तक कर धरिकै,
आवर्तादिक क्रिया करूं, मन वच मद हरिकै।
तीन लोक जिन भवन मांहि, जिन हैं जु अकृत्रिम,
कृत्रिम हैं द्वय अर्द्धद्वीप मांही बंदों जिम ॥२॥

आठ कोडि परि छप्पन लाख जु सहस सत्याणूं,
च्यारिशतक पर असी एक, जिन मन्दिर जाणूं।
व्यंतर ज्योतिषि मांहि, संख्य रहिते जिन मन्दिर,
ते सब वंदन करूं हरहूं मम पाप संघकर ॥३॥

सामायिक सम नाहिं, और कोउ वैर मिटायक,
सामायिक सम नाहिं, और कोउ मैत्री दायक।
श्रावक अणुव्रत आदि, अन्त सप्तम गुणथानक,
यह आवश्यक किये होय, निश्चय दुःखहानक ॥४॥

जे भवी आतम काज-करण उद्यम के धारी,
ते सब काज विहाय करो, सामायिक सारी।
राग द्वेष मद मोह क्रोध, लोभादिक जे सब,
बुध 'महाचन्द्र' विलाय जाय तातैं कीज्यो अब ॥५॥

श्री महावीराष्टकं स्तोत्रं

यदिये चैतन्ये मुकुर इव भावाश्चिदचितः ।
समं भांति ध्रौव्य-व्यय-जनि-ल संतोऽन्तरहिताः ।
जगत्साक्षी मार्ग प्रगटन परो भानुरिव यो ।
महावीर स्वामी नयन पथ गामी भवतु नः (मे) ॥१॥

अताम्रं पच्चक्षुः कमल युगलं स्पन्द रहितं ।
जनान् को पापादं प्रकटयति वाम्यन्तर मपि ।
स्फुटं मूर्तिर्यस्त प्रशमिव मयीं वाति विमला ।
महावीर स्वामी नयन पथगामी भवतु नः ॥२॥

नमन्ना केन्द्राली मुकुट मणि भाजाल जटिलं ।
लसत्यादांभोज द्वयमिह यदिपं तनुभृतां ।
भवज्वाला शांत्यै प्रभवति जलं वा स्मृतमपि ।
महावीर स्वामी नयन पथगामी भवतु नः ॥३॥

यदच्चर्भावेन प्रमुदितमना दर्दुर इह ।
क्षणादासीत्स्वर्मी गुणगण समृद्धः सुख निधिः ।
लभंते सद्भक्ताः शिव सुख समाजं किमुवदा ।
महावीर स्वामी नयन पथगामी भवतु नः ॥४॥

कनत्खर्गाभासोऽप्यपगत तनुर्ज्ञान निवहो ।
विचित्रात्माप्येको नृपतिवर सिद्धार्थ तनयः ।
अजन्मापि श्रीमान विगत् भव रागोद् भुतगतिः ।
महावीर स्वामी नयन पथगामी भवतु नः ॥५॥

यदया वाग्गंगा विविध नय कल्लोल विमला ।
वृहज्ज्ञानां भोभिर्जगति जनतां या स्नपयति ।
इदानी मप्येषा बुधजन मरालैः परिचिता ।
महावीर स्वामी नयन पथगामी भवतु नः ॥६॥

अनिर्वारोद्रेकस्त्रिभुवन जयी काम सुभटः ।
कुमारावस्थायामपि निजबलाद्येन विजितः ।
स्फुरन्नित्यानन्द प्रशम पद राज्याय स जिनः ।
महावीर स्वामी नयन पथगामी भवतु नः ॥७॥

महामोहांतक प्रशमनपरा कस्मिन भिषग् ।
निरापेक्षो बन्धुर्विदित महिमा मंगलकरः ।
शरण्यः साधूनां भवभयभृता मुत्तम गुणो ।
महावीर स्वामी नयन पथगामी भवतु नः ॥८॥

महावीराष्टकं स्तोत्रं भक्त्या भागंदुना कृतं ।
यः पठेच्छ्रुणुयाच्चापि स याति परमां गतिं ॥

निर्वाण-काण्ड

वीतराग वन्दो सदा, भाव सहित सिरनाय।
कांड निर्वाण की, भाषा सुगम बनाय।
अष्टापद आदीश्वर स्वामी, वासुपूज्य चंपापुरी नामी।
नेमिनाथ स्वामी गिरनार, वन्दौ भाव भगति उरधार।

चरम तीर्थंकर चरम शरीर, पावापुरी स्वामी महावीर।
शिखर सम्मेद जिनेश्वर वीस, भाव सहित वन्दों जगदीश।
वरदत्त राय रुइंद मुनिंद, सायरदत्त आदि गुण बृन्द।
नगरतार वर मुनि उठ कोडी, वंदो भाव सहित कर जोडी।
श्री गिरनार शिखर विख्यात, कोडी बहत्तर अरु सौ सात।
सम्बु प्रद्मुम्न कुमार द्वै भाय, अनिरुद्ध आदि नमूँ तसू पाय।
रामचन्द्र के सुत द्वै वीर, लाड नरिंद आदि गुण धीर।
पांच कोडी मुनि मुक्ति मझार, पावागिरि वेदों गिरधार।
पांडव तीन द्रविड राजान, आठ कोडो मुनि मुक्ति पयान।
श्री शत्रुजन गिरिके सीस, भाव सहित वंदो निशदिश।
जे वलिभद्र मुकतिमें गये, आठ कोडि मुनि और हो भये।
श्री गजपंथ शिखर सुविशाल, तिनके चरण नमूँ तिहूँ काल।
राम हनु सुग्रीव सुडील, गवगवाख्य नील महानील।
कोडि निन्याणवें मुक्ति पयान, तुंगी गिरी वंदों धरि ध्यान।
नंग अनंग कुमार सुजान, पंच कोडि अरु अर्घ प्रमान।
मुक्ति गये सिहुना गिर सीस, ते वंदों त्रिभुवन पतिके ईस।
रावण के सुत आदि कुमार, मुक्ति गये रेवा तट सार।
कोडि पंच अरु लाख पचास, ते वंदों धरि परम हुलास।
रेवानदी सिद्धवर कूट, पश्चिम दिशा देह जहां छूट।
द्वै चक्री दश काम कुमार, उठ कोडि वदो भव पार।
वडवाणी वडनयर सुचंग, दक्षिण दिश गिरि चूल उतंग।
इन्द्रजीत अरु कुंभ जु कर्ण, ते वंदों भव सायरतर्ण।
सुवरण भद्र आदि मुनिचार, पावा गिरिवर शिखर मसार।
चेलना नदी तोर के पास, मुक्ति गये वंदों नित तहां।
फल होडी वडगाम अनूप, पश्चिम दिशा द्रोण गिरिरूप।
गुरु दत्तादि मुनि सुरजहां, मुक्ति गये वंदों नित तहां।

बाल महाबाल मुनि दोय, नाग कुमार मिले त्रय होय।
श्री अष्टापद मुक्ति मझार, ते वंदों नित सुरति संभार।
अचलापुरकी दिशा इशान, तहां मेंढगिरी नाम प्रधान।
सा॰ तीन कोडी मुनिराय, तिनके चरण नमूँ चितलाय।
वंश स्थल वन के ठिग होय, पश्चिम दिशा कुंथु गिरी सोय।
कुलभूषण देशभूषण नाम, तिनके चरणनी करूँ प्रणाम।
दशरथ राजा के सुत कहे, देश कलिंग पांचसौ लहे।
कोटि शिला मुनि कोट प्रमाण, वंदन करूँ जोर जुगपान।
समवसरण श्री पार्श्वजिनन्द, रेसंदी गिरि नयना नन्द।
वर दत्तादि पंच रुषिराज, ते वंदों, नित धरम जिहाज।
मथुरापुर पवित्र उद्यान, जम्बू स्वामीजो गये निर्वाण।
चरम शरीरी पंचमकाल ते वन्दो, नित दिन दयाल।
तीन लोक के तीरथ जहां, नितप्रति वंदन कीजे तहां।
मन वच काय सहित सिरनाय, वंदन करहिं भविक गुण गाय।
सम्वत सतरह सौ इकताल, आश्विन सुदी दशमी सुविशाल।
भैया वंदन करहि त्रिकाल, जय निर्वाण काण्ड गुणमाल।

निर्वाण-गाथा

आवो बन्धु तुम्हें सुनावें, गाथा श्री निर्वाण की।
उस भूमिको नमन करो जो जीवन के कल्याण की।
भारत के उत्तर में देखो, पर्वत एक विशाल है।
गंगा, सिंधु नदियाँ बहती, हिमगर का प्रताप है।
मुकुट सरिखा शोभा देता, भारत माँ के भाल पर।
मानव जो गुण गाता उसका, ऋखबदेव के नाम पर।
कैलाश शिखर है याद दिलाता, रखबदेव निर्वाण की।
उस भूमिको को नमन करो जो, जीवन के कल्याण की।

आवो बन्धु तुम्हें सुनावे,

अब आवो दक्षिण में देखो, जहां देश सौराष्ट्र महान।
गिरनार शिखर-शोभा है देता, जूनागढ़ के निकट महान।
नेमिश्वर ने ध्यान धराया, किया वहां आत्म कल्याण।
उसी शिखर गिरनारके ऊपर, राजमतिने किया प्रयाण।
गिरनार शिखर शोभा है देता, नेमिके निर्वाण की।
उस भूमिके नमन करो जो, जोवन के कल्याण की।

आवो बन्धु तुम्हें सुनावे,

ये देखो पूरब की लाली, चमका जो जहान में।
उसी दिशा में विहार परा, चमका हिन्दुस्थान में।
उसका कोना कोना देखो, चमकाया भगवान ने।
वास पूज्य ने ध्यान धराया, चम्पापुर उद्यान में।
जनम भूमि है वही हमारे, वास पूज्य भगवान की।
उस भूमिको नमन करो जो, जीवन के कल्याण की।

आवो बन्धु तुम्हें सुनावे,

पावापुर का जल मंदीर जो, रखता अपनी शान है।
देख देखकर तृप्त न होता, जो गया वहां इन्सान है।
मूरत देखो वीर की, सुन्दर और महान है।
छत्र चमर ढलता है उस पर, अचरज एक महान है।

पावापुर भूमि जो है, वीरा के निर्वाण की।
उस भूमि को नमन करो जो, जीवन के कल्याण की।
आवो बन्धु तुम्हें सुनावे,

ये देखो सम्मेद शिखर का, कितना सुन्दर पर्वत है।
ऐसा लगता मनको मानो, भरा इसीमें अमृत है।
इसी सिखर के टोंक टोंक पर, बने जहां पद पद रज है।
असंख्यात मुनि मोक्ष पधारे, इसमें कौनसा अचरज है।
निर्वाण भूमि प्रसिद्ध है। तीर्थंकर विंस महान की।
उस भूमिको नमन करो जो, जीवन के कल्याण की।

आवो बन्धु तुम्हें सुनावे, गाथा श्री निर्वाण की।
उस भूमिको नमन करो, जो जीवन के कल्याण की।

देव शास्त्र गुरु की पूजा

तर्ज—तुमसे लागी लगन..................

स्थापना—देव शास्त्र गुरु, करले प्रीति शुरु आत्तम प्यारे। कट जायेगें......
अष्ट द्रव्य बनाले, जिनसे थाल सजाले पुण्य निखारे। कट जायेगें......

※ जल ※

जन्म जरा और मरण सहें हैं, सच्ची राह पे हम ना चले हैं।
जल तू ऐसे चढ़ादे, आवागनम मिटादे, दुख को भारे॥
कट जायेगें......

※ चन्दन ※

सारे जग में हम ऐसे तपे हैं, हमरे कर्म ना अब तक खपे हैं।
तुमरे चरणों में आये, शीतल चन्दन लाये, अर्पण सारे॥
कट जायेगें......

※ अक्षत ※

अब तक कितने ही भव हमने पाये, भव सागर हम तिर ना पाये।
उज्जवल तंदुल भी लाये, मोक्ष की भावना भाएं शरण तिहारे॥
कट जायेगें......

※ पुष्प ※

जिसने सबको हे नाच नचाया, ब्रह्मा, विष्णु भी बच नहीं पाया।
ऐसा काम मिटाना, पुष्प चरण में चढ़ाना, भावन भारे॥
कट जायेगें......

※ नैवेद्य ※

जड़ द्रव्यों को खाता रहा हूँ, भक्ष्य, अभक्ष्य ना गिन्ता रहा हूँ।
तेरे चरणों में आये, व्यंजन सरस हम लाये, क्षुधा नसारे॥
कट जायेगें......

* दीपक *

बाहर तो उजाला हैं जग में, मोह अंधेरा बसा हमरे मन में।
तुमरी पूज रचाऊं, दीपक चरण चढ़ाऊं, होय उजारे॥
कट जायेगें......

* धूप *

ज्यों अग्नि जलाती हैं लकड़ी, वैसे कर्मों में आतम को झकड़ी।
आठों कर्म जलेगें, धूप के संग जरेगें, अग्नि मंझारे॥
कट जायेगें......

* फल *

जग के फल को तो हमने चखे हें, फल जो उत्तम हैं हम ना लखे हैं
उत्तम फल हम पावें, तेरे चरण चढ़ावें, फल अति प्यारे॥
कट जायेयें......

* अर्घ *

हमको उत्तम ये नरभव मिला है, तेरी पूजा का पूण्य मिला हैं।
वसु विधि अर्घ बनाके, तेरे चरण चढ़ाके, शीश नवारे॥
कट जायेगें ॥......

* जयमाला *

दोहा:—आप सभी हैं भानू सम, मैं हूँ दीपक सार।
अल्प बुद्धि से लिख रहा, तुमरी में जयभाल॥

जब २ इस धरती पर फैली पापों की काली सी छाया।
मानव था बना पशु लगता हित अहित को समझ न पाया॥

उस समय प्रभु तुम आये थे हिंसा तम दूर भगाने को।
हिंसा से लिप्त दुःखी मानव को हित उपदेश सुनाने को॥

जब तुम आये धरती पर रतनों की धारा बर्षी थी।
नरकों में भी कुछ देर तलक मारो काटो नहीं मचती थी॥

यह तो हैं प्रभु के कुछ अतिसय इससे भी बड़े बड़े पाये।
कुछ तो देवों के निर्मित थे कुछ अनेक पुण्य जो संघ लाये॥

ऐसे देवाधि देव प्रभु हम सबका संकट दूर करो।
हममें जो कभी हैं आज तलक करके कृपा भरपूर करो॥

दुह कर्मों का तो नाश किया और दोष अठारह जीत लिये।
देवों ने समवसरण चरके सब जीवों के मन मुग्ध किये॥

उनमें जो खीरी वाणी मुख से गणधर ने उसको झेली थी।
फिर चारों गति के जीवों ने अपने अपने मन लेती थी॥

जिनवाणी में जो सार भरे अनेकांत व स्यादवाद भी है।
जिनके वल से सब धर्मों से जिन धर्म का ऊंचा नाम ही है॥

दुनियां में दुजे धर्म मिले, जिनके जो साधु होते है।
मन में कुछ और ही होता हैं वाणी में कुछ होते हैं॥

इन सबसे निराले साधु जो निर्गन्थ दिगम्बर होते हैं।
नहीं रागी द्वेशी होते है पर समतारन जो होतें हैं॥

गर्मी सर्दी और वर्षा में काया को कष्ट दिया करते।
तप की पैनी छैनी द्वारा कर्मों को काट दिया करते॥

जिनवाणी को जो धारण कर इस जग में विचरण करते है।
राजा और रंक पशु तक भी जिनको नतमष्तक करते हैं॥

इस सबसे करले विनती तू बाधाएं तेरी दूर करे।
मांझी वन करके नैया के गतियन की भंवर से दूर करे॥

श्रद्धा से "विमल" सब अर्घ चढ़ा अरदास करें सब २ गा २ के।
कितने ही पापी तार दिये, आशा हें हमको भी तारेगें॥

※ पूर्णार्घ ※

दोहा:—आया हूँ मैं शरण में, तुमरी कृपा निधान।
मेरे अवगुण छांड़िके, देदो मुक्ति दान॥

भजन

तर्जः—धरती धोरां री..................................

यह तो सिद्ध चक्र की पूजा, कर ले लहे ता भव तू दूजा।
यह तो जग की लैं कल्याणी कहती जिनवाणी।
कहती जिनवाणी॥

करलें जो सिद्धों का बंदन होते उनके कर्म विखंडन।
उनसे दूर ना मूक्ति रानी, कहतो जिनवाणी।
यह तो.............॥

इक नार थी मैना रानो, पति के हित पूजा की ठानी।
बन गई उसकी अमर कहानी कहती जिनवाणी।
यह तो.............॥

कर्मो का चक्कर आया, कोड़ी पति से व्याह रचाया।
मन में फिर भी नहीं अकुलानी कहती जिनवाणी।
यह तो.............॥

उसने अठ दिन पूजा करके प्रभुका नित अभिषेक जो करके।
छिड़का यन्त्र नखन का पानी कहती जिनवाणी।
यह तो.............॥

उसका पुण्य उदय जो आया पति का सारा कष्ट मिटाया।
उसको मिली गई जिन्दगानी कहती जिनवाणी।
यह तो.............॥

भजन

तर्ज:—जहां डाल २ पर सोने की.........................।

भगवान के मुख से जिसमें बहती सच्ची ज्ञान की धारा
वह समवसरण हें प्यारा।

जब प्रभु को केवल ज्ञान हुआ तो, इन्द्र का आसन डोला।
प्रवचन मण्डल रचने खातिर, वो कुबेर से बोला॥
धनपति ने मण्डप रचकर के फिर बोला प्रभु जयकारा
वह समवसरण...........।

बारह कोटे बने हुऐ थे, जिनकी छटा निराली।
जिनमें जग के जीव थे बैठे, भरने आत्म प्याली॥
अतिसय देखो के गाय और नाहर ने साथ
वह.........................।

दश अतिसय और आठ प्रतिहारज से युक्त बिराजे।
जिनकी भाषा अरध भाग घी सबके मन में राजे॥
जिनने जीते हैं रोग मरण आदि औ दोष अठारह
वह.........................।

देवों के चोदह अतिशय देखो धर्म चक्र हे आगे।
जहां जहां प्रभू जाते जग से दुष्काल है भागें॥
सब जीवो ने आकर जिसमें भगवन चरण पखारा
वह.........................।

हो सकता है हम सबने भी, वह रचना हो देखी।
फिर भी भटक रहें है, कारण उनकी राह॥
अवतो उस मण्डप की पूजा करके हम करे उद्धारा।
वह.........................।

जिस रस्ते पर चलकर भगवन ने पायी मुक्ति रानी।
मण्डप रचकर के तुने गेर अपनो राह पिछानी॥
तो तिर जायेगा तू भी मानव भेवसाग ये सारा।
(रचियता—विमल जैन) वह.........................।

सून लो, सून लो सजन, करलो प्रभुका भजन

सुन लो, सुन लो सजन करलो प्रभुका भजन।
सुखपाना जिंदगी का नहीं ठिकाना ॥
उठ प्रभात चाये भिस्कूट मँगाना।
भूल प्रभुको कभी न सुमरणा ॥

यह देखो नित्य करम समझा, इसको धर्म अब किन्तु सुखपाना
हांय कैसा यह आया जमाना, सुन लो सुन लो सजन –
उठ प्रभात पशु भी चरते, दिन रात विषय भोग करते
लीना मानुष जनम, किना यूंही खतम, पशु में फरक न।
ऐसा जीवन पशुसम समझना, सुन लो सुन लो सजन—
अनुमोल मनुष्य भव को जानो, इसको अब तो सही
पहचानो, करलो प्रभुका भजन, खोजो ना व्यर्थ चित्त
धर्म में लगाना, मानुष भवको ना व्यर्थ गुमाना
सुन लो सुन लो सजन—
तारा तू भी समझ सोच करले, मानुस भवकी भी
पहिचान करले, पाकर मानुस तन, करलो भगवत भजन
इसे न विसरना, जीवन पशु सम् न अब तो बिताना
सुन लो सुन लो सजन, करलो प्रभुका भजन
सुख पाना, जिन्दगीका नहीं ठिकाना

श्री सम्मेद शिखर कूट पूजन

एक बार वन्दे जो कोई,
ताहि नरक पशुगति नहीं होई ॥

ज्ञान धर कूट—कुन्थनाथ जिनराजका,कूट ज्ञान धर जेह मन वच तन कर पूछहूँ, शिखर सम्मेद यजेह ॥

ओम ह्री श्री कुन्थनाथ जिनेन्द्रादि मुनि ९६ कोडा कोड़ी ९६ करोड़ ३२ लाख ९६ हजार ७४२ मुनि इस कूट से सिद्ध भये तिनके चरणार बिन्द को मन, वचन, काय कर बारम्बार नमस्कार हो।

इस टोंक की भाव सहित वंदना करने से एक करोड़ उपवास का फल फल होता है।

२४ तीर्थङ्करों के गणधरों की कूट—
चौवीसों जिनराज के, गण नायक जेह।
मन वच तन कर पूजहूँ, शिखर सम्मेद यजेह ॥

ओम ह्री श्री गौतम स्वामी आदि गणधर देव ग्राम के उद्यान आदि भिन्न भिन्न स्थानों से निर्वाण पधारे तिनके चरणार बिन्द को मेरा मन वचन काय कर बारम्बार नमस्कार हो।

—: मित्रधर कूट :—

नमिनाथ जिनराज का, कूट मित्र धर जेह
मन वच तन कर पूजहूँ, शिखर सम्मेद यजेह ॥

ओम ह्रीं श्री नमिनाथ जिन्नेद्रादि मुनि नौ से कोडा कोडी १ अरब ४५ लाख ७ हजार ९४२ मुनि इस कूट से सिद्ध भये तिनके चरणार बिन्द को मेरा मन वचन काय कर बारम्बार नमस्कार हो।

इस टोंक की भाव सहित वंदना करने से एक करोड़ उपवास का फल होता है।

नाटक कूट—अरहनाथ जिनराज का, नाटक कूट है जेह
मन वच तन कर पूजहूँ, शिखर सम्मेद यजेह ॥

ओम् ह्रीं श्री अरहनाथ जिनेन्द्रादि मुनि ९९ करोड़ मुनि ९९ लाख इस कूट से सिद्ध भये तिनके चरणार विन्द को मेरा ९९९ मुनि मन वचन, कायसे बारम्बार नमस्कार हो।

इस टोंक की भाव सहित वंदना करने से एक करोड उपवास का फल होता है।

संवल कूट—मल्लिनाथ जिनराज का संवल कूट है जेह
मन वच तन कर पूजहूँ, शिखर सम्मेद यजेह ॥

ओम् ह्रीं श्री मल्लिनाथ जिनेन्द्रादि मुनि ९६ करोड़ मुनि इस कूट से सिद्ध भये तिनके चरणार विदको मेरा मन वचन काय से बारम्वार नमस्कार हो।

इस टोंक की भाव सहित वंदना करने से एक करोड उपवास का फल होता है।

संकुल कूट—श्रेयांसनाथ जिनराज का, संकूल कूट है जेह मन वच तन कर पूजहूँ, शिखर सम्मेद यजेह।

ओम् ह्रीं श्री श्रेयांसनाथ जिनेन्द्रादि मुनि ९६ कोडा कोडी ९६ करोड ९६ लाख ९ हजार ५४२ मुनि इस कूटसे सिद्ध भये तिनके चरणार विन्दको मेरा मन वचन काय से बारम्बार नमस्कार हो।

इस टोंक की भाव सहित वंदना करने के १ करोड़ उपवास का फल होता है।

सुप्रभ कूट—पुष्पदन्त जिनराज का, सुप्रभ कूट है जेह
मन वच तन कर पुजहूँ, शिखर सम्मेद यजेह ॥

ओम ह्रीं श्री पुष्पदन्त जिनेन्द्रादि मुनि १ कोडा कोडी ९९ लाख ७ हजार ४८० मुनि इस कूट से सिद्ध भए तिनके चरणार विदको मेरा मन, वचन, काय से बारम्वार नमस्कार हो।

इस टोंक की भाव सहित वंदना करने से एक करोड़ उपवास का फल होता है।

मोहन कूट

पदम प्रभु जिनराज का, मोहन कूट है जेह
मन वच तन कर पूजहूँ, शिखर सम्मेद यजेह ।।

ओम ह्रीं श्री पदमप्रभु जिनेन्द्रादि मुनि ९९ करोड़ ८७ लाख ४३ हजार ७२७ मुनि इस कूट से सिद्ध भये तिनके चरणार विन्द को मेरा मन वचन काय से वारम्वार नमस्कार हो ।

इस टोंक की भाव सहित वंदना करने से एक करोड़ उपवास का फल होता है ।

※ निरजर कूट ※

मुनि सुव्रत जिनराज का, निरजर कूट है जेह
मन वच तन कर पूजहूँ, शिखर सम्मेद यजेह

ओम ह्रीं श्री मुनि सुव्रतनाथ जिनेन्द्रादि मुनि ९९ कोडा कोडी ९७ करोड़ ९ लाख ९९९ मुनि इस कूट से सिद्ध भये तिनके चरणार बिंद को मेरा मन, वचन, कायसे वारम्वार नमस्कार हो ।

इस टोंक की भाव सहित वंदना करने से १ करोड़ उपवास का फल होता है ।

-: ललित कूट :-

चन्द्रप्रभु जिनराज का, ललित कूट है जेह
मन वच तन कर पूजहूँ शिखर सम्मेद यजेह ।।

ओम ह्रीं श्री चन्द्रप्रभु जिनेन्द्रादि मुनि ९८४ अरब ७२ करोड़ ८० लाख ८४ हजार ५९५ मुनि इस कूट से सिद्ध भये तिनके चरणार विंद को मेरा मन वचन काय से वारम्वार नमस्कार हो ।

इस टोंक की भाव सहित वंदना करने से १ करोड़ उपवास का फल होता है ।

आदिनाथ भगवान की टोंक

ऋषभदेव जिन सिद्ध हुए, गिरि कैलाश से जोय
मन वच तन कर पूजहूँ, शिखर नमूँ पद होय ॥

ओम् ह्रीं श्री ऋषभनाथ जिनेन्द्रादि मुनि १० हजार मुनि कैलाश पर्वत से मोक्ष गये तिनके चरणार विंद को मेरा मन, वचन, काय से वारम्वार नमस्कार हो।

* विद्युत वर कूट *

शीतलनाथ जिनराज का, कर विद्युत वर जेह
मन, वच, तन कर पूजहूँ, शिखर सम्मेद यजेह ॥

ओम् ह्रीं श्री शीतलनाथ जिनेन्द्रादि मुनि १८ कोडा कोडी ४२ करोड़ ३२ लाख ४२ हजार ९०५ मुनि इस कूट से सिद्ध भये तिनके चरणार विंद को मेरा मन, वचन काय से वारम्वार नमस्कार हो।

इस टोंक की भाव सहित वंदना करने से १ करोड़ उपवास का फल होता है।

* स्वयं प्रभू कूट *

अनन्तनाथ जिनराज का, कूट स्वयं भू वर जेह
मन वच तन कर पूजहूँ, शिखर सम्मेद यजेह ॥

ओम् ह्रीं श्री अनन्तनाथ जिनेन्द्रादि मुनि ९६ कोडा कोडी सत्तर करोड़ ७० लाख ७० हजार ७०० मुनि इस कूट से सिद्ध भये तिनके चरणार विंद को मेरा मन, वचन, काय से वारम्वार नमस्कार हो।

इस टोंक की भाव सहित वंदना करने से ९ करोड़ उपवास का फल होता है।

* धवल कूट *

सम्भवनाथ जिनराज का, धवल कूट धर जेह
मन वच तन कर पूजहूँ, शिखर सम्मेद यजेह ॥

ओम् ह्रीं श्री संभवनाथ जिनेन्द्रादि मुनि ९ कोडा कोडी ७२ ल
४२ हजार ५०० मुनि इस टोंक से सिद्ध भये तिनके चरणार विंद को मे
मन वचन काय से बारम्बार नमस्कार हो।

इस टोंक को भाव सहित वंदना करने से ४२ लाख उपवास का
प्राप्त होता है।

* वासुपूज्य भगवान का टोंक नं० १५ *

वासु पूज्य जिन सिद्ध भये, चम्पापुर से जेह
मन वच तन कर पूजहूँ, शिखर सम्मेद यजेह ।।

ओम् ह्रीं श्री वासु पूज्य जिनेन्द्रादि चम्पापुर मंदार गिरी से एक हज
मुनि सिद्ध भये तिनके चरणार विंद को मेरा मन वचन काय से बारम्
नमस्कार हो।

* आनन्द कूट *

अभिनन्दन जिनराज का, आनन्द कूट है जेह
मन वच तन कर पूजहूँ, शिखर सम्मेद यजेह ।।

ओम् ह्रीं श्री अभिनन्दन नाथ आनन्द जिनेंद्रादि मुनि ७२ कोडा क
७० करोड़ ७० लाख ४२ हजार ७०० मुनि इस कूट से सिद्ध भये ति
चरणार विंद को मेरा मन वचन कायसे बारम्बार नमस्कार हो।

इस टोंक की भाव सहित वंदना करने से १ लाख उपवास का
होता है।

* सुदत्तवर कूट *

धर्मनाथ जिनराज का कूट सुदत्तवर जेह
मन वच तन कर पूजहूँ, शिखर सम्मेद यजेह

ओम् ह्रीं श्री धर्मनाथ जिनेन्द्रादि मुनि २९ कोडा कोडी १९ करोड़
लाख ९ हजार ७९५ मुनि इस कूट से सिद्ध भये तिनके चरणार विंद को मे
मन वचन काय से बारम्बार नमस्कार हो।

इस टोंक की भाव सहित वंदना करने से १ करोड़ उपवास का फल होता है।

* अविचल कूट *

सुमतिनाथ जिनराज का अविचल कूट है जेह
मन वच तन कर पूजहूँ, शिखर सम्मेद यजेह ॥

ओम् ह्रीं श्री सुमतिनाथ जिनेंद्रादि मुनि १ कोडा कोडी ८४ करोड ७२ लाख ८१ हजार ७८१ मुनि इस टोंक से सिद्ध भये तिनके चरणार विंद को मेरा मन वचन काय से बारम्बार नमस्कार हो।

इस टोंक की भाव सहित वंदना करने से ९ करोड़ ३२ लाख उपवास का फल होता है।

* कुन्द प्रभु कूट शांतिनाथ कूट *

शांतिनाथ जिनराज का, कुन्द कूट है जेह
मन वच तन कर पूजहूँ, शिखर सम्मेद यजेह ॥

ओम् ह्रीं श्री शांतिनाथ जिनेन्द्रादि मुनि ९ कोडा कोडी ९ लाख ९ हजार ९९९ मुनि इस कूट से सिद्ध भये तिनके चरणार विंद को मेरा मन वचन काय से बारम्बार नमस्कार हो।

इस टोंक की भाव सहित वंदना करने से १ करोड़ उपवास का फल होता है।

* महावीर भगवान की टोंक नं० २ *

महावीर जिन सिद्ध भये, पावापुर से जोय
मन वच तन कर पूजहूँ, शिखर नमूँ पद होय ॥

ओम् ह्रीं श्री महावीर स्वामी पावापुर पद्म सरोवर स्थान से २६ मुनि सिद्ध पधारे तिनके चरणार विंद को मेरा मन वचन काय से बारम्बार नमस्कार हो।

—: प्रभास कूट :—

सुपार्श्वनाथ जिननाथ का, प्रभास कूट है जेह
मन वच तन कर पूजहूँ, शिखर सम्मेद यजेह ॥

ओम् ह्लीं श्री सुपार्श्वनाथ जिनेन्द्रादि मुनि ४६ कोडा कोडी ८४ करोड़ ७२ लाख ७ हजार ७४२ मुनि इस कूट से सिद्ध भये तिनके चरणार बिंद को मेरा मन वचन काय से वारम्वार नमस्कार हो।

इस टोंक की भाव सहित वंदना करने से ३२ करोड उपवास का फल होता है।

—: सुवीर कूट (संकुल कूट) :—

विमलनाथ जिनराज का, कूट सुवीर है जेह
मन वच तन कर पूजहूँ, शिखर सम्मेद यजेह ॥

ओम् ह्लीं श्री विमलनाथ जिनेन्द्रादि मुनि ७० कोडा कोडी ६० लाख ६ हजार ७४२ मुनि इस कूट से सिद्ध भये तिनके चरणार बिंद को मेरा मन वचन काय से वारम्वार नमस्कार हो।

इस टोंक की भाव सहित वंदना करने से १ करोड़ उपवास का फल होता है।

—: सिद्धवर कूट :—

अजितनाथ जिनराज का, सिद्धवर कूट है जेह
मन वच तन कर पूजहूँ, शिखर सम्मेद यजेह ॥

ओम् ह्रीं श्री अजितनाथ जिनेन्द्रादि मुनि १ अरब ८० करोड़ ५४ लाख मुनि इस कूट से सिद्ध भये तिनके चरणार बिंद को मेरा मन वचन काय से वारम्वार नमस्कार हो।

इस टोंक की भाव सहित वंदना करने से ३२ करोड़ उपवास का फल होता है।

नेमिनाथ भगवान की टौंक नं० २५

नेमिनाथ जिन सिद्ध भये, सिद्ध क्षेत्र गिरनार
मन वच तन कर पूजहूँ, भव दधि पार उतार ॥

ओम् ह्रीं श्री नेमिनाथ जिनेन्द्रादि मुनि शम्भु प्रद्युम्न अनिरुद्ध इत्यादि ७२ करोड़ ७०० मुनि गिरनार पर्वत से मोक्ष भये तिनके चरणार बिन्द को मेरा मन वचन काय से बारम्बार नमस्कार हो।

स्वर्ण भद्र कूट

पार्श्वनाथ जिनराज का, स्वर्ण भद्र है कूट
मन वच तन कर पूजहूँ, जाऊँ करम से छूट ॥

ओम् ह्रीं श्री पार्श्वनाथ जिनेन्द्रादि मुनि ८२ करोड़ ८४ लाख ४५ हजार ७४२ मुनि इस परम पुनित कूट से मोक्ष पधारे तिनके चरणार बिन्द को मेरा मन वचन काय से बारम्बार नमस्कार हो।

एक बार इस कूट का शुद्ध भाव से ध्यान व दर्शन करने के पशुगति से छुटकारा हो जाता है। वंदना करने से १६ करोड़ उपवास का फल होता है।
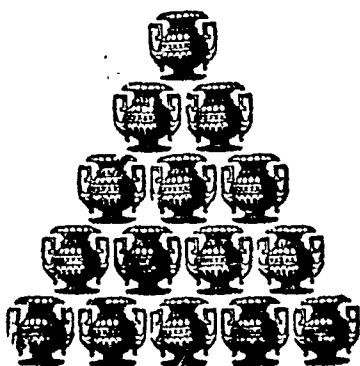
सरस्वती पूजा

जनम जरा मृतु छय करै, हरै कुनय जडरीति।
भवसागरसों ले तिरै, पूजै जिनवचप्रीति ॥१॥

ओंह्वी श्री जिनमुखोद्भवसरस्वतिवाग्वादिनि ! अत्र अवतर। संवौषट्।
ओं ह्लीं श्रीजिनमुखोद्भवसरस्वतिवाग्वादिनि। अत्र तिष्ठ तिष्ठ। ठः ठः।
ओं ह्वी जिनमुखोद्भवसरस्वतिवाग्वादिनि ! अत्र मम सन्निहितो भव भव। वषट्।

छीरोदधिगंगा, विमल तरंगा, सलिल अभंगा, सुखसंगा।
भरि कंचन भारी, धार निकारी तृषा निवारी, हितचंगा ॥
तीर्थंकरकी धुनि, गणधरने सुनि, अंग रचे चूनि ज्ञानमई।
सो जिनवरवानी, शिवसुखदानी, त्रिभुवन मानी पूज्य भई ॥१॥

ओं ह्लीं श्रीजिनमुखोद्भसरस्वतीदेव्यै जलं निर्वपामीति स्वाहा ॥१॥

करपूर मँगाया, चंदन आया, केशर लाया, रंग भरी।
शारदपद वंदों मन अभिनंदों, पापनिकंदों, दाह हरी ॥ तीर्थङ्करकी०॥

ओं ह्वीं श्रीजिनमुखोद्भवसरस्वतोदेव्यै अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा ॥३॥

वहुफूलसुवासं, विमलप्रकाशं, आनंदरासं लाय धरे।
मम काम मिटायो, शील वढायो, सुखउपजायो दोष हरे ॥तीर्थङ्करकी०॥

ओं ह्लीं श्रीजिनमुखोद्भवसरस्वतीदेव्यै पुष्पंनिर्वपामीति स्वाहा ॥४॥

पकवान वनाया, वहुघृतलाया, सव विध भाया मिष्टमहा।
पूजूं थुति गाऊं, प्रीति वढ़ाऊं, क्षुधा नशाऊं, हर्ष लहां ॥तीर्थङ्करकी०॥

ओं ह्लीं श्रीजिनमुखोद्भवसरस्वतीदेव्यै नवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥५॥

करि दीपक-जोतं, तमछय होतं, ज्योति उदोतं, तुमहिं चढ़ै।
तुम हो परकाशक भरमविनाशक हम घट भासक, ज्ञान वढ़ै ॥तीर्थंकरकी०॥

ओं ह्लीं श्री जिनमुखोद्भवसरस्वतीदेव्यै दीपं निर्वपामीति स्वाहा ॥६॥

शुभगंध दशोंकर, पावकमैं धर, धूप मनोहर खेवत हैं।
सब पाप जलावैं, पुण्य कमावैं, दास कहावैं सेवत हैं ॥तीर्थंकरकी०॥

ओं ह्रीं श्रीजिनमुखोद्भवसरस्वतीदेव्यै धूपं निर्वपामीति स्वाहा ॥७॥

बादाम छुहारी–लोंग सुपारी, श्रीफल भारी, ल्यावत हैं।
मनवांछित दाता, मेट असाता, तुम गुन माता, ध्यावत हैं ॥तीर्थंकरकी०॥

ओं ह्रीं श्रीजिनमुखोद्भवसरस्वतीदेव्यै फलं निर्वपामीति स्वाहा ॥८॥

नयननसुखकारी, मृदुगुनधारी, उज्ज्वलभारी, मोल धरैं।
शुभगंधसम्हारा, वसन निहारा, तुमतन धारा ज्ञान करै ॥तीर्थंकरकी०॥

ओं ह्रीं श्रीजिनमुखोद्भवसरस्वतीदेव्यै वस्त्रं निर्वपामीति स्वाहा ॥९॥

जलचंदन अच्छत, फूल चरू चत दीप धूप अति फल लावैं।
पूजाको ठानत, सो नर द्यानत, सुख पावैं ॥तीर्थंकरकी० ॥१०॥

ओं ह्रीं श्रीजिनमुखोद्भवसरस्वतीदेव्यै आर्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥१०॥

अथ जयमाला। सोरठा

ओंकार धुनिसार, द्वादशांगवाणी विमल।
नमों भक्ति उर धार, ज्ञान करै जडता हरै॥

पहलो आचारांग वखानो। पद अष्टादश सहस प्रमानो।
दूजो सूत्रकृतं अभिलाषं। पद छत्तीस सहस गुरु भाषं ॥१॥

तीजो ठाना अंग सुजानं। सहस वियालिस पदसर धानं॥
चौथो समवायांग निहारं। चौसठ सहस लाख इकधारं ॥२॥

पंचम व्याख्याप्रज्ञपति दरसं। दोय लाख अट्ठाइस सहसं॥
छट्ठो ज्ञातृकथा विसतारं। पांचलाख छप्पन हजारं ॥३॥

सप्तम उपासकाध्ययनंगं। सत्तर सहस ग्यारलख भंगं॥
अष्टम अंतकृतं दस ईसं। सहस अठाइस लाख देईसं ॥४॥

नवम अनुत्तरदश सुविशालं। लाख बानवै सहस चवालं॥
दशम प्रश्नव्याकरण विचारं। लाख तिरानव सोल हजारं ॥५॥

ग्यारन सूत्रविपाक सु भाखं । एक कोड चौरासी लाखं ॥
चार कोडि अरु पन्द्रह लाखं । दो हजार सब पद गुरुशाखं ॥६॥

द्वादश दृष्टिवाद पनभेदं । इकसौ आठ कोडि पन वेदं ॥
अडसट लाख सहस छप्पन हैं । सहित पंचपद मिथ्या हन हैं ॥७॥

इक सौ बारह कोडि वखानो । लाख तिरासी ऊपर जानो ॥
ठावन सहस पंच अधिकाने । द्वादश अंग सर्व पद माने ॥८॥

कोडि इकावन आठ हि लाखं सहस चुरासी छहसौ भाखं ॥
साढ़े इकीस सिलोक बताये । एक एक पदके ये गाये ॥९॥ घत्ता—

जा वानीके ज्ञानमैं, सूझै लोक अलोक ।
'द्यानत' जग जयवंत हो, सदा देत हों धोक ॥

ओं ह्रीं श्रीजिनमुखोद्भवसरस्वतीदेव्यै महार्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

श्रुत पंचमी कथा

वीतराग सर्वज्ञ अन्तिम तीर्थंकर देवाधिदेव श्री महावीर स्वामी परमात्माने दिव्य ध्वनि के द्वारा जो हितोपदेश दिया था उसे झेलकर गौतम गणधर देवने एक मुहूर्त में बारह अंगों की रचना की । बारह अंगों में तो अपार श्रुत ज्ञान का समुद्र भरा हुआ है। महावीर भगवान के मोक्ष पधारने के पश्चात् परम्परा से गौतम स्वामी, सुधर्म स्वामी, और जम्बू स्वामी ये तीन केवली हुवे। तथा आचार्य विष्णु, नन्दि, अपराजित, गोवर्धन और भद्रबाहु ये पांच श्रुत केवलि भगवंत् १६२ वर्ष में हुए। इसके वाद बारह अंग का ज्ञान परम्परा क्रमशः क्षीण होता हुआ चला आ रहा था, और उसका कुछ भाग धर सेनाचार्य देवको गुरु परम्परा से मिला था। महावीर भगवान के मोक्ष गमन के ६८३ वर्षो के बाद धर सेनाचार्य देव हुए। वे सौराष्ट्र के गिरनार पर्वत की चन्द्रगुफा में रहते थे। भगवान की परम्परा से चले आ रहे श्रुत के विच्छेदका भय होने पर उन्होंने महिमा नगरी में धर्मोत्सव निमित्त एकत्रित हुए दक्षिण के आचार्यो पर एक पत्र लिखकर भेजा। उस लेखके द्वारा धर सेनाचार्य देव के द्वारा भेजे हुए अभिप्राय को समझकर आचार्यो ने शास्त्र का अर्थं ग्रहण-धारण करने में समर्थ महा विनयवंत व शीलवंत ऐसे दो मुनिओं को धर सेनाचार्य देव के पास भेजा। श्री गुरु के द्वारा भेजे जाने पर जिन्हें अत्यधिक तृप्ति हुई है, जो उत्तम देश, उत्तमाकुल, और उत्तम जाति में उत्पन्न हुए मैं, समस्त कलाओं में जो निपुण हैं ऐसे के दोनों मुनिवरों ने तीन वार आचार्य की आज्ञा लेकर धर सेनाचार्य देव के पास आने के लिए प्रस्थान किया।

जब वे दोनों मुनि धर सेनाचार्य देव के पास आ रहे थे, तब यहां धर सेनाचार्य देव को रात्रि के अन्तिम प्रहर में ऐसा शुभ स्वप्न आया कि दो महान् सुन्दर सफेद बैल भक्ति पूर्वक तीन प्रदक्षिणा देकर नम्रता से चरणों में नमन कर रहें हैं। इस प्रकार का मंगल स्वप्न देखने से सन्तुष्ट होकर आचार्य देव ने "जयवंत हो श्रुत देवता' ऐसे आशीर्वचन का उच्चारण किया।

उस दिन पूर्वोक्त दोनों मुनिवर आ पहुँचे, और भक्ति पूर्वक आचार्य देव के चरणों में वंदन किया। महाधीर, गम्भीर और विनय की मूर्ति ऐसे दोनों मुनियों ने तीसरे दिन धर सेनाचार्य देव के पास विनय पूर्वक निवेदन किया कि प्रभो। इस कार्य के लिये हम दोनों आपके चरण कमलों में आये हैं। जब

मुनियों ने ऐसा निवेदन किया तब आचार्य देव ने बहुत अच्छा कल्याण हो ऐसा आशीर्वचन कहा।

इसके वाद यद्यपि शुभ स्वप्न द्वारा उन दोनों मुनियों की विशेषता जान ली थी, तथापि परीक्षा करने के लिए घर सेनाचार्य देव ने उन दोनों साधुओं को दो मन्त्र विद्या देकर कहा कि दो दिन के उपवास पूर्वक इस विद्या को सिद्ध करो।

आचार्य देव ने परीक्षा करने के लिए एक को विद्या के मन्त्र में अधिक एक अक्षर दिया था, और दूसरे को कम अक्षर दिया था दोनों मुनिवरों को विद्या की सिद्धि होने पर द' देवियां दिखाई दी, परन्तु उनमें से एक दो दांत वाहर निकले हुए थे, उन्हें देखकर मुनिवरों ने और दूसरी कानी (हीन चक्षु वाली) थी। सोचा कि देवता लोग कभी विकृतांग नहीं होते। इस लिये अवश्य विद्या के मन्त्र में कुछ गलती है। महा समर्थ ऐसे उन मुनिवरों ने मन्त्राक्षरों को ठीक किया, जिसमें अधिक अक्षर थे उन्हें निकाल दिये, और जिसमें कम अक्षर थे उन्हें वरावर कर लिये। फिर मन्त्र को पढ़ने पर दोनों देवियां ठीक ढंग से दिखलायी दीं। घर सेनाचार्य देव के पास जाकर उन्होंने विनय पूर्वक समस्त वृतान्त कहा, जिसे सुनकर आचार्य देव सन्तुष्ट हुवे, और फिर उन्होंने भगवान की परम्परा से चले आ रहे अगाथ श्रुत ज्ञान का पढ़ाना प्रारम्भ किया, 'और आषाढ़ शुक्ला एकादशी के प्रातःकाल सिद्धान्त ग्रन्थ का पठन समाप्त होने पर 'भूत' जाति के व्यन्तर देवों ने वादित्रनाय पूर्वक दोनों की पूजा की। भूत जाति के देवों ने पूजा की, इसलिये घर सेनाचार्य दव ने एक का नाम 'भूतवली' रखा और दूसरे मुनि के दांत देवों ने ठीक कर दिये इसलिये उनका नाम 'पुष्पदन्त' रखा, और इस प्रकार घर सेनाचार्य देव ने श्रुत ज्ञान दकर शीघ्र ही 'पुष्पदन्त' और भूतवली मुनिवरों को वहां से विदाई किये।

इसके वाद दोनों मुनिवरों ने श्रुतज्ञानंको (षट्खण्डागम्) के रूप में गून्था और गुजरात के अंकलेश्वर में (लगभग दो वर्ष पहले) ज्येष्ठ शुक्ला पंचमी के दिन चतुर्विध संघ ने मिलकर उस श्रुत ज्ञान के महिमा का वड़ा भारी उत्सव किया। इस प्रकार वीतरागी संतों ने श्रुतज्ञान का प्रवाह चालू रखा, वह दिन आज भी श्रुत पंचमी के रूप में हम मनाते हैं।

सर्वज्ञ भगवान की सीधी परम्परा से आया हुवा ऐसा श्रुतज्ञान अच्छिन्न रह गया, अतः हर्षित होकर चतुर्विध संघ ने वहुत वड़े महोत्सव पूर्वक श्रुत-

ज्ञान बहुमान किया, तबसे भारत में वह दिन श्रुत पंचमी के रूप में प्रसिद्ध हैं। और उसका महोत्सव प्रतिवर्ष मनाया जाता है। आज कल तो इसका विशेष प्रचार होता जा रहा है। कई स्थानों पर तो इस महोत्सव को आठ दिन तक मनाते हैं और श्रुतज्ञान की बहुत प्रभावना करते हैं, श्रुत पंचमी का दिन बहुत महान है। अहा सर्वज्ञ भगवान की वाणी का प्रवाह दिगम्बर संतों ने जीवंत रखा है। बहुत उपकार है उनका।

पुष्पदन्त और भूतबलि आचार्यों ने जो 'षटखंडागम्' की रचना की उस पर वीर सेनाचार्य देवने 'धवला' नाम की महान टीका की रचना की है। ये वीर सेन स्वामी भी ऐसे एक समर्थ थे कि स्वार्थ गामिनी (सकल अर्थ में पारगंत) ऐसी उनकी नैसर्गिक प्रज्ञाको देखकर बुद्धिमान लोगों को सर्वज्ञ की सत्ता में सन्देह नहीं रहता, अर्थात् उनकी अगाथ ज्ञान शक्ति को देखते ही बुद्धिमानों को सर्वज्ञ की प्रतीति हो जाती थी। ऐसी अगाध ज्ञान शक्ति वाले आचार्य देव ने 'षट्खण्डागम्' की टीका रची है। यह परमागम सिद्धान्त शास्त्र बहुत वर्षों से ताड पत्र पर लिखे हुए हैं, और सुरक्षित रखे हैं। इसी कारणवश श्रुत पंचमी मनाते हैं।

ॐ

मंगला चरण

श्री तीर्थंकर चौवीस के नाम महा मंगलमई ॥
इक्कीस बार पढ़ लीजिये, सेवा बहु विध हो गई ॥१॥

मंगल गिर कैलाश ऋषभ जिन मोक्ष पधारे ॥
मंगलीक सम्मेद शिखर जिन बोस सिधारे ॥२॥

चम्पापुर मंदार शौल मंगल सुखदाई ॥
वासु पूज्य भगवान पंच कल्याणक भाई ॥३॥

गिरनार शिखर मंगलमई, नेमीश्वर शिव नियं वरी ॥
श्री वर्द्धमान निर्वाण सर पावापुर आनन्दकरी ॥४॥

मंगल श्री गंज पन्थ सिद्धवर कूट तार वर ॥
शत्रुञ्जय गिर चूल द्रोण गिरी गढ़ सोना गिर ॥५॥

वडवाणी गिर कुंथ मेढंगिर तुंग उतुंगा ॥
कोड शिला पावा गिर तट एश वित गेगा ॥६॥

मथुरा काकन्दी गजपुरी, कोसांबी मिथुला रत्नपुर ॥
सावस्थि विनिता चन्दपुर मछलपुर आनन्द प्रचुर ॥७॥

मंगल चम्पापुरी कम्पिला, मंगल भारी ॥
राजग्रही शुभ धाम पंचगिर मंगल कारी ॥८॥

शोरीपुर विख्यात, वटेश्वर पटना माना ॥
कुण्डलपुर गुण चैत सरोवर मंगल माना ॥९॥

विन्ध्यवली प्रभु पार्श्व, केवल ज्ञान ही पाया ॥
शत शत वन्दन करूं, जोरि कर मन हर्शाया ॥१०॥

यह संकल भौम मंगलकरी, वन उपवन नदी तडाग स्थल ॥
जहां इन्द्राधिक जिनराज के कल्याणक कीने प्रबल ॥११॥

॥ श्री पार्श्वनाथाय नमः ॥

श्री दि० जैन समाज पार्श्वनाथ अतिशय क्षेत्र बिजोलिया पूजा

रचयिता—स्वर्गीय कामदार सा० हीरालालजी बघेरवाल ठी० बिजोलियां

दोहा—पंच परमेष्टि चरण नमूं, धर चित्त में प्रभू ध्यान ॥
श्री पार्श्वनाथ क्षेत्र तनी, पूजा रचूं महान ॥१॥

अडिल छन्द

भारत में जो देश शिरोमणि जानिये,
नवल नाम मेवाड़ प्रसिद्ध ही मानिये ॥
तामध उपर माल प्रदेश सु सोहना,
राजधानीता नगरी अति मन मोहना ॥ १ ॥

नगरी पुरा तन नाम विन्ध्यावली जानिये,
प्रचलित नाम विख्यात बिजोलियां मानिये ॥
ताकि अग्नि कोण दिशा में है सही,
अतिशय क्षेत्र नाम पार्श्व प्रभू है मही ॥२॥

तहां बिराजे पार्श्वनाथ जिन रायजी,
आह्वाहन विधी करूं हर्ष गुण गायजी ॥
थापूं तुम्हे जिननाथ आय कर तिष्ठो,
व्याधि रोग नशाय करम सब नष्ट यो ॥३॥

स्थापना।

ॐ ह्रीं श्री विद्यवल्ली नगरी निकट अतिशय क्षेत्रस्थ श्री पार्श्वनाथ जिनेन्द्र अत्र अवतर संयोष्ट् आह्वाननम् अत्र तिष्ठ तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम् अत्र मम संन्निहितो भव भव वषट् सन्निधापनम्।

(छन्द जोगीरासा)

निरमल नीर सुकंचन झारी, भरकर चरण चढाऊं।
वेग हरो प्रभू भव पीरा मुझ तुम चरनन चित्त [लाऊं ॥

वामा नन्दन कल्प तरु प्रभ पार्श्वनाथ जिनराई ॥
मन वांछित फल दायक स्वामी स्वर्ग मोक्ष सुखदाई ॥१॥

ॐ ह्री श्री विन्ध्यवल्ली नरी अतिशय क्षेत्रस्थ श्री पार्श्वनाथ जिन्द्राय जन्म जरा मृत्यु विनाशनाय जलं निर्विपामीति स्वाहा ॥

बावन चन्दन कदली नन्दन, हर्ष चित्त घिस लायो ॥
चरनन ढिग तुम भाव भक्ति सू आनन्द युक्त चढायो ॥२॥
वामानन्दन ॥ चन्दनं

उज्जवल अखण्डित शाली तन्दूल पूंज धरो तुम आगे ॥
अक्षय पद तुम देवो स्वामी भाग हमारे जागे ॥३॥
बामानन्दन ॥ अक्षतं

कल्प तरु सम पुष्प सुगन्धित, स्वर्ण थार भर लायो ॥
चरण कमल को जजत करत ही काम बाण नशायो ॥४॥
बामानन्दन ॥ पुष्पं

खाजा ताजा लाडू फेनी व्यंजन शुद्ध बनाके ॥
क्षुधा रोग के नाशन कारण, पूजन काज चढ़ाके ॥५॥
बामानन्दन ॥ नैवद्यं

जगमग जगमग ज्योति दशों दिश रत्न दीप सम जानो ॥
प्रभू के सन्मुख करत आरती, मोह तिमिर दुख मानों ॥६॥
बामानन्दन ॥ दीप

अगर कपूर सुगन्धित चन्दन, कूट ही धूप बनाई ॥
श्री जिनकी के सन्मुख खेऊ अष्ट करम जर जाई ॥७॥
बामानन्दन ॥ धूपं

श्री फल लोंग बदाम सुपारी, केला आदिक लाया ॥
महा मोक्ष फल पावन कारन प्रभू के चरण चढ़ाया ॥८॥
वामानन्दन ॥ फलं

जल चन्दन अक्षत पुष्पहि, चरु दीप धूप चल लाके ॥
अर्घ चढाऊं तूर बजाऊं हरष हरष गुण गाके ॥९॥
वामानन्दन ॥ अर्घं

पंच कल्याणक अर्घ

अडिल छन्द

कृष्ण बैशाख की दूतिया दिन जो मानिये,
तो दिन गर्भ कल्याणक मंगल जानिये।
गर्भ कल्याणक महोत्सव इन्द्रादिक कियो,
वामा माता आनन्द हिय अति भयो॥

ॐ ह्रीं बैसाख कृष्णा दूतिया गभ मंगल प्राप्ताये श्री पार्श्वनाथ जिनेन्द्राय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा॥१॥

पोष कृष्ण एकादशि शुभ तिथि जानिये,
जन्म कल्याणक महोत्सव ता दिन मानिये।
त्रिभुवन के जीवों को अति आनन्द भयो,
इन्द्र दिक ने जन्म महोत्सव तब कियो॥

ॐ ह्रीं पोष कृष्णा एकादश्या जन्म मंगल प्राप्ताय श्री पार्श्वनाथ जिनेन्द्राय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा॥२॥

पोष कृष्ण एकादशि फिर जानिये,
हो उदास जगवास दिगम्बर मानिये॥
बारह भावन चिन्तवन कर दीक्षा धरी,
तप कल्याणक भक्ति इन्द्रादिक करी॥

ॐ ह्रीं पोष कृष्णा एक दशयां तपो मंगल मण्डिताय श्री पार्श्वनाथ जिनेन्द्राय अर्घं मिर्वपामीति स्वाहा॥३॥

चैत्र चतुर्थी कृष्णा पक्ष जा शुभ दिना,
केवल ज्ञान उपाय घातिया को हना।
पूजा करी इन्द्रादिक ने बहु चावसि,
हम पुजहि मन वच तन कर भावसों॥

ॐ ह्री चैत्र कृष्णा चतुर्थी दिने केवल ज्ञान प्राप्तय श्री पार्श्वनाथ जिनेन्द्राय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा॥४॥

चोपई

सित सावन सातें शुभ आई, शिवनारी जुवरी जिनराई।
सम्मेदा चल मुक्ति सुथाना, हम पूजे यहां मोक्ष कल्याना ॥

ॐ ह्रीं सावण शुक्ला सप्तमी दिने मोक्ष मंगल माण्डिताय श्री पार्श्वनाथ जिनेन्द्राय अर्घं निर्वपामोति स्वाहा ॥५॥

जय माला

दहा

जय पार्श्वनाथ देवाधि देव, मन वच तन करहु चरण सेव।
शत इन्द्रनि करि तुम वन्दनीक, नाना स्तवन कर पूजनीक ॥१॥

मैं अल्प बुद्धि मति मन्द जान, कैसे वरणू तुम गुण महान् ॥
गणधर नहीं पावे गुणन पार, तुम गुण अथाह अपने अपार ॥२॥

तुम बाल ब्रह्मचारी जिनेश, नम मान कर्मठ भंजन दिनेश ॥
यह अतिशय क्षेत्र आपतात, तुम नाम तनो है जग विख्यात ॥३॥

यह अतिशय क्षेत्र प्राचीन जान, विक्रम सम्वत दो दशहूँ मान ॥
छब्वीस वर्ष तापर सुजान, ता समय बना यह क्षेत्र मान ॥४॥

लोलार्क नामहि श्रेष्ठि तास, उज्जैनी नगरी है निवास ॥
कुल पोरवाल श्रावक जुसोय, तहि स्वप्न भयो इस क्षेत्र सोय ॥५॥

तव आया वेग इस भूमि थान रचवाये तिन भवनादि मान ॥
इस क्षेत्र तनि प्रशस्ति सोय है शिला लेख निज खुद त सोय ॥६॥

तासू यह कथन कथा के थान, आगे फिर रचना करू बखान ॥
इस क्षेत्र तनी रचना विचित्र चो तरफा वाटिका है पवित्र ॥७॥

शुभ कोट वन्यो चो तरफ धार, है पश्चिम दिश उतंग द्वार।
दिश पूव निकट निज कोट सोय, सरिता लघु रेवा वहत सोय ॥८॥

चो तरफ जान पत्थर चट्टान, मुनि मन रचन ध्यानस्थ थान ॥
यह चमत्कारी क्षेत्र प्रसिद्ध, यह मोक्ष थान भी होय सिद्ध ॥९॥

तो नांहीं संशय रंच होय, परसत परित्रयास्थान होय ॥
रेवा तट एक ऊंची विशाल, पत्थर चट्टान तसु सुनहु हाल ॥१०॥

विस तरित एक जोशिला लेख तस समान ना कहि अन्य देख ॥
उत्तम शिखर हि नामक पुराण इस क्षेत्र तनो यहा तम्य जान ॥११॥

है खुदित शिला पर जान सोय, पर रचना क्षेत्र बाद होय ॥
निज मन्दिर क्षेत्र शिखराकार, तामे इक देवरी चितधार ॥१२॥

दो हाथ तनो ऊंची सुमान, बन रही एक पत्थर सुजान ।
ता मध्य लघु इक लीक सोय ता ताकतनी मेराप होय ॥१३॥

तामे अंकित तेबीस जान, जिन बिम्ब तहां है विद्यमान ॥
पर बीच ताक प्रतिमान कोय, ताको अचरज सब चित होय ॥१४॥

ता मन्दिर केचो "वि" दिलाधार, ईक ईक देवरी दिश बनीचार
इन देवरी बीच प्रतिमान कोय, यह भी अचरज सब चितहोय ॥१५॥

यो पार्श्व तनो क्षत्रों विख्यात पर प्रतिमा कै न पतो भ्रात ॥
मन्दिर से उत्तर दिशा जान इक कुण्ड बन्यो अति सरस जान ॥१६॥

ता मध्यवापिका एक जोय निरमल निज नोर सु थान होय ॥
पूर्व दिश नौ चौक्या रसाल, तहां रहत यात्री सदा काल ॥१७॥

दक्षिण दिश रचना जान नैक तामध्य वापिका और एक ॥
मन्दिर मण्डप निज पूर्वद्वार तो सम्मुख रचना चित्त धार ॥१८॥

तो मान स्थंम निज लेख युक्त तसु चरण चिह्न आचार्य युक्त ॥
तापर अङ्कित प्रतिमाभिराम, है पद्मनन्दी शुभ चन्द्र नाम ॥१९॥

तिन मरण समाधि थान जोय, तस लेख देख सब ज्ञात होय ॥
अदभुत अतिशय है चमत्कार, होते सदैव नाना प्रकार ॥२०॥

कछु कथन कथूं सुन भव्य जीव, तामूं श्रद्धा बढ़े सदोव ॥
उगणीस शतक चवदा सूजान ता समय तनो इक कथन मान ॥२१॥

जो शिला लेख प्रशस्ति जोय, है उत्तर दिश ही विशाल सोय ॥
मीतर सु कोट सु शुभजान धीर ना देखन आयेम्लेच्छ वीर ॥२२॥

ता देख द्रव्यशंका विचार दीनों सुरंग चहु लाल धार ॥
उपसर्ग भयो अतिहि प्रचण्ड मक्खो भंवर दीनों सौ दण्ड ॥२३॥

गई चिपट म्लेच्छन अङ्ग सोय, तब भाग गये वे हाल होय ॥
प्रगटयो अतिशय शुभ सुनो वीर निकल्यो सुरंग से दुग्ध नीर ॥२४॥

यह कथा पुरातन है प्रचलित कहते सयात सब वृद्ध मित्त ॥
तसु भजन बने सो विद्यमान, गावत है भवि निज जीव ॥२५॥

फिर सम्वत शत उन्नीस सोय, अठावन उपर अंक जोय ॥
ता समय एक अद्‌भुत सुबात सो हुई ताहि में कछु आत ॥२६॥

प्रतिमा क्षेत्र में प्रकट नांही ताको संशय सब चित्त रहाहि ॥
कोई गुप्त भवन पातालहोय ता तो निर्णय करणो सुजोय ॥२ ॥

ता समय नृपति कृष्णहि भूपाल है रक्षक धर्महि प्रजापाल ॥
तिन दिनी आज्ञा सरस सोय, पाताल माहि प्रतिमा जु होय ॥२८॥

खुदवावो भूमि तह श्रम होय, होवे मनोर्थ सब सफल सोय ॥
जब पंच गये शुभ क्षेत्र थान, हर्षित चित्त उत्साह ठान ॥२९॥

दर्शक जन गये सब दोर दोर पहुँचे तह सब हाथ जोर ॥
निज मन्दिर में मण्डप सुसोय, ता बीच एक पत्थर सुजोय ॥३०॥

ता पत्थर पर इक शब्द जान सोपान लिख्या अंकित हुयान ॥
पत्थर उखाड़ भूमि पवित, खुदवान लगे सब एक चित्त ॥३१॥

ना खुदी भूमि जो रंच मात्र, आश्चर्य युक्त सब पंच भ्रात ॥
तव अद्‌भुत इक निज चमत्कार नजरन देख्यो सब खड़े द्वार ॥३२॥

मन्दिर पछोड़ से एक नाग, तव आयो दक्षिण दिश द्वार लाग ॥
तह भू खोदत थे वैलदार जह वैठ गयो फण कर फूंकार ॥३३॥

यह उपसर्गहि सब देख वीर, भयभीत भए चित्त छोड़ धीर ॥
यह अति पवित्र है क्षैत्र साय, ताकी महिमा को पार कोय ॥३४॥

हम मन्द बुद्धि अज्ञान रूप, कैसें जाणे तस सब स्वरूप ॥
देशन देशन के भव्य जीव, आवत हो रहत श्रावक सदीव ॥३५॥

जोकर ही बोल कबूल सोय, मन वांछित फल सब सकल होय ॥
देते प्रीति भोजन सुजान, श्रावक जिमावे प्रीति ठान ॥३६॥

वादित्र गान पूजन कराय, बहु भक्ति करहि चित्त हरस लाय ॥
जागरण करत स्तवन सुजान, हृदय धरत प्रभू पार्श्व ध्यान ॥३७॥

मन वच तन करि जो शुद्ध भाव पूजन करते धरि चित्त चाव ॥
तो मन वांछित फल सिद्ध होय, दारिद दुःख सब दूर होय ॥३८॥

आरोग्य रहे तस नित शरीर दिन दिन सम्यक् धर वढत वीर ॥
कुटुम्ब वृद्धि निज होत सोय, अनुक्रमतनो फल मोक्ष होय ॥३७॥

दोहा—पूजन कर श्रद्धा धरी, धर हृदय श्रदान ॥
अजर अमर पद भोगवो हीरा निश्चय जान ॥१॥

ॐ ह्रीं विन्धवली अतिशय क्षेत्रस्थ श्री पार्श्वनाथ जिनेन्द्राय अनर्घ पद प्राप्तायें पूर्णार्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥

छता छन्द

जय पार्श्व जिनन्दा आनन्द कन्दा कमठमान तुम भंजन हो ॥
विश्व सेन राजा के नन्दन जग जीवन मन रंज न हो ॥

भविजन तुम चरणन अरचन कर भक्ति भावकर गुण गावे ॥
पाप खपावे विघ्ननशावे पुण्य बड़ाकर सुख पावे ॥१॥

ईत्याशिवादि समाप्तम्

संगीत

बिजोलियां पारसनाथ मन्दिर में भला विराज्या जी ॥टेक॥

आस पास तो बाग बगीचा कुण्डन की छवी न्यारी ॥
सामे तो नो चौक्या बणी है उनकी शोभा भारी जी ॥१॥

अगल बगल तो चार देवरी वीच में पारस नाथ ॥
सामे तो दो स्तम्भ बणा है, उनको बड़ो है नाम ॥२॥

आस पास तो झाड़ी जंगल पर्वत है सो खासा ॥
राजपाट तज आप पधारे मुक्ति की लग रही आसा ॥३॥

देश देश के आवे जातरी मनो भावना भावे ॥
पूजा करके हरष हरष कर प्रभुजी का गुण गावे ॥४॥

सम्वत उगणीसौ चवदा में गोरा तो आया भारी ॥
द्रव्य कारणे सुरंग लगायो जल आयो ततकारी ॥५॥

गोरा तो यों उठ कर बोल्या सांचा है पारसनाथ ॥
यां को द्रव्य तो हाथ न लागे कूंच करो प्रभात ॥६॥

नगर सिंगोली मायनेस जी, "खेमचन्द" ढोला नाम ॥
नैना उनके है न ही सजी, वो पारस करे प्रणाम ॥७॥

वारिषेण राजपुत्र

बिहार प्रदेश के राजगृह नगर में राजा श्रेणिक राज्य करते थे। उनके कई पुत्रों में से एक पुत्र का नाम वारिषेण था। वे छोटी सी ही उम्र में मुनि हो गये थे। वे मुनिराज जहां तहां फिरते और लोगों को उपदेश देते हुए पलाशकूट नगर में पहुँचे। वहां राजा श्रेणिक के मंत्री का पुत्र पुष्पडाल रहता था। वह सच्चा सम्यग्दृष्टि और दान पूजा में तत्पर था।

जब वारिषेण मुनि उसके दरवाजे से आहार को निकले तो पुष्पडाल ने उन्हें पड़गाहा और भक्ति सहित आहार दिया। जब मुनि महाराज आहार ले चुके और वनको चले, तब पुष्पडाल ने सोचा कि जब ये गृहस्थो में थे तब मेरे बड़े मित्र थे। इससे पुरानी मित्रता मेटने के लिये इन्हें कुछ दूर पहुँचा आना चाहिये। पुष्पडाल के घर में एक कानो स्त्री थो। उससे आज्ञा लेकर वह मुनिराज के पोछे पीछे चला। पुष्पडाल यह सोचता था कि जब मुनि महाराज कहेंगे कि जाओ घर को लौट जावो, तब लौट पड़ूंगा। पर उन वीतरागी मुनिको इस दुनियादारी से क्या लेना था। चाहे कोई आगे आओ, चाहे पीछे जावो, चाहे साथ रहो उन्हें कुछ मतलब नहीं था। जब बहुत दूर निकल गये तब "बहुत दूर आ गये" यह चेताने के लिये पुष्पडालने महाराज से कहा कि यह वही बावड़ी है, यह वहो बगीचा है जहां हम आप बड़े मौज से खेला करते थे यद्यपि वे मुनिराज इसके मनका सब हाल जानते थे। तो भी उन्होंने कोई उत्तर नहीं दिया, तब तो पुष्पडाल मुनि के आगे खड़ा हो गया और नमस्कार किया। मुनि राज ने उसे धर्मवृद्धि देकर धर्म स्वरूप समझाया।

ज्ञान वैराग्य का उपदेश सुनकर पुष्पडाल का चित्त संसार से उदास हो गया। और उसने उन्हीं वारिषेण मुनि के पास दीक्षा ले ली। वह बहुत दिनों तक शास्त्रों का अभ्यास करता रहा और अच्छी तरह से संयम पालता रहा, परन्तु उसका चित्त उस कानी स्त्री में ही बसा करता था। उसे हमेशा उस एकाक्षी ही की याद आया करती थी।

एक दिन वे दोनों गुरु चेला महावीर स्वामी के समवशरण में गये और भगवान को नमस्कार करके बैठ गये। वहां गंधर्व ने एक श्लोक पढ़ा। उसका अर्थ यह था कि हे भगवान, आपने पृथ्वी रूप स्त्री को तीस वर्ष तक अच्छी तरह भोग के छोड़ दिया है। इसलिये वह बेचारी, आपके विछोह से दुःखी होकर, नदी होकर रूप आंसुओं से आपके नाम को रो रही है।

यह सुनकर पुष्पडाल को अपनी स्त्री की और गहरी खबर हो आई। वह मन में सोचने लगा कि ठीक है। मैंने अपनी स्त्रीको एकदम छोड़कर दीक्षा ले ली है, आज बारह वर्ष हो गये हैं। बेचारी का मुंह तक नहीं देखा। वह मेरे विछोह से मेरे नाम को रोती होगी, इस लिये घर जाकर उसका समाधान करूँगा और कुछ दिन उनसे गृहस्थी का सुख देकर पीछे दीक्षा ले लूँगा। यह सोच कर पुष्पडाल घर की ओर चलने लगा। तब अन्तर्यामी मुनि वारिषेण ने उसे जाने न दिया। वे उसकी मनकी बात जान गये और उसे धर्म में स्थिर करना उचित समझा, इसलिये वे उसे अपने साथ राजगृही ले गये।

जब वे घर पर पहुँचे तब वारिषेणजी की माता रानी चेतना को संदेह करने लगी कि मेरा पुत्र वारिषेण मुनि व्रत न सध सकने के कारण लौट आया है।

इसकी परीक्षा करने के लिए उनके बैठने को एक काठ की और एक सोने की चौकी रख दी। वारिषेण तो काठ की चौकी पर बैठे, पर पुष्पडाल सुवर्ण की चौकी पर बैठ गया। तब रानी चेतना ने समझ लिया कि वारिषेण सच्चे ही मुनि हैं, और उनके इस साथी की क्रिया उल्टी दिखती है, यह विचार रानी के मन में चल रहा था कि वारिषेण ने कहा—"हे माता, मेरी बत्तीसों स्त्रियों को गहने और कपड़े आदि से सजाकर मेरे पास लावो।" यह वाक्य सुनकर यद्यपि रानी को फिर से सन्देह हुआ, परन्तु वारिषेण के कहे अनुसार उन बत्तीसों स्त्रियों को ले आई और वे सबकी सब मुनि को नमस्कार करके खड़ी हो गई। तब वारिषेण ने पुष्पडाल से कहा, हे मुनि, जिस धन के लिए तुम मुनि पद छोड़कर जाना चाहते हो, सो उससे कई कई गुणा राज्य तुम लेओ, और आपका चित्त जो कानी स्त्री में भटकता है, सो ये बहुत रूपवान बत्तीस स्त्रियां ग्रहण करो। दस बीस बरस भोग कर देख लो कि इनमें सुख है या मुनि मार्ग में सुख है।"

मुनिराज के ये वचन सुनकर पुष्पडाल बहुत लज्जित हुआ और कहने लगा—"हे गुरु आप धन्य हैं। आपने ऐसी उत्तम सामग्री छोड़कर जिनदीक्षा ली है, जिससे आगे मेरी कानी स्त्री कुछ गिनती में नहीं है। आपके इस कार्य से अब मेरा मोह मिट गया, अब मुझे सच्चा वैराग्य उपजा है। मेरी मूर्खता पर क्षमा करो और प्रायश्चित देकर सच्चे मार्ग में लगाओ।" यह सुनकर वारिषेण मुनि बहुत प्रसन्न हुए और शास्त्र में कहे अनुसार उसे दण्ड देकर फिर से दीक्षा दी। अन्तमें उन दोनों ने ध्यान के बल से आठों कर्म नष्ट करके सिद्ध पद प्राप्त किया।

हम सबको उचित है कि यदि किसी मनुष्य को धर्म भ्रष्ट होता देखें, अर्थात् अपने जैनी भाई को जैसे बने तैसे उसे जैन धर्म में पक्का कर दें अथवा किसी धर्मात्मा के पास पूंजी रोजगार आदि न हो तो शक्तिभर सहायता करें।
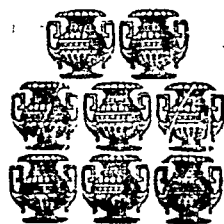
क्रमांक	सम्वत्	तिथि	आचार्य नाम	जाति	गृहस्थ वर्ष	मास	दिन
१	४	चैत्र शुक्ला १४	भद्र बाहु	पमार (राजपूत)	२४	०	–
२	३६	फागुन सुदी १४	गुप्त श्री	पवार राजपूत	२२	–	–
३	३६	अशोज सुदी १४	माघनंदो	जैस्वाल	२०	–	०
४	४०	फागुन सुदी १४	जिनचंद्र	चौसर पोरवाल	२४	९	०
५	४९	पौष सुदी ६	कुंदकुंद	पल्लीवाल	११	०	०
६	१०१	कार्तिक सुदी ८	उमोस्वामी	अयोध्यापुरी श्रावक	१९	०	०
७	१४२	आषाढ सुदी १४	लोहाचाय	लमेचू	२१	०	०
८	१५३	ज्येष्ठ सुदी १०	यशकीर्ति	जयसवाल	१२	०	०
९	२११	फागुन वदी १०	यशोनंदी	जैस्वाल	१६	०	०
१०	२५८	आषाढ सुदी ८	देवनंदी	पोरवाल	१०	५	०
११	३०८	ज्येष्ठ वदी १०	पूज्यपाद	पद्मावती पुरवाल	१५	०	०
१२	३५३	ज्येष्ठ सुदी ६	गुणनंदी	गोलापूर्व	१४	०	०
१३	३६४	पौष सुदी १४	जम्बूनंदी	गोलापूर्व	१९	०	०
१४	३८६	फागुन वदी ४	कुमारनंदी	सहलवाल	१६	०	०
१५	४२७	जेठ वदी ३	लोकचंद्र	लमेचू	१८	०	०
१६	४५३	माघ सुदी १४	श्रोप्रभाचंद्र	पंचम श्रावक	९	०	०
१७	४१७	फागुन सुदी १०	श्रीनेमिचंद्र	नैगम श्रावक	१०	०	०
१८	४८१	पोष वदी ५	श्रोलालनंदी	दूसर	११	०	०

मुनि पट्टावली

दीक्षा			पटर			सर्व आय			जोड़ में अन्तर दिवस
वर्ष	माह	दिन	वर्ष	माह	दिन	वर्ष	माह	दिन	
३०	०	—	२२	१०	२७	७६	११	०	३
३४	—	—		६	२५	६५	७	०	५
४४	—	—	४	४	२६	६८	५	०	४
३२	३	०	८	९	६	६५	९	९	३
५१	१०	१०	३३	०	०	९५	१०	१५	५
२५	०	०	४०	८	१	८४	८	६	५
३८	०	०	१०	१०	२१	६९	१०	२६	६
२१	०	०	५८	८	१०	९१	८	१५	५
१७	०	०	४६	४	९	७९	४	१३	४
१५	१	७	४९	१०	२८	७५	११	२	४
११	७	०	४४	११	२२	७१	६	२९	७
१३	५	०	१३	३	१	४०	८	५	४
१६	३	०	२२	५	१	५७	८	५	४
१०	२	[illegible]	४०	२	२०	६६	४	२९	९
१६	०	०	२६	३	१५	६०	३	२६	१०
२४	०	०	२५	५	१५	५८	५	२६	१९
२२	०	०	८	९	१	४०	९	१०	९
१५	०	०	२१	७	२४	५६	८	६	१२

क्रमांक	सम्वत	तिथि	आचार्य नाम	जाति	गृहस्थ वर्ष	माह	दिन
१९	५०८	माघ सुदी ११	हरिनंदी	सिकसिया श्रीमाल	९	०	०
२०	५२५	आसोज सुदी १०	वसुनंदी	वघनोरा	१०	०	२७
२१	५३१	पौष वदी ११	श्रीवीरनंदी	लमेचू	९	०	०
२२	५६१	माघ सुदी ५	श्री रत्नकीर्ति	अग्रवाल	८	०	०
२३	५८५	आषाढ वदी ८	श्रीमाणिकनंदी	अग्रवाल	१०	०	०
२४	६०१	पौष वदी ३	मेघचंद्रजी	खंडेलवाल	२४	३	०
२५	६२७	आषाढ वदी ५	शांतिकीर्ति	सहतवाल	७	०	०
२६	६४२	श्रावण सुदी ५	मेरुकीर्ति	सहतवाल	८	०	०
२७	६८६	मगसिर वदी ४	महाकीर्ति	सहतवाल	६	०	०
२८	७०४	मगसिर वदी ९	श्रीविजनंदी	बागडा	७	०	०
२९	७२६	चैत्र सुदी ९	श्री भूषण	सहतवाल	१४	०	०
३०	७३५	वैशाख सुदी ५	श्रीचंद्रजी	श्रीमाल	६	०	०
३१	७४९	भादों सुदी १०	नंदी कीर्तिजी	नागहरी	१५	०	०
३२	७६५	चैत्र वदी १२	देशभूषणजी	श्रीमाल	१८	०	०
३३	७६५	आसोज सुदी १०	अनंत कीर्तिजी	पोरवाल	११	०	०
३४	७८५	श्रावण सुदी ११	श्रीचरमनंदीजी	नागर	१३	०	०
३५	८०८	जेठ सुदी १५	श्रीपरिचंद्र	वघेरवाल (दासोदा)	१३	०	०
३६	८४०	आषाढ वदी १२	श्रीरामचंद्र	पंचम श्रावक	८	०	०

मुनि पट्टावली

दीक्षा			पट्टर			सर्व आयु			जोड़ में अन्तर दिवस
वर्ष	माह	दिन	वर्ष	माह	दिन	वर्ष	माह	दिन	
१५	०	०	१६	११	१५	४०	७	२९	१४
३०	०	०	६	२	२२	४६	३	१	९
१३	०	०	३०	०	१४	५२	०	२४	१०
१२	०	०	२३	४	७	४३	५	१८	११
१९	०	०	१६	५	१०	४५	५	२५	१५
६	७	१३	२५	५	३०	५६	६	२	१२
१०	०	०	१५	०	२५	३१	१	१५	२०
११	०	०	४४	३	१६	६३	३	२९	१३
१२	०	०	१७	११	५	३५	११	२०	१५
१४	०	०	१२	४	०	४२	४	१५	१५
८	०	०	९	०	०	३१	०	२६	२६
१२	०	०	१४	३	४	३२	४	५	एक मास १ दिन
२०	०	०	१५	६	४	५०	६	१७	१३
२४	०	०	०	६	६	४२	६	१३	७
१३	०	०	१९	९	२५	४३	१०	५	१०
१८	०	०	२५	९	२५	५३	१०	०	५
२५	०	०	३२	०	४	७०	०	१२	८
११	०	०	१६	१०	०	३५	१०	६	६

क्रमांक	सम्वत्	तिथि	आचार्य नाम	जाति	गृहस्थ वर्ष	मास	दिन
३७	८५७	वैशाख सुदी ३	श्रीराम कीर्ति	लमेचू	१४	०	०
३८	८७८	आसोज सुदी १०	श्री अभयचन्द्र	अयोध्यापुरी श्रावक	१८	०	०
३९	८९७	कार्तिक सुदी ११	श्री नरचंद्रजी	नैगम श्रावक	१५	०	०
४०	९१८	माघ वदी ५	श्री नागचंद्रजी	बागडा	२१	०	०
४१	९३९	माघ सुदी ३	श्री मेघनंदी (नंदनंदी)	दूसर	८	०	०
४२	९४८	आषाढ वदी ८	श्री हरीश्चंद्र (हासौरा)	वघेरवाल	८	४	०
४३	९७४	श्रावण सुदी ९	श्री महीचंद्र	धाकड़	१४	०	०
४४	९९०	माघ सुदी १४	श्री माघचंद्र	पद्मावतो पुरवाल	१३	०	०
४५	१०२३	जेठ वदी १३	श्री लक्ष्मीचंद्र	पद्मावती पुरवाल	११	०	०
४६	१०३७	आसोज सुदी १	श्री गुणनंदी	वघेरवाल	१८	०	०
४७	१०४८	आसोद सुदी १४	श्री गुणचंद्र	गोला पूर्व	१०	०	०
४८	१०६६	जेठ सुदी १	श्री लोकचंद्रजी	सैतवाल	१५	०	०
४९	१०१९	माघ शुदी ८	्री श्रुतं कीर्ति	सचाणू	१३	०	०
५०	१०९४	चैत वदी ५	श्री लावचंद्रजी	सचाणू	१२	०	०
५१	१०१५	चैत वदी ७	श्री महीचंद्र	श्रीमाल	१४	०	०
५२	११४०	माघ सुदी ११	श्री माघचंद्रजी	पंचम श्रावक	१४	०	०
५३	११४४	पौष वदी १४	श्री वृषनंदी	वदनोरे	७	०	०
५४	११४८	वैशाख सुदी ४	श्री शिवनंदी	सैतवाल	९	०	०

मुनि पट्टावली

दीक्षा			पटर			सर्व आयु			जोड़ में अन्तर दिवस
वर्ष	माह	दिन	वर्ष	माह	दिन	वर्ष	माह	दिन	
१६	०	०	२१	४	२६	५१	५	७	११
१०	०	०	१७	०	२७	४५	१	१	४
२१	०	०	१२	९	०	५४	९	९	९
१३	०	०	२३	०	३	६७	०	१३	१०
१०	०	०	८	९	११	२६	९	२०	९
१४	२	०	२६	१	८	४९	१	१६	८
१०	११	०	१६	६	०	४१	५	५	५
२०	०	०	१२	०	२४	६५	३	३	९
२५	०	०	१४	४	३	४९	११	१३	१०
२०	०	०	१०	१०	२९	४८	११	१३	१४
२२	०	०	१७	०	७	४९	८	१७	१०
३०	०	०	१३	०	३	४८	३	७	४
३२	०	०	१५	६	६	६०	६	१२	६
२५	०	०	२०	११	२५	५८	०	०	५
२६	०	०	२५	६	१०	६१	५	१५	५
१३	०	०	४	३	१७	३१	३	२४	७
३७	०	०	३	४	१	४१	४	५	४
३९	०	०	७	६	७	५५	७	१	१४

आचार्य

ांक	सम्वत्	तिथि	आचार्य नाम	जाति	गृहस्थ वर्ष	माह	दिन
५५	११५५	मगसर सुदी ५	श्री वसुनंदी	बदनोरा	११	७	०
५५	११५६	श्रावण सुदो ६	श्री सिंहनंदी	सैतवाल संस्थान श्रावक	७	०	०
५७	११६०	भाद्रपद सुदी ५	श्री भावनंदो	हुमड श्रावक	११	०	०
५८	११६७	कार्तिक सुदी ८	श्री देवनंदी	धाकड़ श्रावक	११	०	०
५९	११७०	फागुन बदी ५	श्री विद्याचंद्र	बागडा	१४	०	०
६०	११७६	आसोज सुदी ९	श्री सुरचंद	नरसिंहपूरा	१०	०	०
६१	११८५	आसोज सुदी १०	माघनंदी	चतुर्थ श्रावक	१३	३	०
६२	११८८	मगसर सुदी १	ज्ञानकीर्ति	नागरी श्रावक	१०	०	०
६३	११९९	मगसर सुदी ११	जगकीर्ति	नागरी श्रावक	१३	०	०
६४	१२०६	फागुन वदी १४	सिंहकीर्ति	नरसिंहपुरा	८	०	०
६५	१२०९	जेठ वदी १	हेमकीर्ति	हुमड	१३	०	०
६६	१२१६	आसीज सुदी ३	सुंदरकीर्ति	सहलवाल	६	८	०
६७	१२२३	वैशाख सुदी ३	नेमिचंद्र	नागद्रह	७	०	०
६८	१२३०	माघ सुदी ११	नाभिकीर्ति	नैगम श्रावक	५	०	०
६९	१२३२	माघ सुदी ११	नरेंद्र कीर्ति	नागद्रह	१४	०	०
७०	१२४१	फागुन सुदी ११	श्रीचंद	वघेरवाल	७	०	०
७१	१२४८	आसोज सुदी १२	पद्मकीर्ति	पोरवाल	१०	०	०
७२	१२५३	आसोज सुदी १३	श्री वर्धमान	वदनोरा	१८	०	०

मुनि पट्टावली

दीक्षा			पटर			सर्व आय			जोड़ में अन्तर दिवस
वर्ष	माह	दिन	वर्ष	माह	दिन	वर्ष	माह	दिन	
१४	०	०	०	७	२८	५३	८	१	३
३२	०	०	४	०	२४	४३	०	२६	५
३०	०	०	७	२	०	४८	२	५	३
३०	०	०	७	२	०	४८	२	५	३
३८	०	०	५	५	५	५५	५	१६	१४
३५	०	०	८	१	२६	५३	२	१	२
३२	२	०	४	१	१६	४६	६	२१	५
३४	०	०	११	०	३	५५	०	१०	७
३३	०	०	७	२	८	५३	२	१८	१०
३७	०	०	२	२	१५	४७	३	१	१६
२४	०	०	७	३	२०	४४	४	३	६
१६	३	०	६	६	२०	३२	७	०	१०
१६	०	०	७	८	२६	३५	६	८	६
३५	०	०	१	११	२६	४२	०	०	४
१३	०	०	६	०	२६	३६	१	०	१२
२५	०	०	६	३	२५	३८	४	२	७
२२	०	०	४	११	२५	३७	०	१	६
५	०	०	२१	११	२८	४५	०	१	३

आचार्य

क्रमांक	सम्वत	तिथि	आचार्य नाम	जाति	गृहस्थ वर्ष	माह	दिन
७३	१२५६	आसोज सुदी १४	श्री अकलंकचंद्र	नांगडा पोरवाल (अठसखा)	१४	०	०
७४	१२५७	कार्तिक सुदी १५	ललित कीर्ति	लमेचू	१३	०	०
७५	१२६१	मगसर बदी ५	श्री केशवचंद्र	लमेचू	११	०	०
७६	१२६२	जेठ सुदी ११	चारूकीर्ति	पंचमश्रावक	१३	०	०
७७	१२६४	माघ सुदी ५	बसंतकीर्ति	शाहगोत्र खंडेलवाल	१२	०	०
७८	१२६४	आसोज बदी ३	अक्षयकीर्ति	अठसखा पोरवाल	११	२०	०
७९	१२६६	आसोज सुदी ५	प्रख्यातकीर्ति	पंचम श्रावक	११	०	०
८०	१२६८	कार्तिक सुदी	शांतिकीर्ति	खंडेलवाल छाबडा	१८	०	०
८१	१२७१	श्रावण सुदी १५	धर्मचंद्र	खंडेलवाल सेठी	१६	०	०
८२	१२८६	भाद्रपद बदी १३	रत्नकीर्ति	नागद्रह	१९	०	०
८३	१३१०	पौष सुदी १४	प्रभाचंद्र	पद्मावती पुरवाल	१२	०	०
८४	१३८५	पौष बदी ५	पद्मनंदी	पद्मावती पुरवाल	१०	७	०
८५	१४५०	माघ सुदी ५	रूपचंद	अग्रवाल	१६	०	०
८६	१५०७	जेठ बदी ५	जिनचंद्र	अग्रवाल	१२	०	०

नोट—१०८ आचार्य सुमतिसागरजी के परम शिष्य श्री १०८ मुनि श्रेयांससागरजी महाराजजी ने प्राप्त किये।

मुनि पट्टावली

दीक्षा			पटर			सर्व आयु			जोड़ में अन्तर दिवस
वर्ष	माह	दिन	वर्ष	माह	दिन	वर्ष	माह	दिन	
३३	०	०	१	३	२४	४८	४	१	७
२४	०	०	४	०	०	४१	०	५	५
३५	०	०	०	६	१५	४६	६	२१	६
३२	०	०	२	३	१	४७	३	८	७
२०	०	०	१	४	२२	३३	५	०	८
३०	५	०	०	४	१०	४१	११	७	७
१५	०	०	२	३	१९	२८	३	२३	४
२३	०	०	२	९	७	४३	९	१५	८
२४	०	०	२५	०	५	६५	०	१३	८
२५	०	०	१४	४	४	५८	४	१६	९
१२	०	०	७४	११	१५	९८	११	२३	८
२३	५	०	६५	०	१८	९९	०	२९	११
२४	०	०	५६	३	४	९६	३	१५	११
१५	०	०	६४	८	१७	८१	८	२७	१०

चार अनुयोग एवं अनुयोग का स्वरूप

प्रथमानुयोग—प्रथम अवस्थाके कम ज्ञानी शिष्यों को तत्व ज्ञान की रूची कराने में जो समर्थ हो उसको प्रथमानुयोग कहते हैं। इनमें उन महान पुरुषों के व महान स्त्रियों के जीवन चरित्र हैं, जिन्होंने धर्म धार के आत्मा की उन्नति की है। इसमें उन चरित्रों का भी कथन है जिन्होंने पाप बांधकर दुःख उठाया है व जिन्होंने पुण्य बांधकर सुख साताकारी साधन प्राप्त किया है। इस तरह के वर्णन को पढने से यह असर बुद्धि पर पड़ता है कि हमको भी धर्मका साधन करके अपना हित करना योग्य है।

करणानुयोग—इसमें चार गति का स्वरूप और लोक का स्वरूप बताया है, तथा जीवों को अवस्था के भेद, गुण स्थान, मार्गणा स्थानों का कथन है। तथा कर्मों के बंध उदय, सत्ता आदि का निरूपण है वह सब हिसाब बताया है, जिससे आत्मा की अवस्थाएँ कर्म के संयोग से भिन्न भिन्न प्रकार की होती हैं। इस ज्ञान की अध्यात्म ज्ञान के लिए बहुत आवश्यकता है। जो गुणस्थानों को समझेगा वही ठीक ठीक जानेगा कि सम्यग्दृष्टि किस अपेक्षा बंधक है, तथा किस अपेक्षा अबंधक है। तथा कर्म बंध कौन से गुण स्थान तक होता है। तथा कर्मों की अवस्था कैसे बदली जा सकती है। यह आत्म ज्ञान का बड़ा ही सहकारी है। कर्म पुद्गल की संगति से जीव के सर्व व्यवहार नृत्य का दिग्दर्शन इस अनुयोग से होता है।

चरणानुयोग—मन, वचन, काय को स्थिर करने के लिये स्वरूपाचरण मई निश्चय चारित्र में उपयुक्त होने के लिए जिस जिस व्यवहार चारित्र की आवश्यकता है बस सब इस अनुयोग में बताया गया है कि हर एक स्थिति का मानव अपनी योग्यतानुसार उसका आचरण कर सके तथा सहज सुख का साधन करता हुआ राज कर्तव्य, देश रक्षा कर्म, कृषि कर्म, शिल्प कर्म आदि गृहस्थ योग्य आवश्यक कर्म भी कर सके, देश परदेश में नाना प्रकार वाहन द्वारा भ्रमण कर सके, लौकिक उन्नति सर्व तरह से न्याय पूर्वक करते हुए सहज सुख का साधन किया जा सके। जैसे जैसे वैराग्य बढ़े वैसे वैसे चारित्र को अधिक अधिक पाला जा सके व अधिक अधिक आत्म ध्यान उन्नति की जा सके

द्रव्यानुयोग—इसमें छः द्रव्य, पांच अस्तिकाय, सात तत्व, नौ पदार्थ का व्यवहार नय से पर्याय रूप तथा निश्चय नय से द्रव्य रूप कथन है। इसी में शुद्धात्मानुभव की रीतियां बताई हैं। जीवन मुक्त रहने का साधन बताया है। अतीन्द्रिय सहज सुख की प्राप्ति का साक्षात् उपाय बताया है। इन चार अनुयोगों के शास्त्रों का नित्य प्रति यथा सम्भव अभ्यास करना व्यवहार सम्यग्ज्ञान का सेवन है।

गति वर्णन

देवों के—भी स्थूल शरीर को वैक्रियिक कहते हैं। यह शरीर भी एक अन्तर्मुहूर्त में स्वयं नाम कर्म के उदय से सुँदर सुहावनी सुगन्धमय आहारक वर्गणाओं से बनता है। यह सुन्दर व क्रांतिकारी होता है। पुण्यकर्म के कमती बढती होने के कारण सर्व देवों का शरीर एकसा सुन्दर नहीं है, कोई कम कोई अधिक। इसीसे देव परस्पर एक दूसरे को देखकर ईर्ष्यावान होकर मनमें घोर दुःख पाते हैं। अपने को दूसरों के मुकाबले में कम सुन्दर देखकर कुढते हैं व रातदिन मन ही मनमें जलते रहते हैं। मिथ्यादृष्टि अज्ञानी देवों को यह बड़ा मानसिक दुःख रहता है।

शरीर सुंदर होने से वे देव शरीर के मोह में रत रहते हैं। शरीर में प्राप्त पांचों इन्द्रियों के भोगों में बड़े आसक्त रहते हैं। इनके शरीर में अपृथक् तथा पृथक पृथक विक्रिया करने की शक्ति होती है। एक देव या देवी अपने एक शरीर के बहुत शरीर बनाकर आत्मा को सब में फैला देता है, और मन द्वारा सर्व शरीरों से काम लिया करता है। एक ही शरीर से बने हुए भिन्न भिन्न शरीरों को भिन्न स्थानों में भेजकर काम लेता है। छोटा-बड़ा, हलका-भारी इत्यादि नाना प्रकार की शक्ति उनके वैक्रियिक शरीरों में होती है। एक देवी अनेक प्रकार शरीर बनाकर क्रीडा किया करती है। इन देवों में शरीर सम्बन्धो सैर, भ्रमण, नाच, गाना, नाटक, खेल, तमाशा इतना अधिक होता है कि ये रात दिन इस ही रागरंग में मग्न होकर शरीर के ही सुख में आसक्त हो शरीर रूप ही अपने को मान लेते हैं। मिथ्यात्वी देवों को स्वप्न में भी ख्याल नहीं आता है कि हमारे शरीर से भिन्न कोई आत्मा हैं।

मनुष्य गति में—इस कर्म भूमि के मनुष्यों का शरीर भी सुँदर असुंदर नाना प्रकार की आहारक वर्गणाओं से बनता है। पहिले तो शरीर की उत्पत्ति में कारण गर्भ है। वहां अति मलिन पुरुप का वीर्य व स्त्री के रज का सम्बन्ध है, तब गर्भ बनता है। उसमें जीव अन्य पर्याय से आता है। तब वह चारों तरफ की और भी आहारक वर्गणा रूपी पुद्गल को ग्रहण करता है। विग्रह गति से आया हुआ जीव मनुष्य गति में एक आहारक वर्गणा, भाषा वर्गणा, मनोवर्गणा को ग्रहण करता है। अन्तमुहूर्त तक अपर्याप्त अवस्था कहलाती है। जब तक उन वर्गणाओं में आहार, शरीर, इन्द्रिय श्वासोश्वास भाषा और मन इनके बनने की शक्ति का प्रकाशन न हो तब तक वह मानव अपर्याप्त कहलाता है, फिर वह प्रर्याप्त हो जाता है।

दव नारकी—देव नारकियों का शरीर तो पूरी आयु होने पर ही घूटता है, परन्तु कर्म भूमि के मनुष्य व तिर्यंचों का अकाल मरण भी हो जाता है। जैसे दीपक में तेल इतना कि रातभर जलेगा, परन्तु यदि तेल किसी कारण से गिर जावे तो दीपक जल्दी ही बुझ जावेगा। इसी तरह आयु कर्म की वर्गणाएँ समय समय फल देकर खिरती रहती हैं। वे यदि इसी सामान्य उदय में आती रहती हैं, कोई प्रतिकूल कारण नहीं होता है, तब तो पूरी आयु भोगी जाती है। परन्तु असाता वेदनीय के उदय से यदि तीव्र असाध्य रोग हो जावे, विष खाने में आ जावे, तलवार लग जावे, अग्नि में जल जाये, जल में डूब जावे व और कोई अकस्मात हो जावे, तो आयु कर्म की उदीर्णा हो जातो है अर्थात् अवशेष आयु कर्म की वर्गणाएँ सब एक दम झड़ जाती हैं, और मरण हो जाता है। ऐसे पतनशील, मलिन, घिनावने, रोगाक्रांत शरीर से अज्ञानी जन मोह करके रात दिन इसी के संवारने में लगे रहते हैं, कि वे अपने को शरीर रूप ही मान लेते हैं, और शरीर के मोह में इतने मूर्च्छावान हो जाते हैं कि वे अपने आत्मा की तरफ दृष्टिपात भी नहीं करते हैं—धर्म साधन से विमुख रहते हैं। अन्त में रौद्रध्यान से तर्क व आर्तध्यान से पशुगति में चले जाते हैं।

यद्यपि यह मानव का शरीर मलिन, क्षणभंगुर व पतनशील है, तथापि यदि इसको सेवन के समान रक्खा जावे व इससे अपने आत्मा का हित किया जावे तो इसी शरीर से आत्मा अपनी बड़ी भारी उन्नति कर सकती है तप करके व आत्म ध्यान करके ऐसा उपाय कर सकती है, जो फिर कुछ काल पीछे शरीर का सम्बन्ध ही छूट जावे। नौकर को इतनी ही नौकरी दी जाती है, जिससे वह बना रहे, व आज्ञा में चलकर हमारे काम में पूरी पूरी मदद दे। इसी तरह शरीर को दुरुस्त रखने के लिये योग्य भोजन पान देना चाहिये। इसे ऐसा खानपान न देना चाहिये, जिससे यह आलसी, रोगी व उन्मत्त बने जावे। इसको अपने आधिन रखना चाहिये, शरीर के आधिन आप नहीं होना चाहिये।

इस शरीर से बुद्धिमान ऐसा यत्न करते हैं, जिससे यह फिर प्राप्त नहीं होवे कर्मो की पराधीनता मिट जावे और यह आत्मा स्वाधीन हो जावे। इस मानव शरीर को यदि धर्म साधन में लगा दिया जावे तो इससे बहुत फलों की प्राप्ति हो सकती है। यदि भोगों में लगाया जावे तो अल्प भोग रोगादि आकुलता के उत्पन्न कराने वाले होते हैं, और उनसे तृप्ति भी नहीं होती है।

संयम का साधन—मुनि धर्म का साधन केवल मात्र इस मानव शरीर से ही हो सकता है पशु कदाचित् श्रावक धर्म का साधन कर सकते हैं। नारकी व

देव तो श्रावक का संयम नहीं पाल सकते हैं। केवल व्रत रहित सम्यग्दृष्टि ही हो सकते हैं।

सम्यग्दृष्टि ज्ञानी इन्द्रादि देव यह भावना भाया करते है कि कब आयु पूरी हो और कब हम मनुष्य देह पावें। जो तप साधन करके कर्मों को जलावें और आत्मा को मुक्त करें, जन्म मरण से रहित करें। उसे सिद्ध पद में पहुँचावें, ऐसे उपकारी मानव जन्म को पाकर मानवों के शरीर को चाकर के समान रखकर इसकी सहायता से गृहस्थाश्रम में तो धर्म, अर्थ, काम तीन पुरुषार्थों को साधना चाहिये और मुनि पद में धर्म और मोक्ष को ही साधना चाहिये। बुद्धिमानों को धर्म साधन में यह भी नहीं देखना चाहिये कि अभी तो हैं, अभी तो हम युवान है, बुढ़ापे में धर्म साधना करेंगे। अकाल मरण की संभावना होने से हमारा यह विचार ठीक नहीं है। मानवों के सिर पर सदाही मस्त खड़ा है। मालूम नहीं कब आ जावे। इसलिये हर एक पन में अपनी शक्ति के अनुसार धर्म का साधन करते रहना चाहिये, जिससे मरते समय पछताना न पड़े। मानव शरीर का उसीके साथ लक्ष्मी परिवार सम्पदा सब छूटेगो, तब इस शरीर व उसके सम्बन्धियों के लिये बुद्धिमान को पापमय, अन्यायमय, हिंसाकारी जीवन नहीं बिताना चाहिये। स्वपर उपकारी जीवन बिताकर इस शरीर को सफल करना चाहिये। इसमें रहना एक सराय का वास मानना चाहिये। जैसे सराय में ठहरा हुआ मुसाफिर सराय के दूसरे मुसाफिरों से स्नेह करते हुए भी मोह नहीं करता है। वह जानता है कि सराय से शीघ्र ही जाना है। वैसे ही शरीर में रहते हुवे बुद्धिमान प्राणी शरीर के साथियों से मोह नहीं करते हैं। प्रयोजन वश स्नेह रखते हैं। वे जानते है कि एक दिन शरीर छोड़ना ही है। तब ये सब सम्बन्ध स्वप्न के समान हो जायेंगे शरीर झोंपड़ी को पुद्गल से बनी जानकर हमें इससे मोह या मूर्छाभाव नहीं रखना चाहिये, यह झोंपड़ी है, हम रहने वाले आत्मा अलग हैं। झोंपड़ी जले है, आत्मा नहीं जल सकती है। झोपड़ी गले,, हम नहीं गल सकते हैं। झोंपड़ी पुरानी पड़े, हम जर्जरित होंगे। यह पुद्गल रूप है। पूरन गलन स्वभाव हैं। यह जड है, भूर्भ है। तब हम अभूक्ति अखण्ड आत्मा हैं। हमारा इसका वैसा ही सम्बन्ध है, जैसे देह और कपड़ों का इस शरीके स्वभाव को विचार करके इससे मोह न करें। इस शरीर की अपविन्नता तो प्रत्यक्ष प्रगट है। जितने पवित्र पदार्थ हैं शरीर का स्पर्श पाते ही अशुचि हो जाते हैं। पानी, गंध, माला, वस्त्र आदि शरीर के स्पर्शवाद दूसरे उसको ग्रहण करना अशुचि समझते हैं। नगर व ग्राम में सारो गन्दगी का कारण मानवों के शरीर का मल है।

मुनियों के २८ मूलगुण

५ महाव्रत, ५ समिति, ५ इंद्रिय जय, ६ आवश्यक और ७ शेषगुण।

पांच महाव्रत—१ अहिंसा, २ सत्य, ३ अचौर्य, ४ ब्रह्मचर्य,
५ परिग्रह त्याग

पांच समिति—१ ईर्या, २ भाषा, ३ एषणा (आहार शुद्धि), ४ आदान निक्षेपन- (कमंडलु, पींछी, शास्त्रादि को देख शोधकर उठाना एवं रखना) ५ प्रतिष्ठापन न्यूत्सर्ग मल मूत्रादिक निर्जन्तु भूमि में देखकर शोधकर क्षेपण करना।

पांच इंद्रिय निरोध—१ स्पर्शन, २ रसना ३ घ्राण, ४ चक्षु एवं ५ कर्ण के विषयों में निरासक्त रहना।

छह आवश्यक—१ सामायिक, २ स्तवन, ३ वंदना, ४ प्रतिक्रमण, ५ व्यूत्सर्ग एवं ६ वस्त्र त्याग।

सात विशेष गुण—

१ केशलोंच (उत्तम २ मास, मध्यम ३ मास, जघन्य ४ मास)

२ अचेल=नग्नता, वस्त्र त्याग

३ क्षितिशयन=भूमिशयन, काष्ठ पाट, चटाई, घासादि पर सोना।

४ अदन्तवन=अंगुलि आदि के दतौन का त्याग।

५ स्थिति भोजन=खड़े होकर भोजन करना।

६ एक भुक्त=दिन में एक वार ही भोजन करना।

७ स्नान त्याग=स्नान नहीं करना।

ऐसे २८ मूलगुण महाव्रती मुनियों के रहते है।

१०८ गुण

मुनि को १०८ लगाया जाता है।

२८ मूलगुण, २२ परिषद्, १० धर्म, १२ तप, १२ भावना, १३ चारित्र, ६ काय रक्षा ५ पंचाचार।

१०५ गुण

आर्जिका, ऐल्लक, क्षुल्लक को १०५ लगाया जाता है—

८ मूलगुण, १२ व्रत, १२ तप, १२ भावना, ११ प्रतिमा, ७ विषम, ६ काय जीवों की रक्षा, ६ आवश्यक, ५ समिति, ३ गुप्ति, २२ अभक्ष्य, १ भुक्ति १ बार भोजन।

इस तरह १०५ आर्जिका, ऐल्लक और क्षुल्लक लागया जाता है।

श्रावक की ५३ क्रियाएँ

मूलगुण ८, व्रत १२, प्रतिमा ११, दान ४, ३ रत्नत्रय, रात्रि भोजन त्याग, पानी छानकर पीना एवं जीव दया पालन करना।

८ मूलगुण=५ उदंबर कल=(बड, पिंपर, उंबर, कंदुबर अंजिर)
३ मकार (मद्य, मांस, मधु)

१२ तप=६ बहिरंग तप—(१ अनशन, २ अवमोदार्य, ३ वृत्ति परिसंख्यान, ४ रस परित्याग, ५ विविक्त शय्याशन, ६ कायक्लेश)
६ अंतरंग तप=१ प्रायश्चित, २ विनय, ३ वैय्या वृत्त, ४ स्वाध्याय, ५० न्यूत्सर्ग ६ ध्यान।

१२ व्रत=अणुव्रत, ३ गुणव्रत, ४ शिक्षाव्रत।

५ अणुव्रत=१ अहिंसा, २ सत्य, ३ अचौर्य, ४ ब्रह्मचर्य, ५ परिग्रह त्याग प्रमाण।

३ गुणव्रत=दिग्व्रत, देशव्रत, अनर्थ दण्डव्रत।

४ शिक्षाव्रत=१ सामायिक, २ प्रोषधोपवास, ३ उपभोग परिभोग परिमाण व्रत, ४ अतिथि संविभाग व्रत।

११ प्रतिमा=१ दर्शन, २ व्रत, ३ सामायिक, ४ प्रोषधोपवास, ५ सचित्त त्याग, रात्रि भोजन त्याग, ७ ब्रह्मचर्य, ८ आरम्भ त्याग, ९ परिग्रह त्याग, १० अनुमति त्याग, ११ उदिष्ट त्याग।

४ दान= १ आहारदान, २ औषध दान, ३ शास्त्रदान और ४ अभयदान

३ रत्नत्रय=सम्यग्दर्शन, सम्यक्ज्ञान, सम्यक् चारित्र।

१ रात्रि भोजन त्याग, २ पानी छानकर पोना,
३ जीवदया पालन करना।

ये श्रावककी तिरपन क्रियाएँ हैं।

चौदह गुण स्थान का स्वरूप

चौदह गुण स्थानों के नाम—१. मिथ्यात्व, २ सासादन, ३. मिश्र, ४. अविरत सम्यक्त, देशविरत, ६. प्रमत विरत, ७. अप्रमत विरत, ८. अपूर्व करण, ९. अनिवत्तिकरण, १०. सूक्ष्म साँपराय, ११. उपशांत मोह, १२. क्षणि मोह, १३ सयोग केवली, १४. अयोग केवली।

१- मिथ्यात्व गुणस्थान—जव तक अनन्तानुवन्वी कषाय और मिथ्यात्व कर्म का उदय वना रहता है तव तक मिथ्यात्व गुण स्थान रहता है। इस श्रेणी में जीव संसार में लिप्त, इन्द्रियों के दास, वहिरात्मा, आत्मा श्रद्धा रहित, अहंकारममकार में फँसे रहते हैं। शरीर को ही आत्मा मानते हैं। प्रायः संसारी जीव इसी श्रेणी में हैं।

इस श्रेणी में जीव तत्वज्ञान प्राप्त कर जव सम्यदृष्टि होता है, तव अनन्तानुबंधी चार कषाय तथा मिथ्यात्वकर्म का उपनाम करके उपशम सम्यग्दृष्टि होता है। यह उपशम अर्थात् उदय को दवा देना एक अन्य मुहूर्त अधिक के लिये नहीं होता है। उपशम सम्यक्त पर के होने पर मिथ्यात्व कर्म पुदगल तीन विभागों में हो जाते हैं— मिथ्यात्व, सम्यग्मिथ्यात्व, सम्यक्त मोहनीय। अंतमुहूर्त के होते होते कुछ काल शेष रहता है। यदि एक दम से अन्तानुवन्धी कषाय का उदय आ जाता है, और मिथ्यात्व का उदय नहीं होता है, तो यह जीव उपशम सम्यक्त में प्राप्त अविरव सम्यक्त गुण स्थान से गिरकर दूसरे सासादन गुण स्थान में आ जाता है। वहां कुछ काल ठहर कर फिर मिथ्यात्व में पहले गुण स्थान में आ जाता है। यदि कदाचित् मिथ्यात्व का उदय आया तो चौथे से एकदम पहले गुण स्थान में आ जाता है। यदि उपशम सम्यक्ति के सम्यक्त मोहनीय उदय आ गया तो उपशम सम्यक्त से क्षयोपशम या वेदक सम्यक्त्वी हो जाता है। गुण स्थान चौथा ही रहता है।

२- सासादन गुण स्थान—चौथे से गिरकर होता है, फिर मिथ्यात्व में नियम से गिर पड़ता है। यहां चारित्र की शिथिलता के भाव हो जाते हैं।

३- मिश्र गुण स्थान—चौथे से गिरकर या पहले से भी चढ़कर होता है। यहां सम्यक्त और मिथ्यात्व के मिश्र परिणाम दूध और गुड के मिश्र परिणाम के समान होते हैं। सत्य-असत्य श्रद्धान मिला हुआ होता। अंत-मुहूर्त ठहरता है, फिर पहले में आता है या चौथे में चढ जाता है।

४- अविरत सम्यकत्व—इस स्थान में उपशम समक्ति अंतमुहूर्त ठहरता है। क्षयोपशम सम्यक्ति अधिक ठहरता है जो अनन्तानुबंधी कषाय व दर्शन मोहनीय को तीनों प्रकृतियों का क्षय कर डालता है वह क्षायिक सम्यक्ति होता है। क्षायिकत्व कभी नहीं छुटता है। क्षयोपशम सम्यक्त्व में सम्यक्त्व मोहनीय के उदय से मलिनता होती है। इस श्रेणी में जीव महात्मा या अंतरात्मा हो जाता है। आत्मा को आत्मा रूप जानता है। संसार को कर्म का नाटक समझता है। अतीन्द्रिय सुख का प्रेमी हो जाता है। राज्य गृहस्थी में रहता हुआ असि, मसि, कृषि, वाणिज्य, शिल्प या विद्या कर्म से आजीविका करता है। राज्य प्रबन्ध करता है। अन्यायी शत्रु को दमनार्थ युद्ध भी करता है। यह व्रतों को नियम से नहीं पालता है, इसलिये इसको अविरत कहते हैं। तथापि इसके चार लक्षण होते हैं। १- प्रशमशान्त भाव, २- संवेग धर्मानुराग– संसार से वैराग्य, ३- अनुकम्पा-दया, ४- आस्तिक्य– आत्मा व परलोक में विश्वास। इस श्रेणी वाले के छहों लेश्याएँ हो सकती हैं। सर्वही सैनी पंचेन्द्रिय तिर्यंच, देव, नारकी इस गुण स्थान को प्राप्तकर सकते हैं। यही दर्जा मोक्ष मार्ग का प्रवेश द्वार है। यह प्रवेशिका की कक्षा है। इस गुण स्थान का काल क्षायिक व क्षयोपशम की उपेक्षा बहुत है।

५. देश विरत—जब सम्यक्तवी जीव के अप्रत्याख्याना वरण कषाय का उदय नहीं होता है और अप्रत्याख्याना कषाय का क्षयोपशम या मन्द उदय होता है तो श्रावक के व्रतों को पालता है। एक देश हिंसा, असत्य, चोरी, कुशील व परिग्रह से विरक्त रहता है। पांच अणुव्रत, तथा सात शीलों को पालता हुआ साधुपद की भावना भाता है। इस गुण स्थान में रहता हुआ श्रावक गृही कार्य को करता है व धीरे धीरे चारित्र की उन्नति करता हुआ साधु पद में पहुँचता है। इसका काल कम से कम अन्तर्मुहूर्त व अधिक से अधिक जीवन पर्यन्त है। इस श्रेणी को पंचेन्द्रि सैनी पशु तथा मनुष्य धार सकते हैं। छठे से लेकर सब गुण स्थान मनुष्य ही के होते हैं।

६. प्रमत्त विरत—जब प्रत्याख्याना वरण कषाय का उपशय हो जाता है। तब अहिंसादि पांच महाव्रतों को पालना हुआ महाव्रती महात्या हो जाता है। यह हिंसादिका पूर्ण त्याग है इससे महाव्रती है, तथापि इस गुण स्थान में आहार, विहार, उपदेशादि होता है, इससे पूर्ण आत्मस्य नहीं हैं। अतएव कुछ प्रमाद दे इसीसे इसको प्रमत्त विरत कहते हैं, इस काल अन्तमुहूर्त से अधिक नहीं है।

७. अप्रमत्त विरत—जब महाव्रती स्थानस्थ हो जाता है, प्रमोद बिलकुल नहीं होता है, तब इस श्रेणी में होता है। इसका काल भा अन्त मुहूर्त से अधिक नहीं है। महाव्रती पुनः पुनः इन छठे सातवें गुणस्थानों में आता जाता रहता है।

८. गुण स्थान से दो श्रेणियां हैं। एक उपशम श्रेणी, दूसरी क्षपक श्रेणी। जहां कषायों को उपशम किया जावे, क्षय न किया जावे वह उपशम श्रेणी है। जहां कषायों का क्षय किया जावे वह क्षपक श्रेणी है। उपशम श्रेणी में आठवां नौवां, दशवां व ग्यारहवां गुण स्थान तक होता है। फिर नियम से धीरे धीरे गिरकर सातवें में आ जाता है क्षपक श्रेणी के भी चार गुण स्थान हैं: आठवां, नौवां, दशवां व बाहरवां। क्षपक वाला ११ वें को स्पर्श नहीं करता है। बारहवें से तेरहवें में जाता है।

८. अपूर्व करण—यहां ध्यानी महाव्रती महात्मा के अपूर्व उत्तम भाव होते हैं। शुक्ल ध्यान होता है, अन्तर्मुहूर्त से (होता है) अधिक काल नहीं है।

९. अनिवृत्ति करण—यहाँ ध्यानी महात्मा के बहुत ही निर्मल भाव होते हैं, शुकल ध्यान होता है। ध्यान के प्रताप से सिवाय सुक्ष्म लोभ के सर्व कषायों को उपशम या क्षय कर डालता है, काल अन्तर्मुहूर्त से आधिक नहीं है।

१०. सुक्ष्म सांपराय—यहाँ ध्यानी महात्मा के एक सुक्ष्म लोभ का ही उदय रहता है। उसका संयम भी अंतर्मुहूर्त से अधिक नहीं हैं।

११. उपशांत मोह—जब मोह कर्म बिलकुल दब जाता है तब यह कक्षा अंतर्मुहूत के लिये होती है। यथाख्यात चरित्र व आदर्श वीतरागता प्रगट हो जाती है।

१२. क्षीण मोह—मोह का बिलकुल क्षय क्षपक श्रेणी द्वारा चढ़ते हुए दशवें गुण स्थान में हो जाता है। तब सीधे यहाँ आकर अंतर्मुहूत ध्यान में ठहरता है। शुक्ल ध्यान के बल से ज्ञानावरण, दर्शनावारण और अंतराय कर्मों का नाश देता है। और तब केवल ज्ञान का प्रकाश होते ही अरहंत परमात्मा कहलाता है। गुण स्थान तेरहवाँ हो जाता है।

१३. सयोग केवली जिन—अरहंत परमात्मा चार घातीय कर्मों का क्षय होने पर अनंत ज्ञान, अनंत दर्शन, अनंतवीर्य, अनंत दान, अनंत लाभ, अनंत लाभ, अनंतभोग, अनंत उपभोग, क्षायिक सम्यक्तव, क्षायिक चरित्र इन नौ

केवल लब्धियों से विभूषित हो जन्म पर्यंत इस पदमें रहते हुए, धर्मपदेश देते हुऐ विहार करते हैं। इंद्रापि भक्तजन बहुत ही भक्ती करतें हैं।

१४ अयोग केवली जिन—अरहंत की आयु में जब इतनी देर ही रह जाती है जितनी देर अ, इ, उ, ऋ, ऌ ये पांच लघु अक्षर उच्चारण किये जाय तब यह गुण स्थान होता है। आयु के अन्त में शेष अघातीय कर्म आयु, नाम, गोत्र, वेदनीय का भी नाश हो जाता है और यह आत्मा सर्व कर्म रहित होकर सिद्ध परमात्मा हो जाता है। जैसा भूना चना फिर नहीं उगता वैसे ही सिद्ध फिर संसारी नहीं होते हैं। चौदह जीव समास, चौदह मार्गणा, चौदह गुण-स्थान, ये सब व्यवहार या अशुद्ध नय से संसारी जीवों में होते हैं। जीव समास एक काल में एक जीव के एक हो होगा, विग्रह गति का समय अपर्याप्त में गर्भित है। मार्गणाएँ चौदह ही एक साथ होती हैं जैसा दिखाया जा चुका है। गुण स्थान एक जीव के एक समय में एक ही होगा।

आश्रव व बंध तत्व

कार्माण शरीर के साथ जोव का प्रवाह की अपेक्षा अनादि कर्म पुद्गल के मिलने व छूटने की अपेक्षा आदि संबंध है। कामणि शरोर में जो बंधते हैं। उनको बताने वाले आश्रम और बंध तत्व हैं। कर्म वर्गणाओं का बंध के सम्मुख होने को आश्रव और बंध जाने को बंध कहते हैं। ये दोनों काम साथ साथ होते हैं। जिन कारणों से आश्रव होता है, उन्हीं कारणों से बंध होता है। जैसे नाव में छीद्र से पानी आंकर ठहर जाता है। वैसे मन, वचन, काय की प्रवृत्ति द्वारा कर्म आते हैं और बंधते हैं। साधारण रूप से योग और कषाय हो आश्रव व बंध के कारण हैं। मन, वचन, काय के हलन चलन से आत्मा के प्रदेश सकम्प होते हैं। उसी समय आत्मा की योग शक्ति चारों तरफ से कर्म वगणाओं को खींच लेतो है। योग तीव्र होता है, तो अधिक कर्म कणिकाएँ आती हैं। योग मंद होता है तो कम आती हैं। योग के साथ कषाय का उदय क्रोध, मान, माया, लोभ, किसो का उदय मिखा हुआ होता है, इस लिये कभी आठ कर्मोंके योग्य कभी सास कर्मों के योग्यवर्गणाएँ खींचती हैं। यदि कषाय का बिलकुल रंग न मिला हो तो केवल साता वेदनोय कर्म के योग्य कणिकाएं खींचकर आती हैं। बंध के चार भेद है। प्रकृति बंध, प्रदेश बंध, स्थिति बंध, अनुभाग बंध। दोनो से ही प्रकृति और प्रदेश बंध होता है। कषायों से स्थिति और अनुभाग बंध होते हैं। किस किस प्रकृति योग्य कर्म बंध वे हैं वकितने बंधते हैं यही प्रकृति और प्रदेश के बंध का अभी प्राय है। जैसे योगों से आते हैं। वैसे ही योगों से ये दोनों बातें हो जाती हैं,। जैसे ज्ञानावरण के अमुक संख्या के कर्म बँधे दर्शना वरणा के अमुक संख्या के कर्म वँधे। क्रोधादि कषायों की होती है तो आयु कर्म के सिवाय सातों ही कर्मों की स्थिति अफिक पड़तो है। कितने काल तक कर्म ठहरेंगे उस मर्यादाकों स्थिति बंध कहते हैं। यदि कषायमंद होती तो सात कर्मों की स्थिति कम पड़ती है। कषार भेद सोनेपर नर्क आयु की स्थिति अधिक व अन्य तीन आयु कर्म की स्थिति कम पड़ती है। कषाय भेद होने पर नर्क आयु की स्थिति कम व अन्य तीन आयु की स्थिति अधिक पड़ती है। कर्मोंका फल तीव्र या मंद पड़ना इस को अनुभाग बंध कहते हैं। जब कषाय अधिक होती है, तब पाप कर्मों में अनुभाग अधिक व पुण्पा कर्मों में अनुभाग कम पड़ता है। जब कषाय मंद होता है, तब पुण्य कर्मों में अनुभाग कम पड़ता है।

पुण्य पाप कर्म—

आठ कर्मों में से साता वेदनीय, शुभ आयु, शुभ नाम, व उच्च गोत्र पुण्य कर्म हैं। जब की असाता वेदनोय, अशुभ आयु, अशुभ नाम, नीच गोत्र तथा ज्ञानावरणादि चार घातीय कर्म पाप कर्म हैं। योग और कषाय सामान्य से आश्रव और बंध के कारण हैं।

आश्रव और बंध विषेश कारण—पांच हैं। मिथ्यात्व, अरति, प्रमाद, कषाय और योग मिथ्यात्व पांच प्रकार—सच्चा श्रद्धान न होकर जीवादि तत्वों का मिथ्या श्रद्धान होना मिथ्यात्त्व है।

एकांत—

आत्मा व पुद्गलादिक द्रव्यों में अनेक स्वभाव हैं। उनमें से एक ही स्वभाव है ऐसा हठ पकड़ना सो एकांत मिथ्यात्व है। जैसे द्रव्य मूल स्वभाव की अपेक्षा नित्य है। पर्याय पलटने की अपेक्षा अनित्य है। नित्य अनित्य रूप वस्तु है ऐसा न मानकर यह दृढ़ करना कि वस्तु नित्य ही है या अनित्य ही है सो एकांत मिथ्यात्व है या यह संसारी आत्मा निश्चय नप की अपेक्षा शुद्ध है। व्यवहार नय की अपेक्षा अशुद्ध हैं। ऐसा न मान कर इसे सर्वथा अशुद्ध ही मानकर इसे सर्वथा अशुद्ध ही मानना या इसे सर्वथा शुद्ध ही मानना एकान्त मिथ्यात्व है।

विनय—

धर्म के तत्वों की परीक्षा न करके कुतत्व व सुतत्व को एक समान मान के आदर करना विनय मिथ्यात्व है। जैसे पूजने योग्य वीतराग सर्वज्ञ देव हैं। अल्पज्ञ देव पूजने योग्य नहीं हैं। तो भी सरल भाव से विवेक ने बीना दोन्तें की भक्ती करना विजय मिथ्यात्व है। जैसे कोई सुवर्ण और पीतल को समान मान के आदर करें तो वह अज्ञानी ही माना जायगा। उसको सर्वण के स्थान में पीतल लेकर धोखा उठाना पड़ेगा' सच्चो समहक्त भाव रुप आत्मा प्रनिती उसको नहीं हो सकती।

अज्ञान-

तत्वों के जानने की चेष्टा न करके देखा देखी किसी भी तत्व को मान लेना अज्ञान मिथ्यात्व है। जैसे-जल स्नान से धर्म होता है ऐसा मानकर जल स्नान भक़्ती से करना अज्ञान मिथ्यात्व है।

संराय–

सुतत्व और कुतत्व की तरफ निर्णय न करके संशय में रहना कौन ठीक है, कौन ठीक नही है ऐसा एक तरफ निश्चय न करना संराय मिथ्यात्व है। किसी ने कहा रागा द्वेष भाव जीव के हैं। किसी ने कहा पुदगल के हैं। संशय रखना दोनों में कौन ठीक है सो संशय मिथ्यात्व हैं।

विपरित–

जिसमें धर्म नहीं हो सकता है उसको धर्म मान लेना मिथ्यात्व हैं। जैसे पशु बलि को धर्म मान लेना।

अविरत्ति भाव—

इसके बारह भेद भी हैं। और पांच भेद भी हैं। पांच इन्द्रिय और मन को वश में न रखकर उनका दास होना तथा पृथ्वी आदि छः कार्य के प्राणियों की रक्षा के भाव न करना इस तरह बारह प्रकार अविरत भाव हैं। अथवा हिंसा असत्य, चोरी, कुशील और परिग्रह मूर्छा ये पांच पाप अविरति भाव हैं।

प्रमाद–

आत्मानुभव में धर्म ध्यान में आलस्य करने को प्रमाद कहते हैं, इसके ८० भेद हैं। चार विकथा + चार कषाय +पांच इद्रिय × १ स्नेह १ निद्रा =८० । चार विकथा-स्त्री, भोजन, देश, राजा राग वढ़ाने वाली स्त्रियों के रुप, सोन्दर्य, हावभाव, विभ्रम संयोग, वियोग की चर्चा करना स्त्री कथा है। राग वढ़ाने वाली, भोजनों के सरस नीरस खाने पीने व चबाने आदि की चर्चा करना भोजन विकथा हैं। देशमें लूटपाट, मार पीट, जूआ, चोरी, व्यभि चार व नगरादि की सुन्दरता सम्वन्धी राग द्वेश वढ़ाने वाली कथा करना देश विकथा है। राजाओं के रुप की, सुन्दरता सम्बन्धी रोग द्वेष बढ़ाने वाली विभूति की, सेना की, नोकर चाकर आदि की राग बढ़ाने वाली कथा करना राजा विकथा हैं।

हर एक प्रमाद भाव में एक विकथा, एक इन्द्रीय एक स्नेह व एक निन्द्रा के उदय का सम्बन्ध होता है। इस लिए प्रमाद के ८० भेद हो जाते हैं। जैसे पुष्प सूंघने की इच्छा होना एक प्रमाद भाव है। इसमें भोजन कथा (इन्द्रिय

भोग संबंधी कथा भोजन कथा में गर्भित है। लोभ कषाय घ्राण इन्द्रिय स्नेह व निद्रा ये पाँच भाव संयुक्त हैं। किसी ने किसी सुन्दर वस्तु को देखने में अंतराय किया उसपर क्रोध करके कष्ट देने की इच्छा हुई। इस प्रमाद भावमें भोजन कथा, क्रोध कषाय, चक्षु इन्द्रिय, स्नेह और निद्रा गर्भित है।

कषाय–के २४ भेद हैं।

योग–के तीन या १५ भेद हैं।

चौदह गुण स्थानों की अपेक्षा आश्रव बंध के कारण मिथ्यात्व–

गुणस्थान में मिथ्यात्व, अविरत, प्रमाद, कषाय, योग पांचों हा कारण हैं।

सासादन गुण स्थान में–मिथ्यात्व नहीं है। शेष सर्व कारण हैं। मित्र गुणस्थानमें–अनतानु बंधी ४ कषाय भी नहीं हैं मिश्रभाव सहित अविरत, प्रमाद कषाय योग हैं। अविरव सम्यक गुणस्थान में न मिथ्यात्व है, न मिश्र भाव है, न अनन्तानु बंधी कषाय हैं। शेष अविरत प्रमाद, कषाय व योग शेष हैं।

देश विरत गुणस्थान में–एक देशव्रत होने से अविरत भाव कुछ घटा तथा अप्रत्याख्याना वरण कषाय भी छूट गया। शेष अविरत प्रमाद, कषाय व योग बंध के कारण हैं।

छठे प्रमत्त गुणस्थान में–महाव्रती होने से अविरत भाव बिलकुल छूट गया तथा प्रख्यानावरण कषाय भी नहीं रहा। यहाँ शेष प्रमाद, कषाय व योग शेष है।

अप्रमत्त गुणस्थान में–प्रमाद भाव नहीं रहा, केवल कषाय व योग हैं। अपूर्व करण में भी कषाय व योग है, परन्तु अतिमंद हैं।

अनिवृत्ति करण नामे गुणस्थान में–हास्य, रवि अराति, शोक, भय, जुगुप्सा नो कषाय नही है। संरवलन चार कषाय व तीन वेद अवि मंद हैं। सूक्ष्म सांपराय में केवल सूक्ष्म लोभ कषाय और योग हैं। उपशांत मोह, क्षीण मोह, तथा संयोग केवली जोन–इन तीन गुणस्थान में केवल योग है। चौदहवें में योग भी नहीं रहता है। इस तरह बंध का कारण भाव घटता जाता है।

द्रव्यों के छः सामान्य गुण – सर्व छहो द्रव्यों में छः गुण सामान्य हैं। सब में पाए जाते हैं।

१ अस्तित्व गुण—जिस शक्ती के निमित्त से द्रव्य का कभी नाश न हो उसे अस्तित्व गुण कहते हैं।

२ वस्तुत्व गुण—जिस शक्ती के निमित्त से वस्तु कुछ कार्य करे व्यर्थ न हो उसे वस्तुत्व गुण कहते हैं। जैसे पुद्गल में शरीरादि बनाने की अर्थ किया है।

३ द्रव्यत्व गुण—जिस शक्ती केनिमित्त से द्रव्य ध्रुव रहते हुऐ भी पलटता रहे, उसमें पदार्थ होती रहे। उसे द्रव्यत्व गुण कहते हैं, जैसे पुद्गल मिट्टी से घड़ा बनाना।

४ अगुरु लघुत्व गुण—जिस शक्ति के निमित्त से एक द्रव्य दुसरे द्रव्य रुप न हो, एक गुण दुसरे गुण रुप न हो व एक द्रव्य में जितनें गुण हों उतने ही रहें, न कोई कम हो न कोई अधिक हो उसे अगुरु लघुत्व गुण कहते हैं।

५ प्रमेयत्व गुण —जिस शक्ति के निमित्त से एक द्रव्य किसी के ज्ञान का विषय हो उसे प्रमेयत्व गुण कहते हैं।

६ प्रदेशत्व गुण —जिस शक्ति के निमित्त से द्रव्य का कुछ न कुछ आकार अवश्य हो उसे प्रदेशत्व गुण कहते हैं। आकार बिना कोई वस्तु नहीं हो सकती है। आकाश में जो वस्तु रहती है, वह जितना क्षेत्र घेरती है, वही उसका आकार है। छहों द्रव्यों में अपना अपना आकार है। पुद्गल मूर्तिक है। उसका आकार भी मूर्तिक है। स्पर्श, रस, गंध वर्ग मय है- शेष पांच द्रव्य अमूर्तिक हैं। उनका आकार भी अमूर्तिक है।

⁑ संक्षिप्त सूतक बिधि ⁕

सूतक में देव शास्त्र गुरु की प्रक्षालादिक करना, तथा मंदिर जी की जाजंम वस्त्रादिको स्पर्श नहीं करना चाहिये। सूतक का समय पूर्ण हुये बाद पूजनादि कर पात्रदानादि करना चाहिये।

१—जन्म का सुतक दश दिन तक माना जाता है।

२—यदि स्त्री का गर्भपात (पांचवें छठे महीने में) हो तो जितने महीने का गर्भपात हो उतने दिन का सूतक माना जाता है।

३—प्रसूति स्त्री को ४५ दिन का सूतक होता है, कहीं-कहीं चालीस दिन का भी माना जाता है। प्रसूति स्थान एक माह तक अशुद्ध है।

४—रजस्वला स्त्री चौथे दिन पति के भोजनादि के लिये शुद्ध होती है परन्तु देव पूजन पत्रदान के लिये पांचवें दिन शुद्ध होती है। व्याभिचरण स्त्री के सदा ही सूतक रहता है।

५—मृत्युका सूतक तीन पीढी तक १२ दिन का माना जाता है। चौथी में छह दिनका, पांचवीं छठी पीढ़ी तक चार दिनका सातवीं पीढ़ी में तीन, आठवीं पीढ़ी में एक दिन रात' नवमी पीढ़ी स्नानम में शुद्धता हो जाती है।
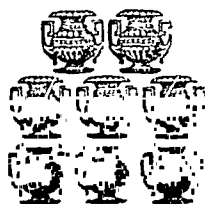
त्यागने योग्य २२ अभक्ष

आचरण हमारा शुद्ध नहीं, कल्याण हमारा कैसे हो।
विषियन वश भक्ष, अभक्ष भखवे, हियज्ञान उजाला कैसे हो ॥
पूजा कर मन इच्छा धरते, मन चंचल कर माला जपते।
झूठे धंधे गटपट करते, करमों का निवारा कैसे हो।
ओला, घोरवडा निशि भोजन, बहुवीजक, बैंगन संघान।
बड़, पीपल, उमर, कटुमर, पाकर फल जो होय अजान।
कन्द मूल, मारी वीष आमिष मधु मक्खन अरु मदिरा पान।
फल अति तुच्छ चलित रस जिनमत ये बाईस अभक्ष वखान।

मध, मांस, मधु, मक्खन, वासी भोजन, अचार, मुरब्बे २४ घन्टे से पहले वने हुए पापड, मंगोडी, वो घा व संदिग्ध अन्न, रात्रि भोजन, जलेवी, गोभी का फूल, कांजो वडा वैंगन, कंदमूल, माटी, वीष, द्वियल (दही के साथ दालों व दाल द्वारा मिश्रित पदार्थोंका) आदि पदार्थोंमे त्रस जीवों की उत्पत्ति होती है। नहीं खाना चाहिये जमीन कंद–रत्नालू, आलू गाजर, लहसुन, कांदा, अद्रक, मूला, नहीं खाना चाहिये।

अष्टानिक पर्व के उपलक्ष में ✠

विश्व शांति के हितार्थ और स्वपर कल्याण के उपदेशार्थ तपो निधि श्री १०८ दिगम्बर जैन मुनि श्री श्रेयाँस सागर जी महाराज का यहाँ आगमन हुआ है। गुरु के उपदेश से बहुत से श्रावक श्राविकाओं ने व्रतनियम धारण किये हैं। आत्मोन्नति और स्वपर कल्याणार्थ जो नियम देव, गुरु और जिन–वाणी की साक्ष में लिये हैं। इस लिये उत्तम उपयोग लगाके उनको बराबर पालते रहें।

(१) श्री जिनेंद्र भगवान का दर्शन और स्वाध्याय करना।

(२) अष्ट मूल गुणों का पालना– (बड़, पीपल, कटुंबर, उंबर, अंजीर), (मद्य, मास, शहद)

(३) सप्त व्यसन का त्याग–जूवा, मांस, दारु, वेश्या, परस्त्री सेवन, चोरी, शिकार,

(४) मिथ्यात्व व्याग–कुदेव, कुगुरु, कुशास्त्र

(५) पुर्नविवाह अनुमोदना का त्याग .

(६) छान के पानी पीना, लाख के वस्तु त्याग. प्लैस्टीक का त्याग, चमड़े का त्याग.

(७) रातको भोजन त्याग, बिड़ी, सिगरेट, तंबाखु का त्याग.

(८) चौर्यासो जालियों मैं वात्सल्यता और धर्भ भाव रखना .

(९) समाज का जो कार्य है उसे प्रेम से और सहकारी पद्धति से निभाना, ताको उसमें हरेक का कल्याण हो। उपर लिखे मुताबिक जो श्रावक श्राविकाएँ यथा योग्य नियम धारणा रखते हैं। वही मुनि महाराज को नवद्या भक्ति से आहार दान दे सकते हैं।

आहार दान की विधी = जो दाता आहार देता है, उसे जनेऊ पहनना चाहिये, पुज्य महाराज जी के पास जाकर नियम व्रत धारण कर नवद्या भक्ति से मुनिराज को आहार दान देना चाहिये।

(१) मुनि को देखतेही हे स्वामी नमोस्तु, नमोस्तु , नमोस्तु, अत्रतिष्ट तिष्ट तिष्ट, आहार पाणी शुद्ध है – ऐसा कहते रहना चाहिये।

(२) पूज्य मुनिराज खड़े रह जाते हैं, तब मन शुद्ध, वचन शुद्ध काय शुद्ध आहार वाणी शुद्ध है, अन्दर पधारिये महाराज

(३) उचें आसन पर विराजिये ऐसा कहना चाहिये ।

(४) अपने पैर धोकर साधु पाद प्रक्षालन करना चाहिये ।

(५) अष्ट द्रव्य से पूजन करना चाहिये ।

(६) तीन प्रदक्षिणा देना चाहिये ।

(७) मन शुद्धि, वचन शुद्धि, काय शुद्धि आहार पानी शुद्ध है, भोजन ग्रह में पधारिये ।

(८) ऊंचे आसन पर विराजिये ऐसा कहना चाहिये

(९) थाली परोसकर दिखावें, दिखाने के बाद मन शुद्धि वचन शुद्धि, काय,–

शुद्धि, आहार पानी शुद्ध है । अंजुली जोड़कर आहार ग्रहण किजिए ऐसा कहना चाहिये । और अपना हाथ धोकर मुनि महाराज के हाथ पर प्रथम पानी देकर ग्रास डालना चाहिये । ऐसे नोछा भक्ति पूर्वक श्रावकों को आहार दान देना चाहिये । आहार देते समय सिर खुला रखना नहीं चाहिये ।

'इस दानव को मार भगाओ

(दहेज-प्रथा का भजन)

इस दहेजने फैलाया भारी अत्याचार है,
इस मानव को मार भगावो यह समाज का भार है ॥
पुत्र जन्म होते ही घरमें लहर खुशी की आ जाती,
लेकिन कन्या इस धरतिपर एक समस्या बन जाती ॥
कैसे हाथ करेंगे पीले, प्रश्न समूचे जीवन का,
बात सैकडों की न कही भी, पहला अंक हजार का
इस दानव को मार भगावो, यह समाज का भार है,

शिक्षित और सुशील सुपुत्री रूप गुणों की उजियारी,
किंतु पिताके पास नहीं धन शील लिए बैटी क्वांरी ॥
ओ समाज के ठेकेदारों, कुंभ करन बन सोवे हो,
अनाचार से आँख फेरकर, बीज पापका बोवे हो ॥
पैसे को भगवान मानकर, रचा कूट व्यवहार है,
इस दानव को मार भगावो, यह समाज का भार है ॥

नानी का क्या मुल्य न कोई, क्या वह पशु सी दीन अहो,
नरको तुलनामें क्यों उसको, माना इतना हीन कहो ॥
लडके वाले लेन देन में, कितनी अकड दिखाते हैं,
निलामी जैसे बोली वह नगोंकी लगवाते है ॥
यह पुनित संबंध नहीं है, निंदनीय व्यवहार है,
इस दानव को मार भगावो यह समाजका भार है ॥

इस कुरीतने पुष्कर की बाढ़ भयंकर फैलाई,
घुस मिलावट चोर बजारी बेईमानी शिखलाई ॥
चिताही दहेज की निशदिन किये जहाँ हैरान बाडा
एक तरफ शादी सौदा, एक तरफ इमान खडा ॥
परेशान होकर बहुतोंने, छोड दिया संसार

इस दानव को मार भगावो, यह समाज का भार है
इस दहेज ने फैलाया भारी अत्याचार है ॥

तंबाखू, जर्दा, बीड़ी, सिगरेट में २४ घातक विष

(वैज्ञानिक खोज)

१—निकाटीन विष = से कैंसर पैदा होता है।

२—कार्बन मोनोक्साईड विष = से दिलकी बिमारी, सांस रोग दमा और आंखों की कमजोरी आदि रोग उत्पन्न होते हैं।

३—मार्शगैष विष=से शक्ति नष्ट होती है और नपुंसकता प्राप्त होती है।

४—अमोनिया विष=से सिर चकराने लगता है, और जिगर खराब होता है,

५—कोलो डिन विष=से पाचन शक्ति नष्ट होती है, और नसें कमजोर पडती हैं।

६—पायरीडीन विष=से आंतों में खुश्की और पेटमें कब्ज रहने लगता है।

७—कार्बोलिक एसिड विष=से अनिद्रा, स्मरण शक्ति में कमी और चिड़ चिड़ापन उत्पन्न होता है।

८—राजो लिन विष और सायनोजन विष=से खून खराब होता है।

९—फुरफुरल विष=इससे थकान, जड़ता आती है।

१०—प्रूसिक विष=से उदासी उत्पन्न होती है। तंबाकू में पाए जानेवाले इसी प्रकारके अन्य विषों के कारण खांसी, टी.बी, अन्दरूनी सूजन, लकवा और खून का पानी तक बन जाता है।

एक ही सिगरेट से मौत=याद रखिए यदि एक ही सिगरेट का धुंवा वाहर न निकाल दिया जाय तो मौत तक हो सकती है।

एक सिगरेट से मनुष्य की आयु १८ मिनिट कम होती है।

☆ सिद्ध परमात्मा ★

सिद्ध—सर्व कर्म रहित सिद्ध परमात्मा ज्ञानानन्द में मगन रहते हुए आठ कर्मों के नाश के आठ गुण सहित शोभायमान रहते हैं वे आठ गुण हैं ज्ञान—ज्ञान, दर्शन, सम्यक्त, वीर्य, सक्ष्मत्व, अवगाहनत्व, अगुरुलघुत्व, अन्या बाधत्व अर्थात सिद्धों में अवीन्द्रियपना है, ईन्द्रियों से ग्रहण योग्य नहीं हैं।जहाँ तक सिद्ध विराजित हैं। वहाँ अन्य अनेक सिद्ध अवगाह पा सकते हैं। उनमें कोई नीच ऊंच पना नहीं है। उनको कोई बाधा नहीं दे सकता है वे लोक के अग्र-भाग में लोक शिखरपर सिद्ध क्षेत्र में तिष्ठते हैं।

ऊर्द्ध गमन स्वभाव — सूर्व कर्मों से रहित होने पर सिद्ध का आत्मा स्व-भाव से ऊपर जाता है। जहाँ तक धर्म द्रव्य है। वहाँ तक जाकर अंत में ठहर जाता है। अन्य संसारी कर्म बद्ध आत्माएँ एक शरीर को छोड़कर जब दूसरे शरीर में जाते हैं। तब चार दिशाओं को छोड़कर पूर्व पश्चिम दक्षिण उत्तर ऊपर, नीचे, इन छः दिशाओं द्वारा सीधा मोड़ा लेकर जाते है, कोनो में टेडा नहीं जाते हैं।

जीवों की सत्ता सबकी भिन्न भिन्न रहती हैं। कोई की सत्ता किसी से मिल नहीं सकती है। जीव की अवस्था के तीन नाम प्रसिद्ध हैं—बहिरात्मा, अंतरात्मा, परमात्मा। पहले तीन गुणस्थान वाले जीव बहिरात्मा हैं। अविरत सम्यक्तव चौथे से लेकर क्षीणमोह बारहवें गुणस्थान तक जीव अंतरात्मा कह-लाता है। तेरहवें व चौदहवें गुणस्थान सकल या स शरीर परमात्मा कहलाते हैं। सिद्ध शरीर या कल रहित निकल परमात्मा कहलाते हैं। तत्व ज्ञानी को को उचित है कि बहिरात्मापना छोड़कर अंतरात्मा हो जावे और परमात्मा पद प्राप्ति का साधन करे। यही एक मानव का उच्च ध्येय होना चाहिये यहजीव अपने ही पुरुषार्थ से मुक्त होता है। किसी की प्रार्थना करने से मुक्ति का लाभ नहीं होता है।

जीव और पुद्गल का संयोग ही संसारी आत्मा की अवस्थाएँ है। सब पुद्गल की पसारा है। यदि पुद्गल को निकाल डालें तो हर एक जीव शुद्ध दिखेगा। इसी के शुद्ध निश्चय नय से सर्व जीव शुद्ध हैं।ससांर में जीव और पुद्गल अपनी शक्ति से चार काम करते हैं। चलना, ठहरना, अवकाश पाना और बदनना हर एक कार्य उपादान और निमित्त दो कारणों से होता है।

जैसे सोने की अंगुठी का उपादान कारण, सुवर्ण है, परंतु निमित्त कारण सुनार व उसके पत्रादि हैं। इसी तरह इन चार कामों के उपादान कारण जीव पुद्गल हैं तब निमित्त कारण अन्य चार द्रव्य हैं। गमन में सहकारी धर्म है, स्थिति में सहकारी अधर्म है। अवकाश में सहकारी आकाश है। बदलने में सहकारी काल द्रव्य है। समय, आवली, पल, आयि निश्चय काल की पर्यायें हैं। ऐसी को व्यवहार काल कहते हैं। जब एक पुद्गल परमाणु एक कालाणुपर से उल्लंघन कर निकट वर्ती कालाणु पर जाता है तब समय पर्याय पैदा होती है। इन्हीं समयों से आवली, घड़ी आदि काल बनता है। यद्यपि ये छहों द्रव्य एक ही स्थान पर रहते हैं, एक दूसरे को सहायता देते हैं, तथापि मूल स्वभाव में भिन्न भिन्न बने रहते हैं, कभी मिलते नही हैं।न कभी छः के सात होते हैं न पांच होते हैं।

श्री कुन्द कुन्दा चार्य समय सार में कसते हैं।—

चन्द्रगुप्त राजा के १६ स्वप्ने

किसी समय महाराज चन्द्र गुप्त वात, पित्त, कफादि रहित सोये हुवे थे उस समय रात्रि में पिछले प्रहर में आश्चर्य जनक नीचे लिखे हुये सोलह खोटे स्वप्न देखे।

(१) कल्प वृक्षकी शाखा का टूटना,—(१) अब आगे कोई राजा जिन भगवान के कहे हुये संयमको ग्रहण नहीं करेगा।

(२) सूर्य का अस्त होना—(२) पंचम कालमें जैन धर्म दिनों दिन कम होते जावेगा

(३) चालनि के समान छिद्र सहित चन्द्र मंडल का उदय—(३) पंचम काल में जिन मत में अनेक मतोंका प्रादुर्भाव कहता है.

(४) बारह फण वाला सर्प.—(४) बारह वर्ष पर्यंत अत्यन्त भयंकर दुर्भिक्ष पडेगा.

(५) पिछे लौटा हुआ देवताओं का विमान—(५) पंचम काल में देवता विद्याधर तथा चारण मुनि नहीं आवेंगे.

(६) अपवित्र स्थानपर उत्पन्न हुआ विकसित कमल—(६) इससे बहुधा हीन जाती के लोग जिन धर्म धारण करेंगे. किंतु क्षत्रिय आदि उत्तम कुल वाले मनुष्य नहीं धारण करेंगे.

(७) नृत्य करता हुआ भूतों का परिकर—(७) से मालूम होता है कि मनुष्य नीचे देवों में अधिक श्रध्दा के धारक होंगे।

(८) खद्योत का प्रकाश—(८) जिन सूत्र के उपदेश करनेवाले भी मनुष्य मिथ्यात्व करके युक्त होंगे और जिन धर्म भी कहीं कहीं रहेगा।

(९) अंत में थोड़े से जल का भरा हुआ तथा बीच में सूखा हुआ सरोवर—(९) जहाँ तीर्थंकर भगवान के कल्याणिक हुवे हैं ऐसे तीर्थ स्थानों में काम देवके मदका छेदन करने वाला उत्तम जिन धर्म नाश को प्राप्त होगा, तथा कहीं दक्षिणादि देश में कुछ रहेगा भी।

(१०) हाथीपर चढा हुआ बंदर—(१०) देखने से नीचे कुल में पैदा होनेवाले लोग राज्य करेंगे क्षत्रिय लोग राज्य रहित होंगे

(११) समुद्र का मर्यादा छोडना—(११) देखने से प्रजा की समस्त लक्ष्मी राजा लोग ग्रहण करेंगे, तथा न्याय मार्ग के उल्लंघन करने वाले होंगे।

(१२) छोटे छोटे बच्चों से धारण किया हुआ और बहुत भार से युक्त रथ
—(१२) बहुदा लोग करके तारूण्य अवस्था में ग्रहण करेंगे- किन्तु शक्ति के घट जाने से बृद्धा अवस्था में धारण नहीं कर सकें।

(१३) ऊँट पर चढा हुआ तथा धूली से आच्छादित राजपुत्र
(१३) ज्ञात होता है कि राजा लोग निर्मल धर्म छोड़ कर हिंसा मार्ग स्वीकार करेंगे।

(१४) दै दिप्यमान कान्तियुक्त धूली से आच्छादित रत्नराशि।
(१४) देखने से निर्ग्रन्थ मुनि भी परस्पर में निन्दा करने लगेंगे

(१५) काले हाथियों का युद्ध– (१५) देखने से मेघ मनोभिलषित नहीं वर्षेंगे

(१६) सुवर्ण के भाजन में खान का खीर खाना.
(१६) लक्ष्मी का प्रायः नीच पुरुष उपभोग करेंगे और कुलीन पुरुषों को दुष्प्राप्य होगी।

इन स्वप्नों को देखने से चन्द्र गुप्त को वहुत आश्चर्य हुआ और किसो योगो राज से इनके शुभ तथ अशुभ फल पूछने की अभिलाषा की–
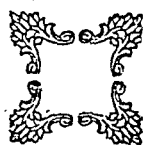
卐 भावना दिन रात मेरी 卐

भावना दिन रात मेरी सब सुखी संसार हो ।
सत्य संयम शील का व्यवहार घर घर वार हो ॥
धर्म का प्रचार हो, अरु देश का उद्धार हो ।
और यह विगड़ा हुवा भारत चमन गुलजार हो ॥
ज्ञान के अभ्यास से जीवों का पूर्ण विकास हो ।
धर्म के प्रचार से हिंसा का जग से नाश हो ॥
शांति अरु आनन्द का हर एक घर में वास हो ।
वीर वाणी पर सभी संसार का विश्वास हो ॥
रोग अरु भय शोक होवे दूर सब परमात्मा ।
कर सके कल्याण जो कि सब जगत को आत्मा ॥
भावना दिन रात मेरो सब सुखी संसार हो ॥
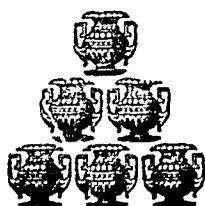
अथ लघु शांति मंत्र प्रारंभ्यते

ॐ नमः सिध्देभ्यः ३ । श्री वीतरागाय नमः । ॐ नमोऽर्हते भगवते श्रीमते । श्रार्श्वतीर्थंकराय द्वादश गण परिवेष्टिताय, शुक्ल ध्यान पवित्राय सर्वज्ञाय । स्वयंभुवे । सिद्धाय, बुद्धाय । परत्मात्मने परमसुखाय त्रैलोक्य महिव्याप्ताय । अनन्त संसार चक्र परिमर्दनाय । अनन्त दर्शनाय अनन्त वीर्याय । अनन्त सुखाय । सिद्धाय, बुद्धाय, त्रैलोक्य व शंकराय, सत्यज्ञानाय, सत्यब्रह्मणे, धरणेंद्र फणा मण्डल मण्डिताय, ऋष्यार्थिका श्रावक श्राविका प्रमुखचतुस्संघोप सर्ग विनाशाय, घाति कर्म विनाशाय, अघाति कर्म विनाशय अपायं अस्माकं, छिद छिद, भिद भिद ।

आगे के प्रत्येक शब्द के साथ छिद छिद भिद भिद कहना चाहिये मृत्युं छिद छिद भिद भिद । अतिकामं । रतिकामं । क्रोद्यं । अग्नि । सर्व शत्रुं । सर्वोपसर्गं । सर्वविध्नं । सर्व भयं । सर्व चोर भयं । सर्व दुष्ट भयं । सर्व मृग भयं । सर्वमात्मक भयं । सर्व परमन्त्रं । सर्व शूल रोगं । सर्व क्षय रोगं । सर्व कुष्ट रोगं । सर्व क्रूर रोगं । सर्व नर मारिं । सर्व गण मारिं । सर्वाक्षमारिं । सर्वमामारिं । सर्व महिष मारिं । सर्व धान्य मारिं । सर्व वृक्ष मारिं । सर्वगला-मारिं । सर्व पत्र मारिं । सर्व पुष्प मारिं । सर्व फल मारिं । सर्व राष्ट्र मारिं । सर्व देश मारिं । सर्व विष मारिं । सर्व वेशाल शाकिनी भयं । सर्व वेदनीयं । सर्व मोहनीयं । सर्व कर्माष्टकं ।

इसके आगे प्रत्येक चरण के सामने कुरु-कुरु कहना—ॐ सुदर्शन महाराज चक्र विक्रम तेजो बल शौर्य वीर्य शांति कुरु कुरु । सर्वजनानंदनं । सर्वभव्यानंदनं । सर्वगोकुलानंदनं । सर्व ग्राम नगर खेट कर्वट मटम्बपत्तन द्रोण मुख संवाहानंदनं । सर्वलोकानंदन । सर्वयजमानानंदनं ।

सर्व दुःखं हन हन, दह दह, पच पच, कुट कुट, शीघ्रं शीघ्रं ॥
सत्सुखं त्रीषु लोकेषु व्याधिव्यसन वर्जितं ।

अभयं क्षेममारोग्यं स्वस्तिरस्तु विधीयते शिवमस्तु । कुल गोत्र धन धान्यं सदास्तु । चन्द्रप्रभ वासुपूज्य मल्लि वर्धमान पुष्पंदत शीतल मुनि सुव्रत नेमिनाथ पार्श्वनाथ रत्येभ्योः नमः ।

इत्यनेन मंत्रेण नवग्रहार्थ गंधोदक धारा वर्षणम् । ॐ

अथ बृहत् शांति मंत्र प्रारंभ्यते

ॐ नमः सिद्धेभ्यः ॐ नमः सिद्धेभ्यः ॐ नमः सिद्धेभ्य । वीतरागाय नमः ॐ नमोऽर्हते भगवते श्रीमते श्री पार्श्वनाथ तीर्थंकराय, द्वादशगण परिवेष्टिताय, शुक्ल ध्यान पवित्राय, सर्वज्ञाय, स्वयंभुवे, सिद्धाय, बुद्धाय, परमात्मने, परम सुखाय, त्रैलोक्यमहीव्याप्ताय, अनन्त संसार चक्र परिमर्दनाय, अनन्त ज्ञानाय, अनन्त दर्शनाय, अनन्त सुखाय, सिद्धाय, वुद्धाय, त्रैलोक्य व शंकराय, सत्यज्ञानाय, सत्यब्रह्मणे, धरणेंद्र फणा मण्डल मण्डिताय, ऋष्यार्पिका श्रावक श्राविका प्रमुख चतुस्संघोपसर्ग विनाशाय, घातिकर्म विनाशाय, अघातिकर्म विनाशाय अपायं अस्माकं छिद छिद भिद भिद ।

इसके वाद प्रत्येक शव्द के आगे छिद छिद भिद भिद कहिये । मृत्युं । अतिकामं । रतिकामं । क्रोधं । मानं । मायां । लोभं । हास्यं । रतिं, अरतिं । शोकं । भयं । जुगुप्सां । पुंवेदं । स्त्रीवेदं । नपुंसकवेदं । मिथ्यात्वं । रागं । द्वेषं । मोहं । मत्सरं । असूयां । ईर्ष्यां । सर्व विभावं । सर्व विकारं । सर्व विषादं । सर्व प्रमादं । सर्व कषायं । सर्व विकथां । सर्व पंचेंद्रियविषयेच्छां । सर्व स्नेहं । सर्व निद्रां । सर्वाशां । सर्व तृष्णां । सर्व मूर्च्छां । सर्वार्ति । सर्व रौद्रं । सर्वाधिं । सर्व व्याधिं । सर्वोपाधिं । सर्वाकुलता । सर्वौत्सुक्यं । सर्व दीनतां । सर्व तापं । सर्व दायं । सर्व दुःखं । सर्व दोषं । सर्व वैरं । सर्व विरोधं । सर्वाहंकारं । सर्व ममकारं । सर्व संकल्प । सर्व विकल्पं । सर्व चतुःसंज्ञां । आहार संज्ञां । भय संज्ञां । परिग्रह संज्ञां । सर्व अग्नि । सर्व शत्रु भावं । सर्वोपसर्गं । सर्व विघ्नं । सर्व भयं । सर्व राज भयं । सर्व चौर भयं । सर्व दुष्ट भयं । सर्व मृग भयं । सर्व मात्मक भयं । सर्व इंद्रलोक भयं । सर्व परलोक भयं । सर्व अकस्मात् भयं । सर्व मरण भयं । सर्व वेदना भयं । सर्व शरण भयं । सर्व अत्राण भयं । सर्व अगुप्ति भयं । सर्व वेताल शाकिनी भयं । सर्व क्रूर रोगं । सर्व शूल रोगं । सर्व क्षय रोगं । सर्व कुष्ट रोगं । सर्व परमंत्रं । सर्व नर मारिं । सर्व गजमारिं । सर्व अश्वमारिं । सर्व गोमारिं । सर्व महिषमारिं । सर्व धान्य मारिं । सर्व वृक्ष मारिं । सर्व गलमारिं । सर्व पत्र मारिं । सर्व पुष्प मारिं । सर्व फल मारिं । सर्व राष्ट्र मारिं । सर्व देश मारिं । सर्व विश्व मारिं । सर्व विष मारिं । सर्व ज्ञानावरणीयं । सर्व दर्शनावरणीय । सर्व वेदनीयं । सर्व मोहनीयं । सर्व आयु कर्मं । सर्व नाम कर्मं । सर्व गोत्र कर्मं । सर्वान्तरायं । सर्व कर्माष्टिकं ।

इसके बाद सब चरणों के बाद कुरु कुरु कहना :—

ॐ सुदर्शन महाराज चक्रविक्रमं । पराक्रमं । तेजः । बलं । वीर्यं । शांति । संतोषं । समाधानं । विवेकं । विज्ञानं । मैत्रीं । प्रमोदं । कारुण्यं । माध्यस्थं । परमानंदं । परममंगलं । परम भद्रं । परम शुभं । परम शिवं । बोधिलाभं । समाधिमरणं । परिणाम विशुद्धिः । स्वात्मोपलब्धि । शिवसौख्य सिद्धि । वीतरागतां । विज्ञानतां । निर्लोभितां । निर्लेवतां । निरहंकारतां । निष्कलंकतां । अनंत दर्शनं, अनंत ज्ञानं । अनंत सुखं । अनंत वीर्यं । उत्तम धर्म ध्यानं । उत्तम शुक्ल ध्यानं । उत्तम क्षमां । उत्तमार्दवः । उत्तमार्जवं । उत्तम शौचं । उत्तम सत्यं । उत्तम संयमं । उत्तम तपः । उत्तम त्यागं । उत्तम किंचन्यं । उत्तम ब्रह्मचर्यं । दर्शन विशुद्धि । विनय सम्पन्नतां । शीलव्रतेष्वनतिचारं । अभीक्ष्णज्ञानोपयोगं । संवेगं । शक्तितस्तयः त्यागं । शक्तितस्तयः । साधुसमाधि । वैय्यावृत्यं । अर्हद्भक्तिं । आचाय भक्तिं । बहुश्रुतभक्तिं । प्रवचनभक्तिं । आवश्यकापरिहाणि । मार्गप्रभावनां । प्रवचनवत्सलत्वं । व्यवहार निश्चय रत्नत्रय सम्पन्नं । अष्टांग सम्यग्दर्शन सम्पन्नं । अष्टांग सम्यग्ज्ञान सम्पन्नं । त्रयोदशसम्यक्चारित्रसम्पन्नं । पंचमहाव्रतसम्पन्नं । अहिंसामहाव्रतसम्पन्न । सत्यमहाव्रतसम्पन्नं ब्रह्मचर्य-महाव्रत सम्पन्नं । आकिंचन्य महाव्रत सम्पन्नं । पंच समिति संयुक्तं । ईर्या समिति संयुक्तं । भाषा समिति संयुक्तं । एषणा समिति संयुक्तं । आदान निक्षेपण समिति संयुक्तं । उत्सर्ग समिति संयुक्तं । मनोगुप्तिगुप्तं । वचन-गुप्तिगुप्तं । कायगुप्तिगुप्तं । पंच महाचार सम्पन्नं । ज्ञानाचार सम्पन्नं । दर्शनाचार सम्पन्नं । चरित्राचार सम्पन्नं । तपांचार सम्पन्नं । वार्याचार सम्पन्नं । चतुर्विधाराधनां सम्पन्नं । दर्शनाराधना सम्पन्नं । ज्ञानाराधना सम्पन्नं । चरित्राराधना सम्पन्नं । तमाराधना सम्पन्नं । पंचमहाचारित्र सम्पन्नं । सामायिक सम्पन्नं । छेदोपस्थापना सम्पन्नं । परिहर विशुद्धि सम्पन्नं । सूक्ष्म सांपराय सम्पन्नं । यथाख्यात चरित्र सम्पन्नं । सर्वकर्मक्षयं । सर्वतापक्षयं । सर्वदुःखक्षयं । सर्वदोषक्षयं । सर्वजिनगुणसंपत्ति सम्पन्नं । सर्वजनानंदनं । सर्वभव्यानंदन्नं । सर्वगोकुलानंदनं । सर्वलोकानंदनं । सर्वग्रामानंदनं । सर्वनगरानंदनं । सर्वखेटानंदनं । सर्वकर्वटानंदनं । सर्वमटम्बानंदनं । पर्वपत्तना-नंदनं । सवद्रोणमुखानंदनं । सर्वयजमानानंदनं । सर्वराष्ट्रानंदनं । सर्वदेशानंदनं । सर्वविश्वानंदनं । सर्व दुःखं हन हन, दह दह, पच पच, कुट कुट, शीघ्रं शीघ्रं ।

यत्सुखं त्रिषु लोकेषु व्याधि व्यसन वर्जिव ।
अभयं क्षेयमारोग्यं स्वास्तिरस्तु विधीयते ॥

शांतिरस्तु । तुष्टिरस्तु । आरोग्यमस्तु । ऐश्वर्यमस्तु । समृद्धिरस्तु । कुशलमस्तु । क्षेयमस्तु । भद्रमस्तु । मङ्गलमस्तु । शुभमस्तु । शिवमस्तु । स्वस्तिरस्तु । कुलं गोत्रं धनं धान्यं सदाऽस्तु । पुष्पंवर्धतां । धर्मोवर्धतां । यशोवर्धतां । शांतिर्वर्धतां । कांतिर्वर्धतां । मतिर्वधता । बुद्धिर्वर्धतां । आरोग्यंवर्धतां । रत्नात्रयंवर्धतां । सम्यक्त्वंवर्धतां । सम्यग्ज्ञानंवर्धतां । सम्यक्चारित्रंवर्धतां । श्रेयावर्धतां । मंगलंवर्धतां ।

"श्री वृषभादिवीरान्त—चतुर्विशति तीर्थंकर-परमादेवेभ्यो नमोनमः । इत्यनेन मन्त्रेना शांतिपुष्टयर्थं गन्धोदक धारावर्षणम् ॥